उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

बी.ए. ज्योतिष (पंचम सेमेस्टर)

<u>BAJY(N)-330</u>

भारतीय वास्तुशास्त्राधारित गृह निर्माण विवेचन

मानविकी विद्याशाखा

वैदिक ज्योतिष विभाग

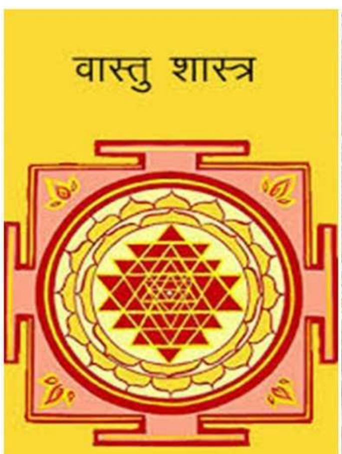

तीनपानी बाईपास रोड, ट्रॉन्सपोर्ट नगर के पीछे
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139
फोन नं .05946- 261122 , 261123
टॉल फ्री न0 18001804025
Fax No.- 05946-264232, E-mail- info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति एवं अध्ययन बोर्ड (मार्च-2023)

अध्यक्ष
कुलपति, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

प्रोफेसर रेनू प्रकाश - (संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।

डॉ. प्रमोद जोशी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी) ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0,
हल्द्वानी

प्रोफेसर विनय कुमार पाण्डेय
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, काशी हिन्दू
विश्वविद्यालय, वाराणसी।

प्रोफेसर श्याम देव मिश्र
ज्योतिष विभाग, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
लखनऊ परिसर, लखनऊ।

प्रोफेसर प्रेम कुमार शर्मा
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, LBS, नई दिल्ली

डॉ. रत्न लाल
एसोसिएट प्रोफेसर, ज्योतिष विभाग, LBS, नई
दिल्ली

डॉ. प्रभाकर पूरोहित
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी) ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0,
हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन, संयोजन एवं समन्वयक

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड	इकाई संख्या
प्रोफेसर विनय कुमार पाण्डेय अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग सं0वि0ध0वि0संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी।	**1**	**1,2,3**
डॉ. नन्दन कुमार तिवारी असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**2**	**1,2,3,4**
डॉ. गणेश त्रिपाठी सहायक प्राध्यापक, ज्योतिष शासकीय रामानन्द संस्कृत महाविद्यालय लालघाटी- भोपाल	**3**	**1,2,3,4**

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष- 2025
प्रकाशक - उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी।
मुद्रक: -
ISBN NO. -

नोट : - (इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।)

भारतीय वास्तुशास्त्राधारित गृह निर्माण विवेचन BAJY(N)-330

बी.ए. ज्योतिष (पंचम सेमेस्टर)

अनुक्रम

प्रथम खण्ड – वास्तुशास्त्र में गृहनिर्माण	**पृष्ठ-2**
इकाई 1: राहु मुख पुच्छ विचार एवं खात प्रविधि	3-19
इकाई 2: शिलान्यास विधि	20-38
इकाई 3: गृहकक्ष विन्यास	39-58
द्वितीय खण्ड - गृहनिर्माण विधि एवं मुहूर्त्त विचार	**पृष्ठ- 59**
इकाई 1: गृहनिर्माण में मासादि विचार	60-74
इकाई 2: गृहद्वार विचार	75-93
इकाई 3: गृहारम्भ विधि	94-111
इकाई 4: गृहारम्भ मुहूर्त्त	112-126
तृतीय खण्ड - अन्य विचार	**पृष्ठ- 127**
इकाई 1: कुम्भ चक्र विचार	128-139
इकाई 2: गृहप्रवेश मुहूर्त्त	140-158
इकाई 3: वृषभवास्तु चक्र	159-170
इकाई 4 : वास्तुपूजन विधि	171-187

बी.ए. ज्योतिष - पंचम सेमेस्टर

BAJY(N)-330

भारतीय वास्तुशास्त्राधारित गृह निर्माण विवेचन

खण्ड -1

वास्तुशास्त्र में गृहनिर्माण

इकाई -1 राहुमुख पुच्छ विचार एवं खात प्रविधि

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 राहु एवं राहुमुखपुच्छ का सामान्यपरिचय

1.3.1 दिशा के अनुसार राहुमुखपुच्छ की स्थिति

1.3.2 गृह निर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार

1.3.3 देवालय निर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार

1.3.4 जलाशय निर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार

1.3.5 यज्ञवेदी निर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार

अभ्यास प्रश्न

1.4 खात प्रविधि

1.4.1 खात परीक्षण

1.4.2 खातारम्भ मुहूर्त्त

1.4.3 खात खनन में राहुमुखपुच्छ का फल

अभ्यास प्रश्न

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भग्रन्थ सूची

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रस्तावना

जिस शास्त्र के अन्तर्गत आकाश में विद्यमान ग्रह-नक्षत्रादि पिण्डों की गति-स्थिति एवं उनके द्वारा इस भूपृष्ठ पर पड़ने वाले प्रभावादि का ज्ञान किया जाता है उसे ज्योतिषशास्त्र कहते हैं। यह ज्योतिष शास्त्र सिद्धान्त, संहिता, होरा रूपी तीन स्कन्धों में विभक्त होकर सृष्ट्युत्पत्ति काल से ही ग्रह नक्षत्र राशियों के परस्पर सम्बन्धों द्वारा इस भूपृष्ठ पर पड़ने वाले सामूहिक/सार्वभौमिक एवं व्यक्तिनिष्ठ फलों का विस्तृत विवेचन करते हुए प्राणीमात्र के कल्याणार्थ समुचित व्यवस्था देता है। जिनके अन्तर्गत शुभाशुभ फलों के निर्धारण की अनेक विधियाँ वर्णित हैं जिनमें शकुन, अङ्गविद्या, अंकविद्या, प्रश्नविद्या, गोचर, जन्मकुण्डली एवं वास्तुविद्याओं का महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें भी जन्मकुण्डली के अतिरिक्त वास्तु विद्या का विशेष प्रभाव एवं प्रयोग सम्प्रति दिखाई देता है। विषय विभाजन के क्रम में ज्योतिष शास्त्र में संहिता स्कन्ध के अन्तर्गत ही वास्तुशास्त्र की चर्चा प्राप्त होती है इसलिए परम्परा में इसे भी हम ज्योतिष के अंग के रूप में स्वीकार करते हैं। यद्यपि कुछ आधुनिक आचार्यों ने इसे स्वतन्त्र विषय के रूप में भी स्थापित करने का प्रयास किया है परन्तु यह युक्ति संगत प्रतीत नहीं होता है।

वास्तु का शाब्दिक अर्थ निवास करने या बसने/रहने से है अर्थात मानव के निवास योग्य भूमि एवं भवन को वास्तु शब्द से जानते हैं। प्रकारान्तर से जिस शास्त्र में भूमि एवं भवन के नियमों, सिध्दान्तों तथा प्रविधियों का प्रतिपादन किया जाता है उसे वास्तु शास्त्र कहते हैं। पूर्व की इकाई में आप लोगों ने वास्तु शास्त्र के अनेक विषयों का अध्ययन किया है तथा अब प्रस्तुत प्रथम खण्ड की इस प्रथम इकाई में राहु मुखपुच्छ एवं खातविधि से सम्बन्धित विषयों का आप लोग विस्तृत अध्ययन करेंगें। जिससे इसके पहले किए गए अध्ययन की परिपूर्णता होगी तथा आगे के अध्ययन का मार्ग भी प्रशस्त होगा।

1.2 उद्देश्य

यह इकाई आप के वास्तु ज्ञान की महत्वपूर्ण इकाई है। अतः प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

- राहु मुखपुच्छ की उपयोगिता को समझ सकेगें।
- दिशा के अनुसार राहुमुखपुच्छ स्थिति का ज्ञान कर सकेगें।
- गृहनिर्माण में राहुमुखपुच्छ का विचार कर सकेगें।
- देवालय निर्माणार्थ खातारम्भ स्थान का ज्ञान कर सकेंगें।

- जलाशय निर्माण हेतु राहु मुख का ज्ञान कर सकेंगें।
- खातविचार किसे कहते हैं आप यह सरलता से बता सकेगें।
- खात आरम्भ में दिशा निर्णय कहाँ से होता है इसका ज्ञान कर सकेगें।
- खात हेतु मुहूर्त का विचार कर सकेगें।
- खात खनन में राहुमुखपुच्छ के शुभाशुभ फल का विचार कर सकेगें।

1.3 राहु एवं राहुमुखपुच्छ का सामान्य परिचय-

भारतीय ज्योतिषशास्त्र की ज्ञान परम्परा में सूर्यादिग्रहों के अन्तर्गत राहु एवं केतु को सर्वत्र स्वीकार नहीं किया गया है। क्योंकि सैद्धान्तिक नियमानुसार राहु एवं केतु कोई ग्रह पिण्ड नहीं अपितु सूर्य एवं चन्द्रमा के भ्रमण वृत्तों के सम्पात हैं जिनका प्रयोग केवल सूर्य एवं चन्द्रमा के ग्रहण सम्बन्ध में किया जाता है। यद्यपि क्रान्ति वृत्त के साथ सभी ग्रहों के भ्रमण वृत्तों का सम्पात उस ग्रह का राहु एवं केतु सिद्ध होता है परन्तु आवश्यकता की दृष्टि से केवल चन्द्रभ्रमणवृत्त के क्रान्ति वृत्त के साथ होने वाले सम्पात को राहु एवं केतु के रूप में मानते हैं जो कि सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण में प्रमुख घटक होते हैं।

एवं चन्द्रस्य यौ पातौ तत्राद्यो राहुसंज्ञकः।
द्वितीयः केतुसंज्ञस्तौ ग्राहकौ चन्द्र-सूर्ययोः।।

इसके अतिरिक्त सिद्धान्त ज्योतिष में राहु एवं केतु का उपयोग कहीं भी स्पष्टतया दिखाई नहीं देता परन्तु फलादेश परम्परा के अन्तर्गत संहिता एवं होरा स्कन्ध में राहु-केतु का प्रर्याप्त वर्णन दृष्टिगत होता है। संहिता स्कन्ध के प्रमुख ग्रन्थ बृहत्संहिता में स्वतन्त्र रूप में राहुचाराध्याय एवं केतुचाराध्याय इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इसी क्रम में वास्तुविद्या के अन्तर्गत भी इससे सम्बन्धित शुभाशुभ फलों का आकलन कर हमारे पुर्वज महर्षियों नें गृहनिर्माणार्थ अभीष्ट भुखण्ड पर खातारम्भ करने के समय राहु के मुखपुच्छ का विस्तृत विचार किया है क्यों कि प्रमाणानुसार राहु के सर्पाकार शरीर भाग पर खातारम्भ से निर्माण होने वाले गृह एवं गृहपति की शुभता नहीं होती है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार समुद्र मन्थन से प्राप्त अमृत का वेश बदलकर पान कर लेने के कारण राहु नामक दैत्य भगवान विष्णु के चक्र से शिर एवं धड़ रूपी दो भागों में विभक्त होकर भी मृत नहीं हुआ तथा दो रूपों में अमर होकर शिर भाग केतु एवं धड़ भाग राहु के रूप में विख्यात होकर ब्रम्हा जी के वरदान से ग्रहों कि गणना में सम्मिलित हुआ –

सिंहिकातनयो राहुरपितच्चामृतं पुरा।
शिरच्छिन्नोपि न प्राणैस्त्यक्तोसौ ग्रहतां गतः।।

परन्तु इन्हें सिद्धान्त ग्रन्थों में सूर्य तथा चन्द्रमा के सम्पात बिन्दु के रूप में प्रदर्शित किया गया है परन्तु मतान्तर से एक कथानक में धड़ रूप राहु को ब्रम्हा के वरदान/श्राप से सर्पाकार होने का भी वर्णन प्राप्त होता है जैसा कि बृहत्संहिंता की टीका में भट्टोत्पल नें वशिष्ट का वचन उद्धृत करते हुए लिखा है -

भषट्कान्तरितो राहुः सुर्याचन्द्रसावुभौ।
छादयत्युरगाकारो वरदानात् स्वयम्भुवः।।

यद्यपि सनातन वैदिक कर्मकाण्ड परम्परा में नवग्रहों के अन्तर्गत अपने अधिदेवता काल तथा प्रत्यधिदेवता सर्प के साथ राहु सर्वत्र शुभकर्मों में पूजित होता है परन्तु वराहमिहिर नें राहुचाराध्याय के ग्रहण सम्बन्धित शाश्वत वर्णन के क्रम में इस सर्पाकार राहु का खण्डन किया है तथापि वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत सर्पाकार राहु का वर्णन एवं उपयोग सभी वास्तु ग्रन्थों में प्राप्त होता है तथा इसके मुख पुच्छ एवं पृष्ठ के आधार पर वास्तु प्रयोग तथा शुभाशुभ फलों का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत प्रसङ्ग में वास्तुशास्त्र के प्रायः सभी आचार्यों एवं वास्तु सम्बन्धित मुहूर्तादि की विवेचना करने वाले मुहूर्त शास्त्र के ग्रन्थकारों नें अपने-अपने कृतियों में इसकी विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की है तथा वास्तु के प्रारम्भिक विषय भूचयनान्तर गृहनिर्माणार्थ प्रस्तावित खातखनन में इसके द्वारा गृह एवं गृह स्वामी के शुभाशुभत्व का विचार करते हुए खात खनन आरम्भ करने हेतु शुभ स्थानों का विभिन्न निर्माण भेदों के आधार पर वर्णन किया है, अर्थात् निवासार्थ गृहनिर्माण, देवप्रतिष्ठा हेतु देवालय निर्माण में एवं जलाशय प्रतिष्ठा हेतु जलाशय निर्माण में एक ही काल एवं स्थान में भी पृथक-पृथक राहु के मुख, पुच्छ एवं पृष्ठ की स्थिति का प्रतिपादन शास्त्रों में प्राप्त होता है।

1.3.1 दिशा के अनुसार राहु के मुख, पुच्छ एवं पृष्ठ की स्थिति-

जैसा हम जानते है कि वैदिक परम्परा में पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण इन चार दिशाओं, आग्नेयकोण, नैऋत्यकोण, वायव्यकोण, और ईशानकोण की चार विदिशाओं तथा उर्ध्व (उपर), अधः (नीचे) के साथ दिशाओं की संख्या दश होती है परन्तु प्रस्तुत् प्रसङ्ग में चार विदिशाओं (कोणो) का ही विचार राहु के मुख, पुच्छ एवं पृष्ठ ज्ञानार्थ वास्तुशास्त्र में किया गया है। यह स्थिति सूर्य के राशि भ्रमण को आधारित कर विचारित होती है। अतः हम पहले सूर्य के राशि भ्रमण स्थिति को समझेगें। सूर्य के एक अंश भोग काल को सौर दिन तथा तीस अंश भोग काल को सौर मास कहते हैं अर्थात् सूर्य जब एक राशि से दूसरे राशि पर जाता है तो वह सौर संक्रान्ति होती है और सूर्य का

एक राशि पर भ्रमण काल ही सौरमास होता है "**संक्रान्त्याः सौरमुच्यते**"। वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत राहुमुखपुच्छ की स्थिति के विचार में सूर्य के द्वादश राशियों के भोग काल अर्थात् द्वादश संक्रान्तियों का उपयोग किया जाता है । वस्तुतः भारतीय वास्तुशास्त्र में देवालय, जलाशय, तथा गृहवास्तु में राहुमुखपुच्छ की स्थिति पृथक-पृथक राशि क्रम से विचारित होती है अतः राहु के मुख, पुच्छ एवं पृष्ठ विचार के पूर्व हमारे लिए यह निर्धारित करना परमावश्यक होता है कि देवालय निर्माण या गृह निर्माण अथवा जलाशय निर्माण में किसके निर्माण हेतु हम राहुमुखपुच्छ की स्थिति का विचार कर रहे हैं और उसके बाद उपर्युक्त सूर्यसंक्रान्ति के द्वारा राहुमुखपुच्छ के स्थिति का ज्ञान करते हैं। राहु की गति विपरीत होने से इसकी मुख पुच्छादि की गणना भी विपरीत क्रम (वामक्रम) से ही होती है तथा जिस दिशा में राहु का मुख होता है उससे विपरीत गणना में प्राप्त विदिशाओं में मध्य एवं पुच्छ तथा इन तीनों को छोड़कर अवशिष्ट चौथी विदिशा में पृष्ठ सिद्ध होता है। जैसे यदि ईशान कोण में राहु का मुख सिद्ध हुआ तो वायव्य कोण में उसका मध्य तथा नैऋत्य में पुच्छ होगा। अतः मुख, मध्य एवं पुच्छ की क्रमशः ईशान, वायव्य एवं नैऋत्य विदिशाएं छोडकर आग्नेय विदिशा में राहु का पृष्ठ भाग होगा तथा उसके पृष्ठ भाग अर्थात् आग्नेय कोंण में ही खात खनन शुभ होगा। इसी प्रकार सभी विदिशाओं में राहु के मुख, पुच्छ एवं पृष्ठादि का विचार किया जाता है। प्रस्तुत सन्दर्भ में वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य विश्वकर्मा ने स्पष्ट रूप में लिखा है कि-

ईशानतः सर्पति कालसर्पः विहाय सृष्टिं गणयेद् विदिक्षु।
शेषस्य वास्तोर्मुखमध्यपुच्छं त्रयं परित्यज्यखनेच्चतुर्थम्।।

(विश्वकर्माप्रकाश)

अर्थात् क्रमशः ईशान, वायव्य, नैऋत्य एवं आग्नेय कोंण में विभिन्न राशियों में सूर्य की स्थिति होने पर राहु का मुख, मध्य एवं पुच्छ होता है। अतः इन तीनों को छोड़कर चतुर्थ कोंण की दिशा में खात शुभ होता है। इसी प्रकार आचार्य रामदैवज्ञ ने मुहूर्तचिन्तामणि ग्रन्थ में देवालय ,गृह एवं जलाशय इन तीनों के निर्माण में प्रयुक्त राहु मुखादि के विचार के नियमों को एक साथ सम्मलित करते हुए लिखा है कि -

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्टविदिक्छुभो भवेत्।।

(मुहूर्तचिन्तामणि वास्तुप्रकरण)

अर्थात् देवालय निर्माण में मीनादि राशियों में तीन-तीन राशियों के सूर्य होने पर ईशानदि कोणों में तीन-तीन राशियों के क्रम से, गृहनिर्माण में सिंहादि से गणना कर तीन-तीन राशियों के सूर्य

में तथा जलाशय निर्माणार्थ मकरादि राशि से आरम्भ कर तीन-तीन राशियों के क्रम से ईशानादि विपरीत गणना के विदिशाओं में राहु का मुख होता है। मुख्य स्थान से विपरीत गणना में प्राप्त कोण दिशा (पीछे की दिशा) में मध्य तथा उसके बाद की विदिशा में पुच्छ होता है। इसके अतिरिक्त जो चौथी दिशा होगी वहीं राहु का पृष्ठ भाग होगा। जैसे यदि ईशान कोंण में राहु का मुख हुआ तो वायव्य कोंण में मध्य तथा नैऋत्य कोंण में राहु का पृष्ठ होगा। अतः इस नियमानुसार पृष्ठ भाग का विचार कर खातारम्भ शुभ होता है।

1.3.2 गृहनिर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार-

भवननिर्माण में खातारम्भ हेतु राहुमुखपुच्छ की स्थिति का विचार परमावश्यक होता है क्यों कि यदि राहुमुखपुच्छ का विचार किये बिना ही भवन निर्माण कि प्रक्रिया आरम्भ की जाती है तो गृहस्वामी को विविध अशुभ फलों की प्राप्ति होती है तथा उस गृह के निर्माण प्रक्रिया में भी अनेक प्रकार के व्यवधान उपस्थित होते हैं। जैसे तैसे भवन निर्माण हो जाने के बाद भी उस गृह में सुख, शान्ति, समृध्दि नहीं रहती एवं उस गृह में निवास करने वालों को अनेक प्रकार की विषम परीस्थितियों का सामना करना पड़ता है। जैसा कि हम लोगों नें पहले पढ़ा है कि सूर्य की संक्रान्ति वशाद् ही सर्पाकार राहु के मुखपुच्छ का विचार होता है, क्यों कि शास्त्रों के वचनानुसार सूर्य के राशिचार के अनुसार ही सर्पाकार राहु की स्थिति में परिवर्तन होता है तथा ज्योतिषशास्त्र में वर्णित उपर्युक्त नियमानुसार सूर्य की स्थिति एवं दिशा के आधार पर उसका विचार करते हैं। राहुमुख या पुच्छ दिशा में गृहनिर्माणार्थ खात खनन शुभ नहीं होता है। अतः इसके अतिरिक्त पृष्ठ दिशा में खातारम्भ करते हैं। जैसा कि हमनें पूर्व में पढ़ा है कि दिशाएं दश होती है परन्तु राहुमुख के क्रम में ईशान, वायव्य, नैऋत्य, आग्नेय के भेद से प्रतिष्ठित चार विदिशाओं में ही सूर्य की द्वादश संक्रान्तियों को विभक्त कर स्थापित किया है अर्थात् एक विदिशा में तीन संक्रान्तियाँ स्थापित होती हैं। गृहनिर्माणार्थ खात खनन में सिंहराशि से गणना द्वारा चारों विदिशाओं में क्रमशः तीन-तीन राशियों में सूर्य रहने पर ईशान कोंण से आरम्भ कर विपरीत गणना से ईशान, वायव्य, नैऋत्य और आग्नेय कोंण में राहुमुख होता है अर्थात् गृहनिर्माण के सम्बन्ध में सिंह, कन्या, तुला राशियों का सूर्य होने पर ईशान कोण में, वृश्चिक, धनु, मकर राशियों का सूर्य होने पर वायव्य कोण में, कुम्भ, मीन, मेष राशियों का सूर्य होने पर नैऋत्य कोण में तथा वृष, मिथुन, कर्क राशियों का सूर्य होने पर आग्नेय कोण राहु का मुख होता है। मुहूर्तचिन्तामणि ग्रन्थ में वर्णित **"मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे"** वचनानुसार गृहनिर्माण में राहुमुख सिंहादि राशियों के सूर्य में ईशानादि कोणों में होता है। इस मत को और भी स्पष्ट करते हुए अन्य आचार्यों नें कहा है कि-

सिंहे कन्यातुलायां भुजगपतिमुखं शम्भुकोणेऽस्यखातं
वायव्यं स्यात्तदास्य अलिधनुमकरे ईशखातं वदन्ति।
कुम्भे मीने च मेषे निऋति दिशिमुखं खातवायव्यकोणे
चाग्नेः कोणे मुखं वै वृषमिथुनगते कर्कटे रक्षखातम्।।

गृहनिर्माणार्थ राहुमुखपुच्छ विचार प्रसङ्ग में ईशानादि विपरीत क्रम से विदिशाओं कि गणना कर सिंहादि तीन-तीन राशियाँ मुख में स्थापित होती है, अर्थात् सिंह, कन्या, तुला राशि का सूर्य हो तो राहु का मुख ईशान कोण में, उदर वायव्य कोण में एवं पुच्छ नैऋत्य कोण में होगा अतः इन तीन विदिशाओं के अतिरिक्त चौथी आग्नेय विदिशा में राहु का पृष्ठ भाग होगा। वृश्चिक, धनु, मकर राशि का सूर्य होने पर वायव्य कोण में राहु का मुख, नैऋत्य कोण में उदर तथा अग्नि कोण में पुच्छ तथा ईशान कोण में राहु का पृष्ठ भाग होगा। कुम्भ, मीन तथा मेष राशि का सूर्य होने पर नैऋत्य कोण में राहु का मुख, अग्नि कोण में राहु का उदर, ईशान कोण में राहु का पुच्छ तथा वायव्य कोण में राहु का पृष्ठ भाग होगा। वृष, मिथुन, कर्क राशि का सूर्य होने पर राहु का मुख अग्नि कोण में, ईशान कोण में राहु का उदर, वायव्य कोण में राहु का पुच्छ तथा नैऋत्य कोण में राहु का पृष्ठ होगा। इनमें मुख, मध्य एवं पुच्छ को छोड़कर राहु के पृष्ठ भाग में खातारम्भ शुभ होता है।

गृह निर्माणार्थ खातखनन में राहुमुख ज्ञानार्थ चक्रम्-

सूर्य की राशि	राहुमुख	राहुउदर	राहुपुच्छ	राहुपृष्ठ (खातखनन हेतु शुभ स्थान)
सिंह,कन्या, तुला	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण
वृश्चिक,धनु,मकर	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण
कुम्भ, मीन, मेष	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण
वृष, मिथुन, कर्क	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण

1.3.3 देवालय निर्माण में राहुमुखपुच्छ विचार-

देवालय अर्थात् देवता का निवास स्थान, इस भूलोक में देवता जिस भवन में निवास करते हैं उस भवन को देवालय कहा जाता है। वस्तुतः देवता साक्षात किसी घर में पृथिवी लोक पर निवास नहीं करते अपितु यथा विधि शास्त्रोक्त नियमानुसार उनकी प्रतिमाएं बनाकर मन्त्र शक्ति द्वारा उन प्रतिमाओं में प्राण का आधान करते हुए प्राणप्रतिष्ठा पूर्वक उन्हें जहाँ स्थापित किया जाता है उसे

देवालय कहते हैं। देवालय निर्माण के लिए भी गृहनिर्माण की तरह राहुमुखपुच्छ का विचार करना आवश्यक होता है क्यों कि बिना राहुमुखपुच्छ का विचार किये देवालय निर्माण भी शुभ नहीं होता है तथा वहाँ देवतत्व की भी पूर्ण प्रतिष्ठा नहीं होती है इसलिए यहां भी राहुमुखपुच्छ विचार आवश्यक हो जाता है। देवालय निर्माण के लिए अभीष्ट राहुमुखपुच्छ विचारार्थ आचार्यों नें कहा है कि मीनादि तीन–तीन राशियों का सूर्य होने पर ही क्रमशः ईशानादि कोणों में राहु का मुख होता है यदि सूर्य मीनादि तीन राशियों में अर्थात् मीन, मेष तथा वृष राशि में हो तो राहु का मुख ईशान कोण में, वायव्य कोण में राहु का उदर, नैऋत्य कोण में राहु का पुच्छ तथा अग्नि कोण में राहु का पृष्ठ होता है अतः मुख, उदर, पुच्छ के अतिरिक्त पृष्ठ भाग में खात खनन होगा। मिथुन, कर्क एवं सिंह का सूर्य होने पर वायव्य कोण में राहु का मुख, नैऋत्य कोण में राहु का उदर, अग्निकोण में राहु का पुच्छ तथा ईशान कोण में राहु का पृष्ठ होगा। कन्या, तुला तथा वृश्चिक का सूर्य होने पर राहु का मुख नैऋत्य कोण में, उदर अग्निकोण में, पुच्छ ईशानकोण में तथा पृष्ठ भाग वायव्य कोण में होगा। धनु, मकर एवं कुम्भ राशि का सूर्य होने पर अग्निकोण में राहु का मुख, ईशान कोण में राहु का उदर, वायव्य कोण में राहु का पुच्छ तथा नैऋत्यकोण में राहु का पृष्ठ होगा। अन्य की तरह यहाँ भी पृष्ठ विदिशा में ही खातारम्भ करना लाभप्रद होता है।

देवालयनिर्माण में राहु के मुख की स्पष्ट स्थिति ज्ञानार्थ चक्र-

सूर्यस्थिति	राहुमुख	राहुउदर	राहुपुच्छ	राहुपृष्ठ
मीन,मेष,वृष	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण
मिथुन,कर्क,सिंह	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण
कन्या,तुला,वृश्चिक	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण
धनु,मकर,कुम्भ	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नै़ऋत्यकोंण

1.3.4 जलाशयनिर्माण में राहुमुखपुच्छ का विचार-

गृह निर्माण एवं देवालय निर्माण की तरह ही जलाशय निर्माण में भी राहुमुखपुच्छ का विचार आवश्यक होता है। क्यों कि राहु-मुख-पुच्छ का विचार किए बिना ही यदि जलाशय खनन की प्रक्रिया आरम्भ होती है तो उस खनन में अनेक तरह के अनावश्यक व्यवधान उपस्थित होते हैं तथा यथेच्छ जल की प्राप्ति भी नहीं होती यदि इसका निर्माण किसी प्रकार से कर लिया जाय तथा उसमें यथेच्छ जल भी आ जाय तो भी अधिक समय तक जलाशय की उपयोगिता नहीं रह पाती है। इसीलिए मनुष्य को चाहिए कि जलाशयारम्भ हेतु राहुमुख का विचार करने के बाद ही खनन आरम्भ

करें। जलाशय निर्माण में भी मनुष्यालय और देवालय निर्माण की भांति सौरमास का ही ग्रहण किया जाता है जैसा कि आप लोगों को पहले ही बताया गया कि सूर्य की एक संक्रान्ति से दुसरे संक्रान्ति तक के गमन काल को सौरमास कहते हैं तथा जलाशय निर्माण में भी राहु मुखपुच्छ का ज्ञान इन सूर्य संक्रान्तियों द्वारा ही किया जाता है। जलाशय निर्माण में राहुमुखपुच्छ के सम्बन्ध में आचार्य कहते हैं कि मकरादि तीन–तीन राशियों में सूर्य के होने पर राहु का मुख क्रमशः ईशानादि विपरीत कोंणो में होता है। अतः यदि सूर्य मकरादि तीन राशियों में हो अर्थात् मकर, कुम्भ एवं मीन, राशि का सूर्य हो तो राहु का मुख ईशानकोंण में, उदर वायव्य कोंण में, पुच्छ नैऋत्य कोंण तथा अग्नि कोंण में राहु का पृष्ठ होता है अतः मुख, उदर, पुच्छ इनके अतिरिक्त अग्नि कोंण में खात का खनन करना शुभ होता है। मेष,वृष,मिथुन,राशि का सूर्य हो तो राहु का मुख वायव्य कोंण, नैऋत्य कोंण में राहु का उदर, अग्नि कोंण में राहु का पुच्छ तथा ईशान कोण में राहु का पृष्ठ होता है अतः खात का आरम्भ ईशानकोंण में करते हैं। कर्क, सिंह, कन्या राशि का सूर्य हो तो राहु का मुख नैऋत्य कोंण, उदर अग्नि कोंण में, ईशान कोंण में राहु का पुच्छ तथा पृष्ठ वायव्य कोंण में होता है। अतः खात का खनन वायव्य कोंण में करने से शुभ होता है। इसी प्रकार यदि सूर्य तुला, वृश्चिक, धनु राशि का हो तो ग़ाहु का मुख अग्नि कोंण में, राहु का उदर ईशान कोंण में, राहु का पुच्छ वायव्य कोंण में तथा राहु का पृष्ठ नैऋत्य कोंण में होने से खात को नैऋत्य कोंण से आरम्भ करते हैं।

जलाशयनिर्माण में राहु मुखादि स्पष्ट स्थिति ज्ञानार्थ चक्र-

सूर्यस्थिति	राहुमुख	राहुउदर	राहुपुच्छ	राहुपृष्ठ
मकर,कुम्भ,मीन	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण
मेष,वृष,मिथुन	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण
कर्क,सिंह,कन्या	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण
तुला,वृश्चिक,धनु	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	ऩैऋत्यकोंण

1.3.5 यज्ञवेदी निर्माण के लिए राहु का मुख पुच्छ विचार -

मुहूर्त चिन्तामणि ग्रन्थ में आचार्य रामदैवज्ञ नें तो केवल गृह, देवालय एवं जलाशय के निर्माण हेतु ही राहु के मुख, पुच्छादि का वर्णन किया है परन्तु अन्य आचार्यों के अनुसार वैदिक प्रक्रिया के अन्तर्गत यज्ञादि अनुष्ठान में भी जिस वेदी का निर्माण का किया जाता है उस वेदी के निर्माण में भी राहु के मुखादि का विचार किया जाता है। क्यों कि यज्ञादि में वेदी निर्माण से पूर्व यदि

राहु के मुखादि का विचार नहीं करते है तो यज्ञादि से प्राप्त होने वाले के शुभ फल या इष्ट कामना की पूर्ति नहीं होती है अतः वेदी निर्माण में भी राहु के मुख व पुच्छ का विचार कर लेना चाहिए। यज्ञादि के वेदी निर्माण में गर्गादि अन्य आचार्यों ने स्वरचित ग्रन्थों में कहा है कि –

वृषार्कादित्रिकं वेद्यां सिंहादि गणयेद् गृहे।
देवालये च मीनादि तडागे मकरादिकम्।।

अर्थात् जिस प्रकार देवालयादि में राहु के मुख पुच्छ का विचार करते हैं उसी प्रकार यज्ञादि वेदी निर्माण में वृषादि तीन-तीन राशियों में सूर्य के होने पर राहु का मुख ईशानादि विपरीत क्रम की विदिशाओं में होता है यहां भी राहु के पृष्ठ विदिशा में वेदी के खात का खनन आरम्भ करना चाहिए। अर्थात् वेदीं निर्माणार्थ खात खनन में वृष, मिथुन एवं कर्क राशि का सूर्य होने पर राहु का मुख ईशान कोंण में, वायव्य में मध्य, नैऋत्य में पुच्छ तथा आग्नेय में पृष्ठ होगा। सिंह, कन्या एवं तुला राशिगत सूर्य होने पर वायव्य में मुख, नैऋत्य में मध्य, आग्नेय में पुच्छ तथा ईशान में पृष्ठ होता है। वृश्चिक, धनु तथा मकरस्थ सूर्य होने पर नैऋत्य में मुख, आग्नेय में मध्य, ईशान में पुच्छ तथा वायव्य में पृष्ठ होगा इसी तरह कुम्भ, मीन तथा मेष का सूर्य हो तो अग्निकोंण में मुख, ईशान में मध्य, वायव्य में पुच्छ तथा नैऋत्य में पृष्ठ होगा। यहां भी अन्य की तरह खातारम्भ में पृष्ठ भाग में ही शुभ होता है।

वेदीनिर्माण में राहु मुखादि स्पष्ट स्थिति ज्ञानार्थ चक्र-

सूर्यस्थिति	राहुमुख	राहुउदर	राहुपुच्छ	राहुपृष्ठ
वृष,मिथुन,कर्क	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण
सिंह,कन्या,तुला	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण
वृश्चिक,धनु,मकर	नैऋत्यकोंण	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण
कुम्भ,मीन,मेष	अग्निकोंण	ईशानकोंण	वायव्यकोंण	नैऋत्यकोंण

अभ्यास प्रश्न 1 -

1. मीनादि तीन राशियों में सूर्य होने पर देवालय निर्माण में खात का आरम्भ किस दिशा में करना चाहिए
2. वृश्चिकादि तीन राशियों में सूर्य के होने पर गृहारम्भ में खात का खनन किस दिशा में होता है।
3. राहु का मुख आग्नेय में हो तो पृष्ठ कहां होगा ?
4. खातारम्भ राहु के पुच्छ भाग में करना चाहिए।

5.वृषादि तीन राशियों के सूर्य में राहु मुख ईशान में किसके आरम्भ हेतु होगा।

6.जलाशय में राहु के मुख भाग से खातारम्भ होता है।

1.4 खात प्रविधि -

"खाते भूमिशोधने" देवालय निर्माण के लिए, गृह निर्माण के लिए एवं जलाशय निर्माण के लिए चयनित किए गए भूखंड पर शिला अर्थात् नींव स्थापन के लिए भू खनन की आवश्यकता पड़ती है परंतु शास्त्रोक्त निश्चित स्थानों से खनन आरंभ करने से ही निर्माण में शुभता रहती है तथा कोई अनावश्यक व्यवधान उपस्थित नहीं होता इसलिए प्रस्तावित भूखंड पर गृह निर्माण में, देवालय निर्माण में तथा जलाशय निर्माण में खात की दिशा का निर्धारण करने के लिए आचार्य नें राहुमुखपुच्छ का विचार किया है। सर्पाकार राहु भूखंड पर शरीर विस्तार किए हुए स्थित होता है तथा सूर्य की राशि संचरण के अनुसार उसका मुखपुच्छ देवालय आदि निर्माण हेतु परिवर्तित होता रहता है क्योंकि देवालय निर्माण में, गृह निर्माण में तथा जलाशय निर्माण में सर्पाकार राहु के मुख में भिन्नता होती है। सर्पाकार राहु के मुख की दिशा का आरंभ सूर्य संक्रांति वशात् ईशान कोण से होता है, अतः यहां आचार्यों नें विदिशाओं का ही ग्रहण कर मुख पुच्छ एवं पृष्ठज्ञान की व्यवस्था दी है। जिसमें सर्पाकार राहु ईशान कोण से वामावर्त कोणों में परिभ्रमण करता है। अतः देवालय आदि के खात विन्यास में राहु का मुख जिस कोण में होता है उससे पृष्ठ भागों में खात (भूमि शोधन के लिए गड्ढा) शुभ होता है जैसे राहु का मुख ईशान कोण में हो तो उसका पृष्ठ अग्नि कोण में होगा और उस कोण में खात करना शुभ माना जाता है उसका विस्तृत अध्ययन आपने पहले कर लिया है।

1.4.1 खात परीक्षण –

खात का परीक्षण भूमि शोधन के लिए किया जाता है। जिससे कि भूमि की अनुकूलता और प्रतिकूलता का ज्ञान हो सके अर्थात् कौन सी भूमि निवास योग्य एवं कौन सी भूमि त्याग योग्य है इसके लिए भूमि का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। वास्तु के ग्रंथों में भूमि परीक्षण की अनेक विधियां दी गई हैं। जिसमें से कुछ प्रचलित विधियों का वर्णन आपके अध्ययन के लिए किया जा रहा है। विश्वकर्म प्रकाश में आचार्य कहते हैं कि -

खातं भूमिपरीक्षणे करमितं तत्पुरयेत् तन्मृदा।
हीने हीनफलं समे समफलं लाभो रजो वर्धने।।

अर्थात् भूमि परीक्षण के समय भूस्वामी अथवा भू स्वामिनी (यदि भूस्वामी की एक से अधिक पत्नियां हो तो ज्येष्ठ पत्नी) के हाथ से एक हाथ लंबा एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा खात करें। पुनः उस खात से निकाली हुई मिट्टी को उसी खात में डालें मिट्टी यदि अल्प हो जाए अर्थात् निकाली हुई मिट्टी से पुनः वह खात पूरा न भरे तो उस भूमि में निवास का फल अशुभ तथा मिट्टी

पुर्णतः समान हो जाती है अर्थात् न कम हो और न ही अधिक मिट्टी हो तो मध्यम फल दायक होता है परन्तु यदि मिट्टी खात पूर्ण करने के बाद भी अवशिष्ट रह जाए अर्थात् मिट्टी अधिक हो जाए तो उस भूमि में निवास करना अत्यन्त शुभप्रद होता है। प्रकारान्तर से भूमी स्वामि के हस्त के तुल्य लम्बा चौड़ा और गहरा खात करके उस खात को जल से पूर्ण भर दें और 100 कदम दूर जाकर पुनः वापस आए और उस जल पूर्ण खात का परीक्षण करें अब यदि खात पहले जैसा ही जल से भरा प्राप्त हो तो उस भूमि का उत्तम फल, चौथाई जल बच जाए तो मध्यम फल तथा खात जल विहीन हो जाए तो अधम फल होता है। यथा-

तत्कृत्वा जलपूर्णमाऽऽशतपदं गत्वपरीक्ष्यं पुनः।
पादोनाऽर्द्धविहीनकेऽथनिभृते मध्याधमेष्टाम्बुभिः।।

वास्तु रत्न नामक ग्रन्थ में भी भूमिशोधन के लिए खात परीक्षण की जो विधि कही गई है उसके अनुसार गृहपति के हस्तप्रमाण के तुल्य गहरा खात करके खात को जल से पूर्ण कर दें, कुछ समय बाद जाकर परीक्षण करें यदि खात जल से पूर्ण हो तो शुभ, जल पूर्ण करते ही खात सूख जाए तो अशुभ एवं जल भरते समय यदि जल स्थिर रहे तो उस स्थान पर गृह की स्थिरता जाननी चाहिए। आचार्य नारायण भट्ट ने कुछ प्रकारांतर से खात परीक्षण का उल्लेख करते हुए कहा है कि सूर्यास्त काल में एक हाथ लंबा, चौड़ा, गहरा खात करके उसको पानी से भर दें तथा प्रातः काल आकर उस खात का परीक्षण करें यदि प्रातः काल तक उस खात में कुछ जल शेष रहे रह तो शुभ, कुछ भी जल उस खात में नहीं रहे तो मध्यम तथा उस खात मे दरारें पड़ी हों तो अशुभ होता है। यथा -

स्वभ्रं हस्तमितं खनेदिह जलं पूर्णं निशास्ये न्यसेत्।
प्रातर्दृष्टजलं स्थलं सदजलं मध्यं त्वसत्स्फाटितम्।।

भूमि शोधन के लिए खात परीक्षण करने के बाद वास्तुकारों ने खात खोदते समय उसकी मिट्टी में मिलने वाले पाषाण आदि पदार्थों (वस्तु) के द्वारा भी सभी शुभ अशुभ फलों का उल्लेख किया है। यथा -

खान्यमाने यदा भूमौ पाषाणं प्राप्यते तदा
धनायुश्चिरता वै स्यादिष्टकासु धनागमः।।
कपालाङ्गारकेशादौ व्याधिना पीडितो भवेत्।

अर्थात् खात खोदने पर यदि खात में से पत्थर निकले तो उस भूमि पर वासकर्ता के धन एवं आयु की वृद्धि होती है, यदि ईंटें मिले तो धनागम होता है परंतु यदि कपाल, हड्डी, कोयला, केश आदि मिले तो वास कर्ता को रोग और पीड़ा कहनी चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि खात में यदि पत्थर मिले तो स्वर्ण का लाभ, इष्टिका मिले तो समृद्धि, द्रव्य मिले तो सुख और ताम्र आदि

धातु मिले तो सभी प्रकार की वृद्धि होती है।यथा -

खाते यदाश्मा लभते हिरण्यं तथेष्टकायां च समृद्धिरत्र।

द्रव्यं च रम्याणि सुखानि धत्ते ताम्रादि धातुर्यदि तत्र वृद्धिः।।

अभ्यास प्रश्न 2 -

1-जलाशय निर्माण में मकर राशि का सूर्य हो तो राहु मुख किस दिशा में होगा?

2-देवालय निर्माण में मीनादि तीन राशियों में सूर्य होने पर राहु के पुच्छ की स्थिति किस कोण में होगी?

3-गृहारम्भ में कुंभादि तीन राशियों में सूर्य होने पर राहु मुख किस दिशा में होता है?

4-जलाशयारम्भ में राहु का मुख यदि वायव्य कोण में हो तो राहु के पुच्छ की स्थिति किस कोण होगी?

5-यज्ञ वेदी निर्माण में वृषादि तीन राशियों में सूर्य हो तो राहु के पुच्छ की स्थिति किस कोण में होगी?

6-देवालय निर्माण में कन्यादि तीन राशियों में सूर्य हो तो राहु के मुख की स्थिति कहां होगी?

7- गृहारम्भ में वृश्चिकादि तीन राशियों में सूर्य हो तो राहु के पुच्छ की स्थिति किस कोण में होगी?

8-जलाशय निर्माण में तुलादि तीन राशियों में सूर्य होने पर राहु मुख किस कोण में होता है?

9-राहु के किस भाग में खात खनन शुभ होता है।

1.4.2 खातारम्भ मुहूर्त्त -

देवालय आदि निर्माण में खात विचार के बाद ही शिलान्यास की पूजन विधि सम्पन्न की जाती है। अतः वास्तुकारों ने खात हेतु मुहूर्त के विचार क्रम में कहा है की खात का आरंभ गृह निर्माण में कहे गए पंचांग शुद्धि से युक्त शुभ मुहूर्त में ही करना शुभ होता है। सामान्य रूप से खात का आरंभ भद्रा, गुरु, शुक्र का अस्त बालत्व, वृद्धत्व काल एवं धनु तथा मीन की संक्रांति काल से रहित दिनों में पाप ग्रह युति तथा क्रूर ग्रहों के वेधादि से रहित नक्षत्रों में शुभ होता है। गृह आरंभ के संबंध में सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है कि विष्णु प्रबोधनी एकादशी के पश्चात और हरिशयनी एकादशी के पूर्व सर्वदा गृहारम्भ करना चाहिए। यथा-

आरंभं च समाप्तिं च प्रासादपुर सद्मनाम्।

उत्थिते केशवे कुर्यान्न प्रसुप्ते कदाचन।।

खातारम्भ के लिए पंचांग शुद्धि अर्थात् मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्रादि का वर्णन मुहूर्त संबंधी ग्रंथों में विस्तृत रूप से मिलता है। आचार्य नारद ने कहा है कि मार्गशीर्ष, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण और कार्तिक मास में गृहारंभ कराने से गृहस्वामी को पुत्र लाभ और आरोग्यता मिलती

है।यथा -

सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिका:।
मासा: स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यफलप्रदा:।।

अत: खातारम्भ वास्तु ग्रंथोक्त एवं मुहूर्त ग्रंथोक्त शुभ मासों में ही करना शुभ होता है। कुछ आचार्यों का मत है कि कार्तिक, चैत्र, ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद और आश्विन मास में गृहारम्भ करना अथवा खातारंभ करना शुभ नहीं होता है। आचार्य रामदैवज्ञ ने सूर्य संक्रांति सम्बन्धित सौरमास एवं चान्द्र मासों की समवेत् गणना करते हुए लिखा है कि फाल्गुन, श्रावण, पौष, वैशाख और मार्गशीर्ष मास में गृह आरंभ व खातारंभ शुभ होता है। गृह आरंभ में पक्ष विचार के संबंध में वास्तु रत्नावलीकार कहते हैं कि -

शुक्लपक्षे भवेत्सौख्यं कृष्णे तस्करतो भयम्।
तस्माद् विचार्य कर्तव्यं यदीच्छेच्छुभमात्मन:।।

अर्थात् शुक्ल पक्ष में गृहारंभ व खात आरंभ करने से सुख की प्राप्ति और कृष्ण पक्ष में चोरी का भय बना रहता है। गुरु और शुक्र की उदित अवस्था होने पर ही शुक्ल पक्ष के दिन में खातारंभ करना चाहिए। निषिद्ध तिथियों में खातारंभ करने से प्राप्त होने वाले अशुभ फलों का वर्णन करते हुए आचार्य बृहद्वास्तुमाला में कहते हैं कि प्रतिपदा तिथि में दरिद्रता, चतुर्थी में धनक्षय, अष्टमी में उच्चाटन, नवमी में शस्त्र आदि से घात, अमावस्या में राजभय तथा चतुर्दशी तिथि में खात आरंभ करने से स्त्री की हानि होती है। आचार्य भृगु का मत है कि गृहारंभ में रिक्ता तिथि (4-9-14) अष्टमी एवं अमावस्या तिथियों तथा रवि, चंद्र एवं मंगलवार दिनों का त्याग करना चाहिए। खात आरंभ में नक्षत्र शुद्धि के विषय में आचार्य माण्डव्य नें कहा है कि अधोमुख संज्ञक नक्षत्र में ही खातारम्भ करना चाहिए। यथा -

अधोमुखैर्भैर्विदधीतखातं शिलां तथैवोर्ध्वमुखैष्य पट्टम्।।

तीनों पुर्वा, आश्लेषा, भरणी, कृत्तिका, मूल, मघा और विशाखा ये नव नक्षत्र
अधोमुख संज्ञक हैं।

यथा -

"पूर्वात्रयं सार्पयमाग्निधिष्ण्यमधोमुखंमूलमघाविशाखा"

पूर्वोक्त तिथियों को छोड़कर शेष अन्य तिथियों में जैसे द्वितीया, तृतीया, पंचमी,षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, और त्रयोदशी तिथि में खातारम्भ करना अधिक श्रेयष्कर होता है। सप्तविंशति योगों में विष्कुंभ और व्यतिपात योग का त्याग करके अन्य योगों में खातारम्भ करना शुभ होता है। आचार्य रामदैवज्ञ ने पंचांग शुद्धि और लग्न शुद्धि के विषय में कहते हैं कि रविवार और मंगलवार को

छोड़कर अन्य वारों में रिक्ता तिथि अमावस्या और सप्तमी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में चर लग्न को (1-4-7-10) को छोड़कर शेष लग्नों में अर्थात स्थिर लग्न (2-5-8-11) तथा द्विस्वभाव लग्न (3-6-8-12) में शुभ होता है। पञ्चक नक्षत्रों को छोड़कर अष्टम और द्वादश भाव शुद्धि युक्त लग्न में शुभ ग्रह केंद्र और त्रिकोण में स्थित हो तथा त्रिषडाय (3-6-11) में पाप ग्रह युक्त हो तो खातारम्भ शुभ होता है। यथा -

भौमार्करिक्तामाद्युने चरोनाङ्गे विपञ्चके।
व्यष्टान्त्यास्थै शुभैर्गेहारम्भस्त्रयारिगै: खलै:।।

1.4.3 खात खनन में राहुमुखपुच्छ का फल -

आप ने इस इकाई में पहले ही यह पढ़ लिया है कि देवालय आदि निर्माण में राहु मुखपुच्छ का विचार किया जाता है, क्योंकि राहु प्रत्येक भूखंड पर सर्पाकार अपने शरीर को फैलाए हुए विद्यमान रहता है तथा शरीर भाग पर खातारम्भ करने से अशुभ फल दायक होता है। अतः देवालय आदि निर्माण में सर्पाकार राहु की स्थिति जानकर खात खनन के समय राहु के शरीर के अंगों (मुख, मध्य, पुच्छ) पर प्रहार करने से बचना चाहिए। क्योंकि यदि सर्पाकार राहु के शरीर पर प्रहार करते हैं तो गृहस्वामी को अनेक प्रकार के अशुभ फलों का सामना करना पड़ता है। यथा सर्पाकार राहु के शीर्ष पर प्रहार होने से मातृ - पितृक्षय, पुच्छ पर प्रहार करने से अनेक प्रकार के रोग,पीठ पर प्रहार करने से हानि एवं भय तथा कुक्षि पर प्रहार करने से पुत्र आदि का लाभ होता है। यथा -

शीर्षे मातृपितृक्षय: प्रथमतो खाते रुज: पुच्छके।
पृष्ठे हानिर्भय च कुक्षि खनने स्यात् पुत्रधान्यादिकम्।।

1.5 सारांश -

नवग्रहों के अंतर्गत सूर्य एवं चंद्रमा सहित राहु एवं केतु का वर्णन महर्षि व्यास रचित अष्टादश पुराणों में अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है। समुद्र मंथन के समय भी राहु नामक राक्षस ने अमृत पान कर लिया परंतु भगवान विष्णु उसके सर धड़ को अलग कर दिया जिसमें शीर्ष भाग को राहु तथा धड़ भाग को केतु के नाम से जाना जाता है। ब्रह्मा ने राहु को सर्प भाग से जोड़ दिया इसलिए लोग इसे सर्पाकार राहु कहते हैं। सर्पकार का राहु होने से उसके मुख पुच्छ का विचार वास्तु शास्त्र में किया जाता है। देवालय निर्माण जलाशय निर्माण तथा गृह निर्माण में राहु मुख पुच्छ का विचार सर्वप्रथम करना चाहिए। यदि इसका विचार किए बिना गृह आरंभ होता है तो गृहस्वामी के लिए अनिष्ट कारक होता है। राहु मुख के विपरीत दिशा में पुच्छ की स्थिति होती है। ईशानादि दिशाओं के अनुसार राहु के मुखपुच्छ की स्थिति बताई गई है। यदि राहु का मुख ईशान कोण में होता है तो

पुच्छ की स्थिति नैऋत्य कोण में जाननी चाहिए। गृह निर्माण के लिए कहा गया है कि यदि सूर्य सिंहादि तीन राशियों में हो तो राहु मुख ईशान कोण तथा पुच्छ की स्थिति नैऋत्य कोण में होता है अतः यहां खात खनन आग्नेय कोण में करना चाहिए। देवालय निर्माण में मीनादि तीन-तीन राशियों में सूर्य की स्थिति के अनुसार ईशानादि कोंणों में खात खनन का विचार करते हैं तथा जलाशय निर्माण में मकरादि तीन राशियों में सूर्य होने पर ईशानादि में राहु मुख निश्चित कर खात खनन का विचार करते हैं। यदि मकरादि तीन राशियों में सूर्य हो तो राहु मुख ईशान कोण में तथा पुच्छ नैऋत्य कोण परंतु खात पृष्ठ भाग (आग्नेय) में करते हैं। किस दिशा से खाता आरंभ करना चाहिए? यदि राहु का मुख्य ईशान कोण में हो तो पुच्छ की स्थिति नैऋत्य कोण में होती है। अतः खातारम्भ पृष्ठ भाग अर्थात आग्नेय कोण में करें। यदि वायव्य में राहु मुख हो तो पुच्छ आग्नेय में तथा पृष्ठ भाग ईशान में होता है अतः ईशान कोण में होगा अतः वायव्य में खातारम्भ करना चाहिए। राहु मुख यदि नैऋत्य कोण में हो तो पुच्छ ईशान कोण में तथा पृष्ठ वायव्य में खातारम्भ करना चाहिए। यदि राहु का मुख आग्नेय कोण में हो तो पुच्छ वायव्य कोण में होता है। अतः खातारम्भ नैऋत्य कोण अर्थात् पृष्ठ भाग में करें।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली –

शुध्द भाव- जिस भव में कोई भी ग्रह न हो।

खात- गड्ढा

अधोमुख नक्षत्र- कुछ नक्षत्रों की संज्ञा विशेष।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर -

अभ्यास प्रश्न (प्रथम)

1- आग्नेय कोण में।

2- ईशान कोण में।

3- नैऋत्य में।

4- नही करना चाहिए।

5- वेदी निर्माण

6- असत्य

अभ्यास प्रश्न (द्वितीय)-

1- ईशान कोंण में।

2- नैऋत्य कोंण में।

3- नैऋत्य कोंण में।

4- अग्निकोंण में।
5- नैऋत्य कोंण में।
6-नैऋत्य कोंण में।
7- आग्निकोण में।
8- अग्निकोण में।
9- पृष्ठभाग में।

1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1- मुहूर्तचिंतामणि:- रामदैवज्ञ पीयूषधाराटीका मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण- वाराणसी-1972
2- बृहदवास्तुमाला
3- वास्तुरत्नावली

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

भारतीय ज्योतिष - शंकर बालकृष्ण दीक्षित
वास्तुसौख्यम् -आचार्य कमलाकांत शुक्ला
वास्तुप्रबोधनी- डॉ अशोक थपलियाल
भारतीय वास्तुमाला- प्रो. शुकदेव चतुर्वेदी

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1-राहुमुखपुच्छ का सामान्य परिचय दीजिए।
2-दिशा के अनुसार राहुमुखपुच्छ स्थिति पर प्रकाश डालिए।
3-गृह निर्माण के लिए राहुमुखपुच्छ का विस्तारपूर्वक वर्णन करें
4-यज्ञ वेदी निर्माण के लिए राहुमुखपुच्छ का वर्णन करें।
5-खातपरीक्षण कैसे किया जाता है विस्तृत वर्णन करें।
6-खात खनन में राहुमुखपुच्छ के फल पर प्रकाश डालिए।

इकाई - 2 शिलान्यास विधि

इकाई की संरचना-

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 शिलान्यास विधि

2.3.1 शिलान्यास परिचय

2.3.2 वर्णादि क्रम से शिला का प्रमाण

2.3.3 शिलान्यास में खात विचार

2.3.4 गृहारम्भ (शिलान्यास) मुहूर्त्त

2.3.5 शिलान्यास विधान

2.3.6 शिलान्यास पूजन

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना -

वास्तु शास्त्र के स्वरुप एवं महत्व को आप भली भाँति समझते हैं ऐसा मेरा विश्वास है। अब तक आपने भूमि के आकार प्रकार सहित भूचयन के सिद्धान्त को पढ़ा है अब आप प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत शिलान्यास के सम्पूर्ण विधान को समझेंगें इसीलिए इस इकाई का शीर्षक **"शिलान्यास विधि"** है।

हम सभी जानते हैं कि भवन निर्माण में शिलान्यास का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। शिलान्यास का शाब्दिक अर्थ होता है शिला का न्यास करना अर्थात् भवन निर्माण हेतु पूजन पूर्वक यथा विधि शिला का प्रथम न्यास या स्थापन करना है। शिलान्यास विधि शुभ मुहूर्त्त में ही सम्पन्न की जाती हैं, क्योंकि शुभ मुहूर्त्त में शिलान्यास पूर्वक गृह निर्माण से ही गृह में सुख शान्ति समृद्धि बनी रहती है तथा सनातन धर्मानुरूप मानव जीवन के परम लक्ष्य पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति भी होती है। अतः शिलान्यास के विस्तृत महत्व एवं विधि का अध्ययन हम प्रस्तुत इकाई के माध्यम से करेंगे।

2.2 उद्देश्य –

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- शिलान्यास के महत्व से अवगत होंगे।
- शिलान्यास में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न शिलाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- शिलान्यास की पूजन प्रक्रिया से अवगत होंगे।
- शिलान्यास के शुभ मुहूर्त्त को जानेंगे।
- शिलान्यास के समय प्रयुक्त की जाने वाली सामग्री से अवगत होंगे।

2.3 शिलान्यास विधि -

2.3.1 शिलान्यास परिचय – भूमि चयन के उपरान्त शिलान्यास प्रत्येक भवनादि के निर्माण की प्रथम अथवा आरम्भिक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को पूरा करने हेतु सर्व प्रथम निर्माण होने वाले गृह-भवनों के स्वरूप का आकलन करना आवश्यक होता है। क्यों कि तदनुरूप ही शिलादि के विषय में वास्तुशास्त्रोक्त विचार प्राप्त होते है। यथा -

पाषाणगेहे कर्त्तव्या शिलापाषाणसंभवा।
शैलजे शैलजा पीठश्रेष्टके चेष्टका स्मृतः।। [1]

[1] **विश्वकर्म प्रकाश, ४.५२**

भावार्थ यह है कि पाषाण यानि पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों से निर्मित होने वाले गृह या भवन के शिलान्यास में पत्थर की छोटी शिला ही लगानी चाहिए। शैल यानि पर्वतखण्ड (बड़े-बड़े आकार) से निर्मित होने वाले गृह-भवनादि में शिलान्यास हेतु बृहत् शिला और ईंट से निर्माण हेतु प्रस्तावित गृह के निर्माण में शिलान्यास हेतु ईंट की शिला का ही प्रयोग करना चाहिए। मिट्टी एवं त्रृणादि से निर्मित होने वाले गृह हेतु शिलान्यास की व्यवस्था तो शास्त्र में नहीं दी गई है किन्तु जनसामान्य को इस तरह के निर्माणारम्भ को भी भगवान का स्मरण करकेकरनी चाहिए। शिलान्यास हेतु सुन्दर, अखण्डित एवं दृढ़ शिला का ही प्रयोग उत्तम होता है। क्यों कि खण्डित, टेढ़ी-मेढ़ी शिला सर्वथा अशुभत्व को देने वाली होती है। इसलिए सुलक्षणा शिला ही नींव हेतु उत्तम मानी गई है। जैसा कि विश्वकर्मा नें कहा है -

अखण्डितानां सुदृढ़ी कृतानां सुलक्षणानां ग्रहणं निरुक्तम् ।।[2]

शिलान्यास में प्रयुक्त होने वाली यथा विधि पूजित पाँच शिलाओं को अग्नि कोण को खात में उत्तर-पूर्व के कोण (ईशान)से आरम्भ कर प्रदक्षिणा क्रम से स्थापित करना चाहिए। यथा-

उत्तरपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत्प्रथमम् ।
शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्याः ।।[3]

प्रस्तुत् विधि के अन्तर्गत खात में स्थापित होने वाली इन पाँच शिलाओं के नाम भी शास्त्रों में वर्णित है जिनमें ग्रन्थान्तर से मतान्तर भी प्राप्त होते है, किन्तु विशेष विमर्शोपरान्त लक्ष्य एक ही सिद्ध होता है। इन पाँच शिलाओं के नाम विश्वकर्मप्रकाश में इस प्रकार कहे गए हैं-

नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णानाम्नी यथा क्रमम् ।

अर्थात् 1- नंदा, 2- भद्रा, 3- जया, 4- रिक्ता, 5- पूर्णा शिलान्यास की पाँच शिलाएँ होती है। इस ग्रन्थ के अनुसार इन पाँच शिलाओं को ईशानादि क्रम से खात में स्थापित करने की बात भी कही गई है परन्तु कुछ आचार्यों ने आग्नेयादि क्रम से इन्हें स्थापित करने का आदेश किया है। आग्नेय और ईशान कोण से सन्दर्भित शिला-स्थापन का विमर्श करने पर बहुशः आचार्यों का मत ईशानादिकोण क्रम से ही प्राप्त होता है। यथा-

ईशानादि क्रमेणैव स्थाप्या सर्वार्थसिद्धये ।

---

[2] विश्वकर्म प्रकाश, ४.४८

[3] बृहत् संहिता, ५३.११२

अर्थात् सर्वार्थ-सिद्धि के लिए ईशानादि क्रम से ही शिलाओं की स्थापना खातान्तर्गत करनी चाहिए। कुछ आचार्यों नें वर्ण क्रम से तो कुछ आचार्यो ने सभी वर्गों को आग्नेय कोण से आरम्भ कर प्रदक्षिण क्रम से ही शिला की स्थापना करने को कहा है। साथ ही यह भी कहा है कि गृह निर्माण की समाप्ति दक्षिण दिशा में नहीं होनी चाहिए। क्यों कि ऐसा करने से तो धन, स्त्री और पुत्रादि का नाश होता है। यथा-

आग्नेयी चैव वर्णानामाग्नेयादि क्रमेण च ।

उपर्युक्त मतान्तर से अभिप्राय यह है कि खातान्तर्गत ईशानादि क्रम से ही शिला का स्थापन करना तथा ईशानादि कोण से आरम्भ कर प्रदक्षिण क्रम से गृह के प्रारम्भिक स्तम्भ (दीवार) का जोड़ना भी सर्वथा शुभ एवं श्रेष्ठ होता है। इसीलिए तो 'नन्दादि' शिलाओं को विदिशाओं में नामानुसार स्थापन करने का निर्देश दिया गया है । यथा-

नन्देति सूक्तिः कथितेशकोणे हुताशनाख्ये शुभगेति चान्या ।
सुमङ्गली नैर्ऋतभागसंस्था भद्रङ्करी मारुतकोणयाता ।।[4]

अर्थात् ईशान कोण की शिला 'नन्दा' का नाम 'शुक्ला' है, आग्नेय कोण की शिला 'भद्रा' का नाम 'सुभगा', नैर्ऋत्य कोण की शिला 'जया' का नाम 'सुमङ्गली एवं वायव्यकोण की शिला 'रिक्ता' का नाम 'भद्रकरी' है और इन विदिशा क्रम से स्थित शिलाओं के मध्य की शिला 'पूर्णा' का नाम 'आधार' है। 'आधार' शब्द से विष्णु का बोध होना स्वाभाविक लगता है पूजनार्थ शिलाओं पर अङ्कित देवताओं के नाम एवं चिह्नाङ्कित उपकरणों को नीचे चक्र द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है। यथा-

शिला	शिला के नाम	अंकित चिन्ह	देवता	दिशा
नंदा	शुक्ला	कमल	ब्रह्मा	ईशान
भद्रा	शुभगा	सिंहासन	विष्णु	आग्नेय
जया	सुमंगली	तोरण	रुद्र	नैऋत्य
रिक्ता	भद्रकरी	कछुआ	ईशान	वायव्य
पूर्णा	आधार	विष्णु	शिव	मध्य

[4] विश्वकर्म प्रकाश, ४.४७

उपर्युक्त विषयों का विमर्श करने से यही सिद्ध होता है कि शिलाओं पर उपर्युक्त चित्रों का अङ्कन सम्भव नहीं होता इसी लिए ऐसी स्थिति में स्वर्णकार के यहाँ से स्वर्ण-रजतादि धातुओं से निर्मित कछुआ, शेषनाग, विष्णुप्रतिमा को लाकर उसी की पूजा खातस्थित शिलाओं पर रखकर कर की जाती है। यही प्रथा आजकल प्रचलन में है। शिलान्यास हेतु शिला कैसी हो तथा ये कितने प्रमाण की लम्बी-चौड़ी हो, इसकी भी चर्चा वास्तुग्रन्थों में विशद् रूप से की गई है। किन्तु आज के समय में राजतन्त्र वाली व्यवस्था तो है नहीं। क्यों कि इस तरह की ईंट राजाओं या सामन्तों के महल- प्रासाद आदि में लगाने हेतु निजी तौर पर बनवाए जाते थे या कुछ खास धनाढ्य लोग भी थे जो खुद ईंट आदि का निर्माण करवा कर ही गृह बनवाते थे। लेकिन वर्तमान समय में निजी ईट-भट्टा का निर्माण-खर्च इतना बृहत् हो गया है कि यह सभी आम लोगों से सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में बड़े-बड़े ईंट-भट्टा ठीकेदारों द्वारा सञ्चालित भट्ठे से ईंट खरीदकर गृह-निर्माण किया जा रहा है। ऐसी स्थिति में शास्त्रोक्त ईष्टकादि पिण्डप्रमाण कितना शुद्ध होगा, यह सभी लोग जान सकते हैं । इसलिए यह मानना है कि जो भी ईंट आदि उपलब्ध हो, उसी में से दृढ़ एवं सुपक्व ईट का चयन कर सही उपलब्धता सुनिश्चित कर लें। किन्तु ध्यान रहे कि विशेष रूप से शिलान्यास (आधारशिला) में प्रयुक्त होने वाली शिलाओं का परिमाण न्यूनाधिक (छोटा-बड़ा) न हो साथ ही सुपक्व लाल रंग का सुन्दर हो तथा काले रंग का ईष्टकादि न हो । जैसा कि कहा गया है-

आधारभूता तु शिला प्रकल्प्या, दृढ़ा मनोज्ञा परिमाणयुक्ता ।
सल्लक्षणा चापरिमाणमाना, न चाधिका न्यूनतरा न कृष्णा ।।[5]

2.3.2 वर्णादि क्रम से शिला का प्रमाण – वैसे तो प्रायोगिक रूप में शिलाप्रमाण की प्रासङ्गिकता नही है क्यों कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किसी व्यक्ति विशेष या वर्ण विशेष के लिए शिलाओं का निर्माण नही होता अपितु एक निश्चित माप में निर्मित शिलाओं का सभी के लिए प्रयोग होता है। तथापि शास्त्रोक्त वर्णन यहां उपस्थित कर रहें है क्यों कि कोई व्यक्ति यदि शास्त्रोक्त प्रमाण से व्यक्तिगत ईष्टिका का निर्माण कराना चाहे तो वह करा सकता है। प्रस्तुत प्रसङ्ग में ब्राह्मणादि वर्णो के शिलाओं का प्रमाण क्रमश: २१, १७, १३ एवं ९ अंगुल लम्बा बताया गया है।अर्थात् विप्रवर्ण राशि वालों के लिए २१, क्षत्रिय वर्ण के लिए १७, वैश्य के लिए १३, तथा शूद्रवर्ण के लिए ९, परन्तु वर्तमान में व्यवहार में यह संभव नहीं होता सभी वर्ण के ईटों (शिला) का प्रमाण एक ही होता है।

शिलाप्रमाणं क्रमशः प्रदिष्टं वर्णानुपूर्व्येण तथाङ्गुलानाम् ।
अथैकविंशं घनविश्वनन्दा विस्तारके व्यासमितं तदर्धम् ।।[6]

[5] विश्वकर्मप्रकाश, ४.५५

यथा सारिणी के माध्यम से –

ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	वर्ण
एकविंश	घन	विश्व	नन्द	शिला का दैर्घ्य शब्दों में
21 अंगुल	17 अंगुल	13 अंगुल	09 अंगुल	शिला का दैर्घ्य अंकों में (लंबाई)
10-1/2 अंगुल	8-1/2 अंगुल	6-1/2 अंगुल	4-1/2 अंगुल	शिला का विस्तार (चौड़ाई)
5-1/4 अंगुल	4-1/4 अंगुल	3-1/2 अंगुल	2-1/4 अंगुल	पिंडिका (मोटाई)

अन्य मत से ईष्टिका भी ४ प्रकार की होती थी उनके नाम है सुखदा, मंगला, विजया एवं निर्मला ये क्रमशः २३, १७, १५ एवं १२ अंगुल प्रमाण की होती हैं।

2.3.3 शिलान्यास में खात विचार - भूखंड के किस दिशा में खात (खनन) का आरम्भ किया जाए इसका ज्ञान राहु के मुख पुच्छ के ज्ञान के आधार पर किया जाता है जैसा कि आप ने इसके पूर्व की ईकाई में पढ़ा है। राहु के मुख पुच्छ की स्थिति सूर्य के राशि भ्रमण के अनुसार रहती है। सर्पाकार राहु की स्थिति ज्ञात कर खनन के समय इसके शरीर के अंगों पर प्रहार करने से बचना चाहिए क्योंकि इसके शरीर पर किए गए प्रहार के कारण गृहस्वामी को विविध प्रकार के अशुभ फलों की प्राप्ति होती है इसी लिए वास्तुशास्त्र के आचार्यों ने सर्पाकार राहु के मुख, मध्य एवं पुच्छ को छोड़कर पृष्ठ भाग में खातारम्भ करने का आदेश दिया है। यहां पर देव मंदिर निर्माण, गृह निर्माण एवं जलाशय निर्माण हेतु सूर्य की राशि के अनुसार राहु का मुख पुच्छ ज्ञान पृथक -पृथक होता है। देवालय (मन्दिर), गृह, और जलाशय के निर्माण में क्रम से मीन, सिंह और मकर राशि से तीन-तीन राशियों में सूर्य के रहने पर राहु का मुख ईशान कोण से आरम्भकर विपरीत क्रम से चारों कोणों में होता है। यथा- मीन, मेष, वृष राशि के सूर्य में देवालय के निर्माण में राहु का मुख ईशान कोण में, मिथुन, कर्क, सिंह राशिके सूर्य में वायव्य कोण में, कन्या-तुला-वृश्चिक राशि के सूर्य में नैऋत्यकोण में तया धनु-मकर और कुम्भस्थ सूर्य में राहु का मुख अग्नि कोण में होता है।

इसी प्रकार गृह के निर्माण में सिंह-कन्या और तुला से आरम्भकर, तथा जलाशय के निर्माण में मकर-कुम्भ और मीन से आरम्भकर ईशानादि विपरीत क्रम से कोणों में राहु का मुख होता है। जिस कोण में राहु का मुख हो उससे पृष्ठ भाग में स्थित कोण में खात (नीवखोदने) का

[6] विश्वकर्मप्रकाश, ४५.०

आरम्भ करना चाहिये, यथा-यदि राहु का मुख नैऋत्य कोण में है तो खात का कार्य वायव्य कोण में आरम्भ करेगें अतः प्रत्येक के खनन की दिशा का ज्ञान हम निम्न चक्र के माध्यम से कर सकते हैं -

राहू के मुख की दिशा	ईशान (राहू का मुख)	वायव्य (राहू का मुख)	नैऋत्य (राहू का मुख)	आग्नेय (राहू का मुख)	सूर्य की राशि स्थिति
देवालय	मीन , मेष ,वृष	मिथुन, कर्क , सिहं	कन्या, तुला, वृश्चिक	धनु , मकर , कुम्भ	सूर्य स्थिति
गृह	सिहं , कन्या, तुला	वृश्चिक , धनु, मकर	कुम्भ, मीन, मेष	वृष, मिथुन, कर्क	सूर्य स्थिति
जलाशय	मकर, कुम्भ, मीन	मेष, वृष, मिथुन	कर्क, सिहं, कन्या	तुला, वृश्चिक, धनु	सूर्य स्थिति
खात हेतु उपयुक्त दिशा	**आग्नेय**	**ईशान**	**वायव्य**	**नैऋत्य**	

यथा –

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शंभुदिशो विलोमतः ।
मीनार्कसिहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात् पृष्ठविदिक् शुभाभवेत् ॥[7]

खातखनन के बाद सामान्यतः शिलान्यास आग्नेय कोण (पूर्व-दक्षिण) में किया जाता है। सर्वप्रथम यथा विधि पूजा करके आग्नेय कोण में प्रथम शिलान्यास करके शेष शिलाओं का उस खात में प्रदक्षिण क्रम से स्थापना की जाती है। यथा

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत् प्रथमम् ।
शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैव प्रतिस्थाप्याः ।।[8]

शिलान्यास के समय खात स्थापित की जाने वाली वस्तुएँ -

[7] बृहद्वास्तुमाला श्लोक 104
[8] बृहद्वास्तुमाला श्लोक 124

शिलान्यास के समय खात या गड्डे में तांबे के बर्तन (कलश) में मिट्टी, सोना, ईंट, पंचरत्न (पाँच प्रकार के रत्न- सोना, हीरा, मोती, पुखराज एवं नीलम), सप्तधान्य (सात प्रकार के धान्य- जौ(यव), तिल, चना, सांवां, कंगनी, मूंग, धान, गेहूँ), एवं नदी के सेवार को नींव में रखना चाहिए, वर्तमान में एक विधान यह भी है की नीव में चांदी या सोने की धातु का नाग नागिन का जोड़ा एवं कच्छप भी रखा जाता है क्यों कि पौराणिक मान्यताओं के अनुसार शेषनाग कच्छप के पृष्ठ पर तथा शेषनाग के फण पर यह पूर्ण वास्तु रूपी यह पृथ्वी विद्यमान है अतः उसी प्रतीक को हम अपने वास्तु का भी आधार बनाकर के कच्छप एवं शेषनाग की आकृति को नीव में स्थापित करते है तथा उसके उपर शिला स्थापन पूर्वक गृह निर्माण किया जाता है। उसके पश्चात् जिससे (मिट्टी, ईंट या पत्थर) भी दीवार बनानी हो उसे नीव में डालना चाहिए। इस प्रकार शिलान्यास में उपर्युक्त सामग्री डाली जाती है। यथा-

मृदिष्टका-स्वर्ण-रत्न-धान्य-शैवालसंयुतम् ।
ताम्रपात्रस्थितं सर्वं खातमध्ये नियोजयेत् ।।[9]

2.3.4. गृहारम्भ (शिलान्यास) मुहूर्त्त– किसी कार्य की सफलता काल विशेष में आरम्भ कर ही पूर्ण रूप में प्राप्त होती है अतः गृहारम्भ (शिलान्यास) कार्य भी शास्त्रोक्त शुभ मुहूर्त्त में ही किया जाना चाहिए इसके लिए कालशुध्दि अपेक्षित होती है, इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम गुरु-शुक्र का अस्त, बालत्व एवं वृध्दत्व, क्षयमास, अधिमास, मीनार्क एवं धन्वर्क विचारणीय होता है क्यों कि उपर्युक्त काल शुध्दि रहने पर ही मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र के सामञ्जस्य से मुहूर्त्त एवं लग्न का विचार होता है। मास विचार के क्रम में गृहारम्भ हेतु सौर एवं चान्द्र दोनों मासों का उपयोग करते हुए इन दोनों के सामञ्जस्य पूर्वक शुभाशुभ मासों का निर्धारण करते हुए रामदैवज्ञ ने लिखा है कि कुम्भ के सूर्य में फाल्गुन मान में, कर्क एवं सिंह राशि के सूर्य में श्रावण तथा मकर राशि के सूर्य में पौष मास में पूर्व एवं पश्चिम दिशा के द्वार वाले गृहों का आरम्भ करना चाहिए। इसी प्राकर उत्तर एवं दक्षिण दिशा के आरम्भ हेतु मेष-वृष के सूर्य में वैशाख मास तथा तुला, वृश्चिक के सूर्य में मार्गशीर्ष मास शुभ होता है। मतान्तर से मेष, वृष, कर्क, सिंह, तुला, वृश्चिक, मकर एवं कुम्भ राशियों के सूर्य में क्रमशः चैत्र, ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, पौष और माघ मासों में गृहारम्भ शुभ होता है अर्थात् मेष के सूर्य में चैत्र, वृष में ज्येष्ठ, कर्क ते सूर्य में आषाढ़, सिंह के सूर्य में भाद्रपद, तुला के सूर्य में आश्विन, वृश्चिक के सूर्य में कार्तिक, मकर के सूर्य में पौष और कुम्भ के सूर्य में माघ मास में गृहारम्भ शुभ होता है। परन्तु कन्या के सूर्य में कार्तिक एवं धनु के सूर्य में माघ मास में गृहारम्भ करना शुभ नहीं होता। वर्तमान में दिशा क्रम से निर्धारित मासों के अनुसार

[9] बृहद्वास्तुमाला श्लोक 143

नहीं अपितु सभी दिशाओं के द्वार वाले गृहों के लिए उपर्युक्त मासों का प्रयोग प्रचलन में है।इसके बाद वार, नक्षत्र, तिथि, करण एवं योगों के परस्पर सम्बन्ध द्वारा निर्मित शुभ मुहूर्त्त का विचार अवश्य करना चाहिए इसके अन्तर्गत भौमवार एवं रविवार को छोड़कर शेष वारों में, रिक्ता तिथि (4, 9, 14), अमावस्या और प्रतिपदा तिथियों को छोड़कर शेष तिथि में चर लग्न (मेष,कर्क,तुला,मकर लग्न) को छोड़कर शेष लग्नों में पञ्चक (धनिष्ठा, शतभिषा, पू० भा०, उ० भा०, रेवती) नक्षत्रों से रहित अन्य वर्णित नक्षत्रों में, लग्न से 8 और 12 भावों के अतिरिक्त अन्य भावों में शुभग्रहों तथा तृतीय-षष्ठ-एकादश भावों में पापग्रहों के स्थित रहने पर गृहारम्भ शुभ होता है जैसा कि मुहूर्त्त चिन्तामणिकार नें कहा है।–

भौमार्करिक्तामाङ्ने चरो नाङ्गे विपञ्चके।
व्यष्टान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्रायारिगैः खलैः ॥

गृहारम्भ में पञ्चक (धनिष्ठा, शतभिषा, पू० भा०, उ० भा० एवं रेवती इन पाँच नक्षत्रों को पञ्चक नक्षत्र कहा जाता है।) का परित्याग करने के लिए श्लोक में कहा गया है। परन्तु **"ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः"** के अनुसार उ०फा०, उ०षा०, उ०भा०, रोहिणी, मृगशीर्ष, चित्रा, अनुराधा, शतभिषा, स्वाती, धनिष्ठा, हस्त एवं पुष्य इन गृहारम्भ के नक्षत्रों में, यहा पर धनिष्ठा, शतभिषा, उ० भा० और रेवती नक्षत्रों का ग्रहण किया गया है। ऐसी स्थिति में इन नक्षत्रों के सम्बन्ध में सन्देह उत्पन्न होना स्वाभाविक है। परन्तु इसका समाधान करते हुये आचार्य ने मुहूर्तचिन्तामणिग्रन्थ के प्रमिताक्षराटीका में माण्डव्य का वचन उद्धृत करते हुए लिखा है कि -

"धनिष्ठा पञ्चके नैव कुर्यात् स्तम्भसमुच्छयम् ।
सूत्रधार-शिलान्यास-प्राकारादिसमारभेत् ॥"

अर्थात् धनिष्ठादि पञ्चक नक्षत्रों में स्तम्भारोपण तथा गृहाच्छादन निषिद्ध होता है। परन्तु शिलान्यासादि अन्य सभी कार्य किये जा सकते हैं।

गृहारंभ में पंचागशुद्धि के अन्तर्गत शुभ तिथियों के निरूपण करते हुए कहा गया है कि द्वितीया, पञ्चमी, तृतीया, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी तथा पूर्णिमा तिथियाँ गृहारम्भ में शुभ फल देने वाली होती हैं परन्तु प्रतिपदा दारिद्र्य को देने वाली, चतुर्थी धन की हानि करने वाली, अष्टमी उच्चाटन करने वाली, नवमी धान्य का नाश करने वाली, अमावस्या राजभय को देने वाली और चतुर्दशी स्त्रियों का विनाश करने वाली तथा अमावस्या राजभय देने वाली होती है ।

द्वितीया पञ्चमी मुख्या तृतीया षष्ठिका तथा।
सप्तमी दशमी चैव द्वादश्येकादशी तथा ॥
त्रयोदशी पञ्चदशी तिथयः स्युः शुभावहाः।

दारिद्र्यं प्रतिपत्कुर्याच्चतुर्थी धनहारिणी ॥
अष्टम्युच्चाटनं चैव नवमी शस्यघातिनी।
दर्शे राजभयं ज्ञेयं भूते दारविनाशनम् ॥[10]

सरलतया स्पष्ट गृहारम्भ मुहूर्त्त ज्ञानार्थ सारिणी-

कालशुध्दि	गुरु-शुक्र के अस्त, बालत्व, वृध्दत्व, अधिमास, क्षयमास, धन्वर्क एवं मीनार्क के अतिरिक्त काल शुभ है।
शुभमास	वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, फाल्गुन चान्द्रमास श्रेष्ठ मेष, वृष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, मकर, कुम्भ के सूर्य में श्रेष्ठ।
शुभतिथियाँ	२, ३, ५, ७, १०, ११, १२, १३ एवं १५ ।
शुभवार	चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र एवं शनिवार
शुभनक्षत्र	उ०फा०, उ०षा०, उ०भा०, रोहिणी, मृगशीर्ष, चित्रा, अनुराधा, स्वाती, धनिष्ठा, हस्त एवं पुष्य (चक्रशुध्द)
शुभलग्न	२, ३, ५, ६, ७, ८, ११, १२ अपने स्वामी एवं शुभ ग्रहों से दृष्ट होने पर ।
लग्नशुध्दि	लग्न से १, ४, ७, १०, ९, ५ में शुभग्रह ३, ६, ११ में पापग्रह तथा ८, १२ ग्रह वर्जित रहने पर शुभ।
अन्य त्याज्य	भद्रा, कुयोग, अष्टमस्थ चन्द्र, भूमिशयन के नक्षत्र।

गृहारम्भ में सप्तसकारयोग – भवन निर्माण हेतु शास्त्रों में मुहूर्त्त जन्य एक प्रमुख योग बताया गया है, जिसमें यदि गृह का आरंभ किया जाता है तो वह अत्यंत शुभदायक होता है उस योग का नाम है सप्तसकार योग । वास्तुप्रदीप के अनुसार सप्त सकारयोग- शनिवार, स्वाती नक्षत्र, सिंह लग्न, शुक्लपक्ष, सप्तमी तिथि, शुभ योग, श्रावण मास इन सात सकारों के योग में किया गया वास्तुकर्म पुत्रपौत्रादि, गजवाजिकादि तथा धन-धान्यादि को देने वाला होता है। यथा -

शनौ स्वाती सिंहलग्नं शुक्लपक्षश्च सप्तमी।
शुभयोगः श्रावणश्च सकाराः सप्तकीर्तिताः ॥
सप्तानां योगतो वास्तुः पुत्रवित्तप्रदः सदा।
गजश्च धनधान्यादिनित्यं तिष्ठन्ति सर्वतः ॥[11]

[10] वास्तुरत्नाकर गेहारंभप्रकरण श्लोक 25-23
[11] बृहद्वास्तुमाला गणनाविचार श्लोक 81-80

मुहूर्त्तोपयुक्त भूमिशयन के नक्षत्र एवं उनकी उपयोगिता - सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गणना से यदि 5, 7, 9, 12, 19, 26 संख्या प्राप्त हो तो इन चन्द्र नक्षत्रों में भूमि शयन होता है। अर्थात् सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित रहता है उससे उपर्युक्त संख्या वाले चन्द्र नक्षत्र में भूमि शयन करती है जैसे यदि सूर्य अश्विनी नक्षत्र में हो तो अश्विनी से पाँचवीं मृगशिरा, सांतवीं पुनर्वसु, नौवीं आश्लेषा, बारहवीं उत्तरा फाल्गुनी, उन्नीसवां मूल तथा छब्बीसवां उत्तराभाद्रपद नक्षत्र होगा अतः इनमें भूमि शयन होगा अर्थात् सूर्य स्थित नक्षत्र से उपर्युक्त संख्या वाले चंद्र नक्षत्र में भूमि शयन माना जाएगा है। इस भूमि सुप्त में मकान बनाना, तड़ाग, वापी, कूप इत्यादि खनना शुभ नहीं होता। यथा-

प्रद्योतनात्पञ्चनगाङ्कसूर्यनवेन्दुषड्विंशमितेषु भेषु ।
शेते मही नैव गृहं विधेयं तडागवापीखननं न शस्तम् ॥[12]

गृहारम्भ में वृषवास्तुचक्र – गृहारंभ हेतु मुहूर्त्त विचार के क्रम में वृषवास्तु चक्र का विचार किया जाता है। इसके अनुसार सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से (अर्थात् सूर्य जिस नक्षत्र में हो उससे) सात नक्षत्र (अर्थात् चन्द्र नक्षत्र या गृहारंभ कालीन नक्षत्र) वृषभ (चक्र) के शीर्ष (सिर) पर अग्निदाह करने वाले, उसके बाद के 4 नक्षत्र अग्रिम पैरों में शून्य (निष्फल), तदनन्तर चार नक्षत्र पिछले पैरों में स्थिरता प्रदान करने वाले, उसके बाद तीन नक्षत्र पीठ पर श्री (धन) देने वाले, उसके बाद के चार नक्षत्र दक्षिण कुक्षि में लाभ देने वाले, तदनन्तर तीन नक्षत्र पुच्छ में स्वामीनाश कारक, ततः चार नक्षत्र वामकुक्षि में निर्धनता देने वाले, उसके बाद के तीन नक्षत्र मुख में निरन्तर पीड़ा (कष्ट) देने वाले होते हैं। निष्कर्ष रूप में सूर्य नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र तक गणना करने से 7 नक्षत्र अशुभ, 11 नक्षत्र शुभ तथा 10 नक्षत्र अशुभ होते हैं। गृहारम्भ में ग्राह्य नक्षत्र यदि उक्त वृष चक्र के अनुसार शुभ फल- दायक (सूर्य नक्षत्र से आठवें नक्षत्र' से 18वें नक्षत्र पर्यन्त) नक्षत्रों में हो तो गृह निर्माण करना चाहिये। सरलता हेतु वृष वास्तु चक्र देखें

<u>वृष वास्तु चक्र</u>

अंग	शीर्ष	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	दक्षिणकुक्षि	पुच्छ	वामकुक्षि	मुख
सूर्यनक्षत्र से गणना	3	4	4	3	4	3	4	3
फल	दाह	शून्य	स्थिरता	श्रीः	लाभ	स्वामीनाश	दारिद्र्य	पीड़ा

[12] वास्तुरत्नाकर गेहारंभप्रकरण श्लोक 42

निष्कर्ष	7 अशुभ	11 शुभ	10 शुभ

यथा-

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे ।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं रामैः पृष्ठे श्रीयुगैर्दक्षकुक्षौ ॥
लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाशो वेदैर्नःस्वं वामकुक्षौ मुखस्थैः ।
रामैः पीडा सन्ततं वार्कधिष्ण्यादश्वै रुद्रैर्दिग्भिरुक्तं ह्यसत्सत् ॥[13]

अभ्यासप्रश्न – 1

निम्नलिखित प्रश्नो में सत्य या असत्य का चयन कीजिये -

1. ईंट से गृह के निर्माण में शिलान्यास हेतु ईंट की शिला होनी चाहिए।
2. ईशान कोण की शिला 'नन्दा' का नाम 'शुक्ला' है,।
3. क्षत्रिय वर्ण की शिला 25 अंगुल की होनी चाहिए।
4. सूर्य नक्षत्र से 14 वे नक्षत्र में भूमि शयन होता है ।
5. भवन निर्माण में सिंह राशि के सूर्य होने पर राहू का मुख ईशान कोण में होता है।

गृहारम्भ में पूजनीय देवता एवं पूजा प्रकार - प्रस्तावित भवन के निर्माण के लिए गृहारम्भ अथवा शिलान्यास हेतु जिस भूमि का हम चयन करते हैं वह निर्माण के समय पृथ्वी का एक छोटा टुकड़ा मात्र न होकर समस्त ब्रह्माण्ड का प्रतिनिधित्व करता है। अत: इसमें वास्तु पुरुष का रूप होना स्वत: ही प्रामाणिक हो जाता है। इसी कारण हमें गृहारम्भ के समय भी वास्तु पुरुष का पूजन अर्चन करना अनिवार्य हो जाता है।

प्रसादे भवने तडागखनने कूपे च वाप्यां वने।
जीर्णोध्दारपुरेषु यागभवनप्रारम्भनिर्वर्तने।। वास्तोः
पूजनकं सुखाय कथितं पूजां बिना हानयः। राजबल्लभमण्डनम् 2.2

वास्तुशास्त्रानुसार भवन, दुकान या किसी भी प्रकार के निर्माण हेतु पांच क्रमों में वास्तु पूजन का प्रावधान है।

(१) प्रथम खातासम्भ पूर्वक भूमि पूजन/गृहारम्भ या शिलान्यास के रूप में
(२) सूत्रपात के समय
(३) द्वार स्थापना काल में

[13] मुहूर्तचिंतामणि वास्तुप्रकरण 14-13- श्लोक –

(४) स्तम्भ उठाते समय

(५) गृह प्रवेश के समय पर।

जैसा कि वर्णित है –

गृहारम्भे सूत्रपाते द्वारं स्तम्भसमुच्चये।
प्रवेश समये चेति पञ्चशोवास्तु पूजनम्।।[14]

इन पांचों पूजन के लिए शुभ मुहूर्त्त की आवश्यकता होती है जो कि पीछे बताया जा चुका है। वास्तव में भवन की नींव रखना ही शिलान्यास कहा जाता है। शिलान्यास विधिवत एवं शास्त्रोक्त नियमानुसार ही करना चाहिए क्योंकि भवन की त्रुटियों को तो हम कदाचित बाद में भी सुधार सकते हैं परन्तु शिलान्यास में यदि त्रुटि हो गयी तो इसका कोई समाधान बाद में नहीं होता। यह भवन हमें कम से कम १२० वर्ष के लिए आश्रय देता है अत: यहाँ विधि की संक्षिप्तता या शीघ्रता नहीं करनी चाहिए।

शिलान्यास से पूर्व सर्वप्रथम भूमि को समतल कर उसकी शुध्दि कर लेनी चाहिए। भूमि शुध्दि की पांच विधियां वास्तु ग्रन्थों में वर्णित है जिसको करने से किसी भी प्रकार की भूमि शुध्द हो जाती है। प्रस्तुत प्रसङ्ग में आचार्यों ने लिखा है कि-

सम्मार्जनोपाञ्जनेन सेकेनोल्लेखनेन च।
गवां च परिवाशेन भूमिः शुध्यति पञ्चधा।।

अर्थात् भूखण्ड को नित्य मार्जन (झाडू) कर स्वच्छ करने से, गोबर से पोताई करने से, भूखण्ड की सिचाई करने से, खुदाई करने तथा कुछ समय तक भूखण्ड में गायों के वास करने से भूखण्ड शुध्द हो जाता है। तत्पश्चात् खात हेतु वास्तुशास्त्रोक्त नियमानुसार गड्ढ़ा खोदना चाहिए जिसका स्थान सूर्य की राशिनुसार प्रत्येक माह में भिन्न-भिन्न होता है यह आवास, देवालय एवं जलाशय हेतु भिन्न-भिन्न होता है, इसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इस प्रकार से जब हम खात को सही दिशा में खोद लेंगे तब शिलान्यास आरम्भ होगा। राहु के मुख-पुच्छ का विचार करते हुए खात खनन के अनन्तर पूर्व-दक्षिण कोंण अर्थात् अग्निकोंण में शिलान्यास करना चाहिए।

2.3.5 शिलान्यास विधान–

शिलान्यास में सर्वप्रथम उत्तम भूमि का चयन करके वहॉं पॉच शिलाओं अथवा ईट्टों (नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा संज्ञक) तथा पांच उप शिलाओं को पूर्व दिशा में अग्नि कोण में स्थापना कर आरम्भ में षोडशोपचार विधि से गणेशादि सहित यथाविधि वास्तु देवतादि का पूजन

कर शिलाओं का पूजन करना चाहिये। वास्तु देवता के पूजन क्रम में ताँबे के कलश में चॉदी का सर्प, कच्छप, सप्तधातु आदि डालकर मन्त्र द्वारा अभिमन्त्रित कर भूमि के अन्दर स्थापित करना चाहिये। इससे गृहारम्भ कार्य आसानी पूर्वक सम्पन्न हो जाती है। शिलान्यास कर्म गृहारम्भ कार्य में अति आवश्यक है।

जैसा कि वृहत्संहिता में प्रतिपादित है

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत् प्रथमम्।
शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भांश्चैव प्रतिस्थाप्याः॥
छत्रस्रगम्बरयुतः कृतधूपविलेपनः समुत्थाप्याः।
स्तम्भस्तथैव कार्यो द्वारोच्छ्राय: प्रयत्नेन॥

अर्थात् नन्दादि पाँच शिलाओं में से पहली शिला अग्निकोण में, धूपदीप, माला, बलि, उपहारादि दक्षिणा से पूजा करके स्थापित करना चाहिये। तदनन्तर शेष शिलायें प्रदक्षिणा के क्रम से स्थापित करना चाहिये। जहाँ शिलान्यास किया हो वहीं पर स्तम्भ उठाने का काम करें। खम्बा उठाते समय छत्र, माला, वस्त्र, धूप-दीप, गन्धाक्षत प्रदान करके निर्माण कार्य करने का विधान बतलाया गया है। इस विधि से द्वार रखते समय भी पूजा करना चाहिये।

शिलान्यास काले तु संभारांश्चोपकल्पयेत्।
समुद्रजानि रत्नानि सुवर्ण रजतं तथा॥
सर्वबीजाति गन्धाश्च शरान् दर्भास्तथैव च॥
शुक्लान् सुमनसः सर्पिः केतकी मधुरोचनाम्॥
आमिषं च तथा मद्यं फलानि विविधानि च।
क्षीरोदनं पूर्णकुम्भान् कोणे कोणे प्रदापयेत्॥
नानाविधानि भक्ष्याणि पानानि विविधानि च।
हुत्वाग्निं विधिवत् काले मुहूर्त चोपनादिते॥
गृहकोणेषु सर्वेषु पूजां कृत्वा विधानतः।
ततः पुण्याहघोषेण शिलान्यासं प्रकल्प्येत्॥
ऐशानमादितः कृत्वा प्राग्दाक्षिण्येन विन्यसेत्।
अननैव विधानेन स्तम्भद्वारावरोहणम्॥
वास्तुविद्याविधानज्ञः कारयेत् सुसमाहितः।
शिलान्यासमन्त्रोऽयं निर्दिष्टो मुनिभिः पुरा॥

अर्थात् यहाँ आचार्य कथन है कि शिलान्यास काल में अनेक प्रकार के वस्तुओं यथा समुद्र से उत्पन्न विविध रत्न, सुवर्ण, चाँदी, सर्वबीज, गन्ध, शर, दर्भ, घृत, केतकीपुष्प,

मधुरोचना, आमिष, मद्य, विविधफल, खीर एवं जलपूर्णकलशों को प्रत्येक कोनों में स्थापित करें। अग्नि में विधिवत् आहुतियाँ देकर मुहूर्त्तानुरूप गृह के कोनों में सभी की विधान से पूजन करनी चाहिये। तत्पश्चात् पुण्याहवाचन शंखादिघोष के साथ शिलान्यास करने का विधान है। यहाँ सर्वप्रथम ईशानकोण से आरम्भ कर पूर्व

से प्रदक्षिणा क्रम में स्थापित करना चाहिये।

आचार्य कश्यप ने भी अपनी संहिता में पूर्व दक्षिण कोण में अर्थात अग्नि कोण में ही शिलान्यास करने का आदेश किया है

सूत्रभित्तिशिलान्यास: स्तम्भस्यारोपणं तथा।
पूर्वदक्षिणयोर्मध्ये कुर्यादित्याह कश्यप:।।

अर्थात् सूत्र, भित्ति, शिलान्यास, स्तम्भ रोपण का प्रारम्भ पूर्व-दक्षिण कोण अग्निकोण से करना चाहिए, ऐसा महर्षि कश्यप का वचन है।

2.3.6 शिलान्यास पूजन - शिला स्थापन करने वाला यजमान गृहनिर्माण हेतु प्रस्तावित भूमि के आग्नेय दिशा में खोदे गये भूमि के पश्चिम की ओर पूर्वाभिमुख होकर बैठकर आचमन प्राणायाम आदि करें। तदनन्तर स्वस्ति वाचन आदि करते हुए निम्नलिखित विधि से संकल्प करें।

देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं करिष्यमाण वास्तोः शुभतासिद्धार्थं निर्विध्नतया गृह-(प्रासाद)-सिद्धयर्थमायुरारोग्यैश्वयाभिवृद्ध्यर्थं च वास्तोस्तस्य भूमिपूजनं शिलान्यासञ्च करिष्ये तदङ्गभूतं श्रीगणपत्यादिपूजनम् करिष्ये। गणेश, षोडशमातृका, नवग्रह आदि का यथा विधि पूजन करें । इसके बाद आचार्य ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया । इस मंत्र से पीली सरसों चारों ओर छीटकर पंचगव्य से भूमि को पवित्र कर वायुकोण में पांच शिलाओं को स्थापित करें। इसके बाद सर्पाकार वास्तु का आवाहन कर - ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीहास्मान्स्वावेशोऽनमीवो भावा नः। यत्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । इस मंत्र से पूजा कर दही और भात का बलि दे पुनः नाग की पूजा करे ॐ वासुकिं धृतराष्ट्रञ्च कर्कोटकधन यौ । तक्षकैरावतौ चैव कालेबामणिभद्रकौ ।। इससे आठों नागों के लिए पृथक-पृथक अथवा एक ही साथ नाम मंत्रों से आवाहन पूजन करें । पुनः धर्म रूप वृष का आवाहन पूजन कर हाथ जोड़कर प्रार्थना करें -

ॐ धर्मोसि धर्मदैवत्यवृषरूप नमोस्तु ते।
सुखं देहि धनं देहि देहि पुत्रमनुत्तमम्।।
गृहे गृहे निधिं देहि वृषरूप नमोस्तु ते।
आयुर्वृद्धिं च धान्यं च आरोग्यं देहि मे प्रभो।।
आरोग्यं मम भार्याया पितृमातृसुखं सदा।

भ्रातृणां परमं सौख्यं पुत्रणां सौख्यमेव च।।
सर्वस्वं देहि मे विष्णो! गृहे संविशतां प्रभो!।
नवग्रहयुतां भूमिं पालयस्व वरप्रद!।।

पुनः पञ्चशिलाओं को- ॐ आपः शुद्धा ब्रह्मरूपाः पावयन्ति जगत्वायम्। चाभिरद्भिः शिलां स्नाप्य स्थापयामि शुभे स्थले। यह पढ़कर शुद्ध जल से प्रक्षालन करें। पुनः ॐ गजाश्वरथ्यावल्मीकसद्भिर्मृद्भिः शिलेष्टकान् प्रक्षालयामि शुद्ध्यर्थं गृहनिर्माणकर्मणि। इसे पढ़कर सप्तमृतिका से प्रक्षालन करें। पुनः पञ्चगव्य, दही और तीर्थ के जल से धोकर शुद्ध वस्त्र से पोंछ दें और उन शिलाओं का कुमकुम चन्दन से लेपन कर स्वस्तिक चिन्ह बनाकर वस्त्र से ढककर मन्त्र पढ़ें –(1)ॐ नन्दायै नमः, (2)ॐ भद्रायै नमः, (3)ॐ जयायै नमः, (4) ॐ रिक्तायै नमः, (5)ॐ पूर्णायै नमः इन शिलाओं के आगे पांचों कुम्भों (घड़ा) की स्थापना करे- (1)ॐपद्माय नमः, (2)ॐ महापद्माय नमः, (3)ॐ शंखाय नमः, (4)ॐ मकराय नमः, (5)ॐ समुद्राय नमः उसके बाद आचार्य गढ्ढे की भूमि को लेपकर कक्षा के पीठ के ऊपर स्थित श्वेत वर्ण वाले चार भुजाओं में घड़ा. शंख, चक्र और शूल धारण किये भूमि का ध्यान करे। (1)ॐकूर्माय नमः इति कूर्मम्, (2)ॐ अनन्ताय नमः इति अनन्तम्, (3)ॐ वराहाय नमः इति वराहम्, इस प्रकार आवाहन, पूजन कर दोनों घुटनों से पृथ्वी का स्पर्श कर जल, दूध, तिल, अक्षत जौ, सरसों और पुष्प अर्घ्य पात्र में रखकर भूमि के निमित्त मंत्र से अर्घ्य दें- ॐ हिरण्यगर्भे वसुधे शेषस्योपरि शायिनि। उद्धृतासि वराहेण सशैलवनकानना ।। प्रासादं (गृहं वा) कारयाम्यद्य त्वदून शुभलक्षणम्।। गृहाणायं मया दत्तं प्रसन्ना शुभदा भव।। भूम्यै नमः इदमर्घ्यं समर्पयामि । पुनः आम्र या पलाश के पत्ते के ऊपर दीपक सहित घी और भात की बलि देकर प्रार्थना करें - ॐ समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले । विष्णु-पत्नि नमस्तुभ्यं शखापातं क्षमस्व मे।। इष्टं मेत्वं प्रयच्छेष्टं त्वामहं शरणं गतः। पुत्रदारधनायुष्य-धर्मवृद्धिकरी भव ।। पुनः गड्ढे में तेल डालकर उसके ऊपर सफेद सरसों छोड़े।

मन्त्र- ॐ भूतप्रेतपिशाचाद्या अपक्रामन्तु राक्षसाः।स्थानादस्माद्व्रजन्त्वन्यत्स्वीकरोमि भुवं त्विमाम्।। उसके ऊपर दही लिपटा चावल उड़द की बलि देकर उसके ऊपर 7 पत्ते स्थापित कर एवं उसके ऊपर बारह अंगुलि लोहे की कील गाड़ दें। मन्त्र- ॐ विशन्तु भूतले नागा: लोकपालाश्च सर्वतः। अस्मिन् स्थानेश्वतिष्ठन्तु आयुर्बलकराः सदा ।। उसके ऊपर मधु, घी, पारद, सुवर्ण (अथवा रुपया) ढके हुए मुख वाले ताम्र आदि से निर्मित पद्म नामक कुम्भ में पञ्चरत्न रख, चन्दन लगाकर वस्त्र लिपटाकर मध्य में रख दें तथा उस पर नारियल भी रख दें। इसी प्रकार पूर्व आदि दिशाओं में चार

घड़ा स्थापित करें। पूर्वादि के क्रम से महापद्म, शंख, मकर, समुद्र, की पूजा कर कुम्भ के बराबर मिट्टी देकर अक्षत छोड़े । पुनः अच्छे मुहूर्त्त में सुपूजित 'पूर्णा नामक ईंट स्थापित करें । मन्त्र- पूर्णे त्वं सर्वदा भद्रे! सर्वसन्दोहलक्षणे। सर्वं सम्पूर्णमेवात्र कुरुष्वाङ्गिरसः सुते।। तदनन्तर पूर्व दिशा मे- ॐ नन्दे त्वं नन्दिनी पुंसां त्वामत्रा स्थापयाम्यहम्। अस्मिन् रक्षा त्वया कार्या प्रासाद यवतो मम्।। तदनन्तर दक्षिण दिशा में- ॐ भद्रे! त्वं सर्वदा भद्रं लोकानां कुरु काश्यपि। आयुर्दा कामदा देवि ! सुखदा च सदा भव।। पश्चिम दिशा में- ॐ जये ! त्वं सर्वदा देवि तिष्ठ त्वं स्थापिता मया। नित्यं जयाय भूत्यै च स्वामिनो! भव भार्गवि।। उत्तर दिशा में-रिक्ते त्वरिक्तेदोषघ्ने सिद्धिवृद्धिप्रदे शुभे !। सर्वदा सर्वदोषघ्ने तिष्ठास्मिन्मम् मन्दिरे।। इस मंत्र से स्थापित कर पूर्णादि नाम मन्त्रों से गन्धादि द्वारा पूजा करें। पुनः चारों ओर दिक्पालों की पूजा कर दीपक के साथ दही, उड़द एवं भात की बलि दें। विश्वकर्मणे नमः इस प्रकार आयुध की पूजा कर प्रार्थना करें- ॐ अज्ञानाज्ञानतो वापि दोषाः स्युश्च यदुद्भवाः। नाशयन्त्वहितान्सर्वान् विश्वकर्मन्नमोऽस्तु ते।। उसके बाद फावड़े की पूजा कर प्रार्थना करे- ॐ त्वष्ट्रा त्वं निर्मितः पूर्वं लोकानां हितकाम्यया। पूजितोऽसि खनित्रा ! त्वं सिद्धिदो भव नो ध्रुवम्।। वाष्तोष्पति, मृत्युञ्जय आदि देवताओं के जप हेतु प्रतिज्ञा संकल्प करें-

अद्येत्याद्युक्त्वा अनवधिवर्षावच्छिन्नबहुकालपर्यन्तं पुत्रकलत्रारोग्य-धनादिसमृद्धिप्राप्तिकामो गृहनिर्माणार्थं कर्तव्यशिलास्थापनात्वेन वास्तुदेवतामृत्युञ्जयादिप्रसादलाभाय यथासंख्यापरिमितं ब्राह्मणद्वारा जपमहं कारयिष्ये।

वरण सामग्री लेकर-अद्येत्यादि गृहनिर्माणार्थं कर्तव्यशिलास्थापनांगभूतब्राह्मणद्वारा- वास्तोष्पतिजपं कारयितुमेभिर्वरणद्रव्यैरमुकामुकगोत्रान् अमुकामुकशर्मणः ब्राह्मणान् जपकर्तृत्वेन युष्मानहं वृणे। तदनन्तर मिष्ठान वितरण करें।

उपर्युक्त सभी कार्यक्रम किसी सुविज्ञ वैदिक द्वारा सम्पन्न कराना चाहिए जिससे कि कोई त्रुटि न रह जाये।

अभ्यासप्रश्न – 2

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये –

1- भवन के शिलान्यास में ....शिलाओं (संख्या) का न्यास किया जाता है।
2- सामान्यतः शिलान्यास ....कोण में किया जाता है।
3- सूर्य नक्षत्र से गृहारंभ दिन का नक्षत्र यदि पांचवा हो तो वह ....फल दायक होता है।

4- नियमानुसार ब्राह्मण वर्ण के लिए शिलाओं का प्रमाण ....अंगुल का होना चाहिए।

5- ....योग में गृहारंभ अत्यंत शुभदायक माना गया है।

2.4 सारांश-

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हमने जाना है कि शिलान्यास विधि का शास्त्रीय स्वरूप क्या है। शिलान्यास (नींव या बुनियाद) प्रत्येक निर्माण की प्रथम आरम्भिक प्रक्रिया है । शिलान्यास हेतु खात में न्यास करने हेतु इन पाँच शिलाओं के नाम क्रमशः नंदा, भद्रा, जया, रिक्ता एवं पूर्णा है। शिलान्यास हेतु सुन्दर, अखण्डित एवं दृढ़ शिला को ही चुन कर लेना चाहिए। खण्डित, टेढ़ी-मेढ़ी शिला सर्वथा अशुभत्व को देने वाली होती है। इसलिए सुलक्षणा शिला ही नींव हेतु उत्तम मानी गई है। सर्वार्थ-सिद्धि के लिए ईशानादि क्रम से शिलाओं की स्थापना खातान्तर्गत की जानी चाहिए। कुछ आचार्यो ने सभी वर्गो को आग्नेय कोण से प्रदक्षिण क्रम में शिलादि की स्थापना करने को कहा है। साथ ही यह भी कहा है कि गृह निर्माण की पूर्णता दक्षिण दिशा में नहीं होनी चाहिए। ब्राह्मणादि वर्ण के क्रम से शिलाओं का प्रमाण क्रमश: २१, १७, १३ एवं ९ अंगुल बताया गया है। परन्तु वर्तमान व्यवहार में यह संभव नहीं होता। सभी वर्ण के ईटों (शिला) का प्रमाण एक ही होता है। भूखंड के किस दिशा में खात (खनन) या शिलान्यास किया जाए इसका ज्ञान राहु के मुख पुच्छ ज्ञान के आधार पर किया जाता है। राहु के मुख पुच्छ की स्थिति सूर्य के राशि भ्रमण के अनुसार रहती है। सर्पाकार राहु की स्थिति ज्ञात कर खनन के समय इसके शरीर के अंगों पर प्रहार करने से बचना चाहिए क्योंकि इसके शरीर पर किए गए प्रहार के कारण गृहस्वामी को विविध प्रकार के अशुभ फलों की प्राप्ति होती है। शिलान्यास के समय खात या गड्डे में तांबे के बर्तन में मिट्टी, सोना, ईंट, पंचरत्न (पाँच प्रकार के रत्न), सप्तधान्य (सात प्रकार के धान्य या अनाज), एवं सेवार नीव में रखना चाहिए। एवं विधिवत पूजन प्रक्रिया के अनुसार शिलान्यास किया जाना चाहिए।

2.5 पारिभाषिक शब्दाबली

शिलान्यास- भूमिपूजन या शिला का प्रथम न्यास (स्थापना) ।

खात- भूमि को खनन (खोदने) करने की प्रक्रिया ।

सप्तसकार- ऐसा योग जिनका निर्माण स वर्ण से होता है अर्थात् स वर्ण के आरंभ से सात विशेष स्थिति एक दिन में होने से संबन्धित योग।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास 1-

1- सत्य, 2 –सत्य, 3- असत्य, 4- असत्य, 5- सत्य।

अभ्यास -2

1- पाँच शिलाओं का, 2- आग्नेय कोण, 3- अशुभ, 4 – 21 अंगुल, 5 – सप्तसकार।

2.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

(क) मूल लेखक – विश्वकर्मा, सम्पादक एवं टीकाकार –महर्षि अभय कात्यायन, विश्वकर्मप्रकाशः(२०१३), चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी |

(ख) मूल लेखक – श्रीरामनिहोर द्विवेदी संकलित, टीकाकार –डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी एवं डा रवि शर्मा, वृहद्वास्तुमाला(२०१८) , चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।

(ग) मूल लेखक – श्रीरामदैवज्ञ, टीकाकार – प्रो. रामचन्द्र पाण्डेय, मुहूर्तचिन्तामणिः(२००९) वास्तुप्रकरण , चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी।

नोट -अन्य संदर्भो का उद्धरण प्रत्येक संदर्भ के पृष्ठ पर है।

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री -

मयमतम् – मयमुनि

बृहत्संहिता – वराहमिहिर

वास्तुसारः – प्रो. देवीप्रसादत्रिपाठी

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- शिलान्यास विधि का शास्त्रीय विधान लिखिए।

2- गृहारंभ (शिलान्यास) मुहूर्त्त को बताइये।

3- शिलान्यास में खात विचार के बारे में लिखिए।

4- शिलान्यास पूजन प्रक्रिया को बताइये।

5- प्रस्तुत इकाई का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

इकाई - 3 गृहकक्ष विन्यास

इकाई की संरचना-

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 गृहकक्ष विन्यास
3.3.1 गृह कक्ष विन्यास का शास्त्रीय विधान
3.3.2 वर्तमान काल में प्रचलित कक्ष विन्यास
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दाबली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 सहायक पाठ्यसामग्री
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना -

आप सभी वास्तु शास्त्र के सामान्य ज्ञान से परिचित है एवं वास्तु शास्त्र के महत्व को भी भलीभाँति समझते हैं ऐसा मेरा विश्वास है। प्रस्तुत इकाई का शीर्षक गृह कक्ष विन्यास से सम्बन्धित है जसमें आप किसी भी गृहपिण्ड में नियमानुसार बननें वाले कक्षों के स्थान का विचार पढ़ेगें। हम सभी जानते हैं कि वास्तुशास्त्र गृहपिण्ड में दिशाधिपति के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले विषय को लक्ष्य कर दिशाओं में गृहकक्षादि की व्यवस्था करने का निर्देश प्रदान करता है। इस व्यवस्था के पीछे अनेक गूढ़ रहस्य छिपे हुए हैं। यदि दिशाओं में दिशाधिपति के अधिकार से सम्बन्धित कक्ष बनाए जाएँ तो दिशास्वामी का बल तथा उनकी नैसर्गिक ऊर्जा का बल उस गृहस्वामी को सदैव प्राप्त होता रहता है तथा गृहपति अपनें जीवन में उत्साह पूर्वक कर्म करते हुए सभी सफलताओं को प्राप्त करता है परन्तु अगर ऐसा न हो तो दिशाधिपति के कोप (क्रोध) से उत्पन्न दुष्ट फल का प्रतिभागी बनकर स्वामी को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है । भाव यह कि यदि आप दिशाधिपति के क्षेत्र में तदनुकूल गृहकक्ष का निर्माण करते हैं तो उन देवताओं से सम्पोषित पदार्थ, विषय या ऊर्जा का लाभ सहज स्थिति में अनवरत मिलता रहेगा। इसलिए दिशा-दिशापति की प्रकृति-स्वभाव एवं संरक्षणात्मक प्रवृत्ति को ध्यान रखकर ही गृहमण्डल में तत्तदनुरूप कक्षादि के निर्माण से सम्बन्धित विषयों का उल्लेख बहुत स्पष्ट रूप से वास्तु शास्त्र के ग्रन्थों में किया गया है। इसी विषय से संबन्धित विषयों का अध्ययन हम इस इकाई में विस्तृत रूप से करेंगे।

3.2 उद्देश्य –

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ❖ वास्तु शास्त्र के अनुसार गृह में कक्ष विन्यास के शास्त्रीय विधान से अवगत होंगे।
- ❖ वर्तमान काल में प्रचलित गृह कक्ष के विन्यास को भी समझ जाएँगे।
- ❖ कक्षों की वैकल्पिक स्थिति से अवगत होंगे।
- ❖ कक्षों के निषेध स्थान को समझेंगे।
- ❖ गृह में कक्ष विन्यास से संबन्धित दोषों को समझ पायेंगे।

3.3 गृहकक्ष विन्यास का शास्त्रीय विधान –

आवासीय भूमि में निर्मित होने वाले भवन की किस दिशा में कौन सा कक्ष होना चाहिए यह अत्यंत प्रमुख विषय होता है क्योंकि किसी भी गृह पिण्ड की आन्तरिक व्यवस्था ही उस गृह का मूलाधार होती है। इसके सन्दर्भ में आचार्य रामदैवज्ञ नें मुहूर्त्त चिन्तामणि ग्रन्थ में लिखा है कि -

स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजश्च धान्यभाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः।
तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्याभ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम।।

अर्थात् पूर्वादि दिशाओं सहित आग्नेयादि विदिशाओं तथा दिशा एवं विदिशाओं के मध्य में क्रमशः पूर्व दिशा में लक्ष्मी गृह अथवा स्नानगृह, आग्नेय कोण में रसोई कक्ष, दक्षिण दिशा में शयन कक्ष, नैऋत्य कोण में शस्त्रागार, पश्चिम दिशा में भोजन करने का कक्ष, वायव्य कोण में धनागार, उत्तर दिशा में द्रव्य रखने का स्थान (तिजोरी), ईशान कोण में देवता गृह या पूजा कक्ष बनाया जाना चाहिए। इसके साथ साथ जो कोण और दिशाओं के मध्य में स्थान होता है उसके लिए भी आचार्यों ने बताया है कि पूर्व और आग्नेय कोण के बीच में दही मथने के गृह का निर्माण किया जाना चाहिए एवं दक्षिण और आग्नेय कोंण के मध्य में घी रखने का स्थान, दक्षिण एवं नैऋत्य के मध्य में शौचालय का निर्माण, नैऋत्य और पश्चिम दिशा के मध्य में स्वाध्याय या अध्ययन करने का कक्ष, पश्चिम एवं वायव्य कोण के बीच में कोप भवन (रोदन कक्ष), वायव्य कोंण और उत्तर कोण के बीच में रति गृह एवं ईशान तथा पूर्व के मध्य समस्त वस्तुओं के संग्रह करने का कक्ष बनाना चाहिए। प्राचीन काल में इसी के अनुसार कक्ष व्यवस्था की जाती थी परन्तु वर्तमान काल में इनमें से कुछ ही कक्षों का निर्माण होता है। भवन के ब्रह्म स्थान (मध्य केन्द्र) में किसी भी प्रकार का निर्माण कार्य नहीं किया जाना चाहिए। इसी नियम के प्रयोग का आदेश प्रायः वास्तु शास्त्र के सभी ग्रन्थों में प्राप्त होता है। बृहद्वास्तुमालाकार नें इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए लिखा है कि –

पूर्वस्यां श्रीगृहं प्रोक्तमाग्नेय्यां स्यान्महानसम् । शयनं दक्षिणस्यां च नैर्ऋत्यामायुधाश्रयम् ।
भोजनं पश्चिमायां च वायव्यां धनसञ्चयम् । उत्तरे द्रव्यसंस्थानमैशान्यां देवतागृहम् ।
इन्द्राग्न्योर्मथनं मध्ये यमाग्न्योर्घृतमन्दिरम् ॥ यमराक्षसयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम् ।
राक्षसजलयोर्मध्ये विद्याभ्यासस्य मन्दिरम् ॥ तोयेशानिलयोर्मध्ये रोदनस्य च मन्दिरम् ।
कामोपभोगशमनं वायव्योत्तरयोर्गृहम् ॥ कौबेरेशानयोर्मध्ये चिकित्सामन्दिरं सदा ।
पुरन्दरेशयोर्मध्ये सर्ववस्तुषु संग्रहम् ॥ सदनं कारयेदेवं क्रमादुक्तानि षोडश ।[14]

इस प्रकार किसी भी गृह पिण्ड में वास्तु शास्त्र के आचार्यों नें उपर लिखे हुए षोडश कक्षों की व्यवस्था को दर्शाया है जिन्हें इस चित्र के माध्यम से सरलता पूर्वक समझा जा सकता है

[14] बृहद्वास्तुमाला श्लोक 1(2/1)156- (2/1)50

ईशान | पूर्व | आग्नेय

उत्तर

पूजाघर	भंडारकक्ष	स्नानकक्ष	दधिमंथन कक्ष	रसोई कक्ष
औषधि कक्ष				घी तेल भंडार कक्ष
धनागार (कोषागार)		ब्रह्मस्थान		शयन कक्ष
रतिगृह				शौचालय
पशु शाला	रोदन गृह	भोजन कक्ष	अध्ययन कक्ष	शस्त्र, उपकरण भंडार

दक्षिण

वायव्य | पश्चिम | नैऋत्य

इसके अतिरिक्त भी अनेक प्रकार का वर्णन ग्रन्थान्तरों में प्राप्त होता है। वराहमिहिर नें बृहत्संहिता के वास्तुविद्याध्याय में केवल चार कक्षों का वर्णन करते हुए ईशान में पूजागृह, आग्नेय में भोजनालय, नैऋत्य में भण्डारगृह तथा वायव्य में धान्यादि रखने का गृह बनाने का आदेश किया है। अन्य कक्षों का विन्यास वास्तु चक्र में स्थापित देवताओं की प्रवृत्ति के आधार पर सुनिश्चित होता है।

अभ्यासप्रश्न – 1

निम्नलिखित प्रश्नो में सत्य या असत्य का चयन कीजिये -

6. पूजा गृह भवन के ईशान कोण में बनाना शुभदायक होता है।

7. भोजन कक्ष पूर्व में बनाना चाहिए।
8. आग्नेय कोण में जल का स्थान शुभ माना जाता है।
9. ब्रह्म स्थान रिक्त रहना चाहिए।
10. दक्षिण एवं पश्चिम के मध्य का कोण नैऋत्य कोण होता है।
11. वास्तुकारों नें गृह पिण्ड में 20 कक्षों की परिकल्पना की है।

3.3.2 वर्तमान काल में प्रचलित कक्ष विन्यास - आज के समय में इन १६ कक्षों की न तो आवश्यकता है और न ही छोटे-छोटे भूखण्डों पर अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार मध्यम वर्गीय व्यक्ति को इतने कक्ष बनाने की सुविधा। अतः वर्त्तमान सन्दर्भ निम्नलिखित अत्यावश्यक कक्षों में से अपनी आर्थिक सम्पन्नता एवं आवश्यकतानुसार वरीयता क्रम में चयन करते हुए निर्माण कराया जा सकता है जिसमें देवगृह, भोजनगृह, शयनगृह, शौचालय, भण्डारगृह, बच्चों का कक्ष, माता-पिता का कक्ष, भोजन स्थान, अतिथिगृह, सार्वजनिककक्ष, अध्ययनकक्ष, व्यायामकक्ष एवं मनोरंजनकक्ष प्रमुख हैं।

पूजाघर - आवासीय भवन में पूजा, उपासना या आराधना के लिए ईशान कोण में पूजागृह बनाया जाता है। इस दिशा के स्वामी भगवान् शिव हैं, जो ज्ञान एवं विद्या के अधिष्ठाता हैं। यद्यपि त्यौहार एवं विशेष अवसरों की सामूहिक पूजा, हवन मांगलिक कृत्य आदि घर के आँगन में किये जाते हैं, क्योंकि यह ब्रह्मा जी का स्थान है, जिनके मुख से चारों वेदों का उपदेश हुआ है। फिर भी दैनिक पूजा या नित्य नियम के लिए ईशान कोंण में पूजाघर बनाना उचित होता है। दैनिक पूजा में जिन मन्त्रों का जप किया जाता है, उनके उपदेशक या आदि गुरु भगवान् शिव हैं। ईशान में पूजागृह की स्थापना के पीछे एक कारण यह भी है कि प्रात:कालीन सूर्य की पवित्र एवं स्वास्थ्यप्रद रश्मियाँ इस दिशा/भाग को शुद्ध एवं पवित्र करती हैं। पूजाघर में देवी देवताओं की मूर्तियाँ या चित्र पूर्व या उत्तर की ओर दीवार के पास रखने चाहिए। इन्हें काष्ठ की चौकी या सिंहासन पर रखना उचित होता है। पूजाघर के पूर्वी या उत्तरी भाग में देवताओं की मूर्ति या चित्रों का मुख उत्तर की ओर नहीं रखना चाहिए। क्योंकि ऐसा करने से पूजा करने वाल का मुख दक्षिण की ओर हो जायेगा जो अनुचित है। घर के दक्षिण भाग में पूजाघर नहीं बनाना चाहिए। और अपने शयन कक्ष में भी देवताओं की मूर्तियाँ स्थापित नहीं करनी चाहिए। पूजा गृह के ऊपर-नीचे या आस-पास में शौचालय या स्नानघर नहीं बनाना चाहिए। पूजा के कमरे में दीपक रखने का स्थान, हवन कुण्ड या यज्ञवेदी आग्नेय कोण में बनानी चाहिए। पूजा का

सामान रखने के लिए आलमारी पश्चिम या दक्षिण की ओर दीवार में बनानी चाहिए। पूजा घर के दरवाजे पर दहलीज अवश्य बनानी चाहिए और दरवाजे के कपाट (किवाड़) अच्छी लकड़ी के और दो पल्ले वाले होने चाहिए। इस प्रकार शास्त्रोक्त नियमानुसार पूजा गृह का निर्माण करानें से घर में सकारात्मक ऊर्जा का संचार बना रहता है।

स्नानघर – स्नान घर का किसी भी भवन में अत्यन्त महत्त्व है। वर्तमान में स्नानगृह और शौचालय संयुक्त रूप से शयनकक्ष के साथ बनाने का प्रचलन है जो सामान्यतः वास्तुशास्त्रीय दृष्टिकोण से दोषपूर्ण है परन्तु आज कल की फ्लैट संस्कृति में जब स्नानागार और शौचालय शयन कक्ष के साथ बनाने की ही परम्परा है तो भी स्नानागार का निर्माण वास्तुशास्त्र के मुख्य सिद्धांतों के आधार पर ही करना चाहिए। स्नानगृह एक ऐसा स्थान है जहाँ व्यक्ति रात्रि के आलस्य को दूर करने और दिन भर के लिए स्फूर्ति प्राप्त करने हेतु शारीरिक शुद्धि हेतु जाता है। अत: वास्तुसम्मत स्नानगृह मानव की न सिर्फ शरीरिक शुद्धि अपितु मानसिक शुद्धि में भी सहायक होता है। वास्तुग्रन्थों के अनुसार स्नानागार भवन के पूर्वी खण्ड में बनाना चाहिए क्योंकि प्रातःस्नान करते समय खुले शरीर पर सूर्य की रश्मियाँ पड़ेगी, जो स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद हैं। अत: पूर्वी भाग में निर्मित स्नानागार शारीरिक और मानसिक आरोग्यप्रद होता है। इसके अतिरिक्त स्नानागार का निर्माण करते समय निम्नलिखित वास्तुशास्त्रीय सिद्धान्तों का अनुपालन करना चाहिए। यथा-

- ❖ स्नान गृह का निर्माण भूखण्ड (भवन) के पूर्वी भाग में करना चाहिए।
- ❖ यदि शयनकक्ष के साथ स्नानाघर बनाना हो तो वह भी कक्ष के पूर्वीभाग में बनाना चाहिए।
- ❖ यदि स्नानघर और शौचालय संयुक्त हो तो शौचालय सदैव नैऋत्य कोण से हटकर दक्षिण की तरफ बनाना चाहिए।
- ❖ स्नानघर में नल, शाँवर एवं वाशबेसिन आदि पूर्वी या उत्तरी भाग में लगवाने चाहिए।
- ❖ गर्म पानी हेतु गीजर या हीटर की व्यवस्था स्नानागृह के आग्नेय कोण में करना शुभप्रद होता है।
- ❖ स्नानगृह में खिडकियाँ या झरोखे पूर्व, उत्तर या ईशान भाग में रखने चाहिए।
- ❖ स्नानगृह में बाथटब दक्षिण से उत्तर की ओर या पूर्व से पश्चिम की ओर रखवाना चाहिए। टब में स्नान करते समय सिर कभी भी उत्तर की तरफ नहीं करना चाहिए।
- ❖ स्नानघर में वायव्य कोण में कपड़े बदलने का स्थान बनाना शुभ है।
- ❖ स्नानघर का प्रवेश द्वार पूर्व या उत्तर में रखना उत्तम होता है।

रसोई घर - रसोई मकान का महत्वपूर्ण भाग है। रसोई में बनाया गया भोजन परिवार के सभी सदस्य ग्रहण करते है एवं वह उनके भौतिक व मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है । गृह स्वामिनी अपना अधिकतर समय रसोई में बिताती है इसलिए रसोई उसके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। भोजन का मन एवं मस्तिष्क से सीधा संबंध है। अन्न से हमारा तन, मन और चैतन्य निर्मित होता है, इसलिए भारत के प्राचीन रहस्यदर्शी 'अन्नं ब्रह्म' का उद्घोष करते हैं। सम्यक् अन्न ग्रहण करते हुए आप ब्रह्म का बोध कर सकते हैं। सूत्र केवल इतना है कि आप सम्यक् आहार लें, एक निर्मल भावदशा में लें और इस आहार को पूरे आनन्द से निर्मित करें। यदि कोई साधु-सन्यासी तामसी प्रवृत्ति का आहार ग्रहण करे तो उसके ध्यान में बाधा अवश्य आती है। ऐसे व्यक्ति सात्विक प्रवृत्ति का आहार ग्रहण करते हैं। मन की वासनाओं और इच्छाओं को भोजन के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। आजकल सर्वत्र असहिष्णुता का वातावरण है। उसके लिए आधुनिक आहार-विहार आचरण ही जिम्मेदार हैं। जिसमें भोजन एवं भोजनकक्ष की महत्वपूर्ण भूमिका प्रतीत होती है। भवन का आग्नेय कोण रसोई के लिए सर्वाधिक उपयुक्त स्थान है। यदि ऐसा संभव न हो तो रसोई वायव्य कोण में भी बनाई जा सकती है परंतु ऐसा करने से रसोई में दिनभर खाना बनता रहेगा। इसके कारण खर्च अधिक होने लगता है। भोजन निर्माण करते समय गृहिणी का मुख पूर्व या उत्तर दिशा में रहना चाहिए। वास्तु शास्त्रानुसार रसोई घर की आंतरिक सज्जा निम्न प्रकार से की जा सकती है

❖ रसोईघर में गैस/चूल्हे रखने की पट्टी पूर्व दिशा में होनी चाहिए जिससे कि गैस चूल्हा पूर्व या

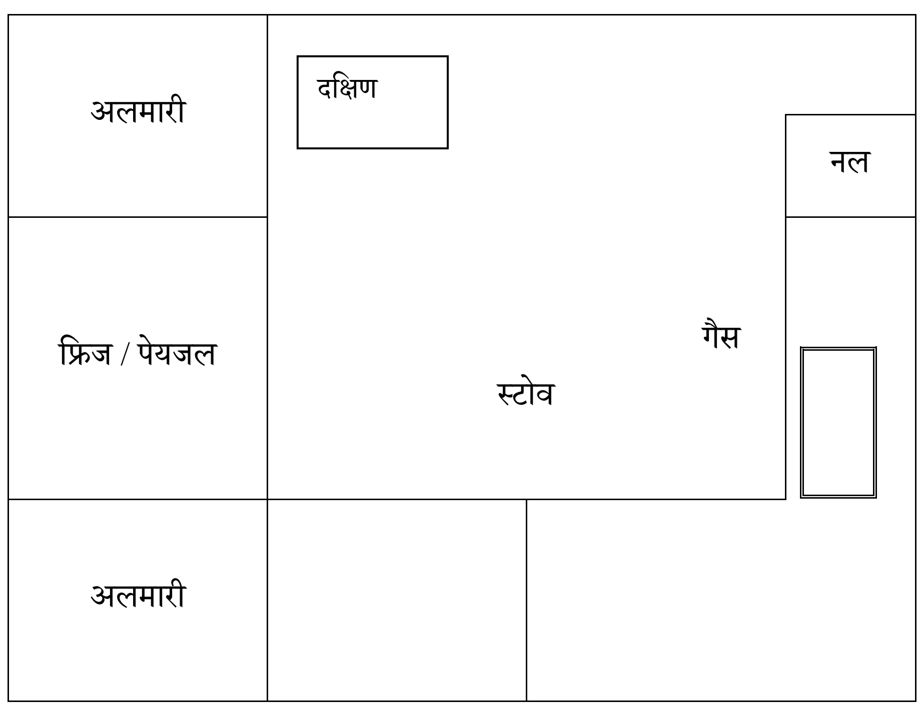

आग्नेय कोण में रखकर भोजन बनाते समय मुंह पूर्व दिशा में रखा जा सके। ऐसा सम्भव नहीं होने पर उत्तर मुख करके भी भोजन पकाया जा सकता है।

- ❖ रसोईघर में जलादि की व्यवस्था ईशान कोण में सर्वोत्तम है।
- ❖ रसोईघर में वाश-वेसिन का निर्माण ईशान कोण का कुछ भाग छोड़कर उत्तर की तरफ करना चाहिए।
- ❖ रसोईघर में फ्रिज रखने के लिए पश्चिम या दक्षिण दिशा तथा मिक्सी, टोस्टर, जूसर जैसा सामान रखने के लिए वायव्य कोण उत्तम है।
- ❖ रसोईघर में जल का निकास पूर्व या उत्तर से करना चाहिए।
- ❖ रसोईघर के ऊपरी हिस्से में परछत्ती आदि का निर्माण दक्षिण तथा पश्चिम में करना चाहिए।
- ❖ रसोईघर कभी भी पूजाघर, शयनकक्ष, शौचालय या स्नानागार के बिल्कुल साथ, ऊपर या नीचे नहीं बनाना चाहिए।
- ❖ भवन के ईशान कोण में रसोईघर का निर्माण पुत्र सन्तति के लिए हानिकारक है।
- ❖ भवन के नैऋत्य कोण में पाकशाला का निर्माण पारिवारिक कलहप्रद होता है।
- ❖ यदि आग्नेय में पाकशाला का निर्माण संभव न हो तो पूर्व या वायव्य कोण में रसोईघर बनाना चाहिए।
- ❖ रसोईघर में खिड़कियाँ आदि पूर्व तथा उत्तर मे रखनी चाहिए।
- ❖ रसोईघर का तल पूर्वोत्तर और ईशान में बने कक्षों की अपेक्षा कुछ ऊँचा रख सकते हैं।

शयनकक्ष- मकान के मुखिया का शयनकक्ष दक्षिण में और युवा दम्पत्ति का शयनकक्ष वायव्य एवं उत्तर के बीच में बनाया जाता है। बच्चों का कमरा वायव्यकोण में बनाया जा सकता है। किन्तु ईशान या आग्नेय कोण में शयनकक्ष कभी भी नहीं बनाना चाहिए। क्योंकि ईशान कोण में बेडरूम बनाने से धन हानि, काम में बाधा और कन्या के विवाह में विलम्ब तथा आग्नेय में बनाने से दाम्पत्य कलह, अनिद्रा एवं चिन्ताएँ घेरती है। अपने से ज्येष्ठ व्यक्ति एवं माता-पिता का कक्ष अपने कक्ष से पश्चिम-दक्षिण में शुभ होता है। यदि मकान दो या अधिक मंजिल का हो तो मकान की पहली मंजिल पर नैऋत्यकोण में परिवार के मुखिया या बुजुर्ग का शयन कक्ष बनाया जाता है। यह कक्ष का परिवार के सबसे बड़े पुत्र के लिए भी उपयोग किया जा सकता है। किन्तु छोटे लोगों एवं बच्चों के लिए नहीं। सामान्यतया पलंग का सिरहाना पूर्व या दक्षिण की ओर रखना उत्तम होता है। इससे सौर एवं

चुम्बकीय ऊर्जा से शक्ति मिलती है। शयनकक्ष का द्वार दक्षिण में नहीं खुलना चाहिए। इस कक्ष में खिड़कियों पूर्व एवं उत्तर दिशा में होनी चाहिए। यदि शयनकक्ष के साथ शौचालय/स्नानागार संलग्न करना हो तो उत्तर या पश्चिम में बनाना चाहिए। शयन कक्ष का नैऋत्य कोना खाली नहीं रखना चाहिए।

इस कोण में आलमारी या भारी फर्नीचर रखना चाहिए। शयन कक्ष में मन्दिर या पूजा का स्थान नहीं बनाना चाहिए। केवल अपने इष्टदेव या कुलदेव का चित्र लगा सकते हैं। शयन कक्ष में पलंग के ऊपर छत की बीम या मोटी पट्टी नहीं होनी चाहिए। नगदी-आभूषण एवं मूल्यवान वस्तुएँ रखने के लिए तिजोरी इस कक्ष की पश्चिमी या दक्षिणी दीवार के सहारे या दीवार में इस प्रकार रखें कि वह उत्तर या पूर्व की ओर खुले । दक्षिण की ओर तिजोरी के खुलने से धन का क्षय होता है और पश्चिम की ओर खुलने से बचत नहीं होती। शयन कक्ष में टी.वी, हीटर, हीटकन्वेक्टर आदि आग्नेय कोण में, कूलर/एयर कण्डीशनर पश्चिम व उत्तर में, वार्ड रोब (वस्त्रों की आलमारी) नैऋत्य या वायव्य में लिखने-पढ़ने की टेबुल पश्चिम में और ड्रेसिंग टेबुल पूर्व में लगानी चाहिए । निम्न चित्र के अनुसार शयन कक्ष की आंतरिक सज्जा हम कर सकते हैं

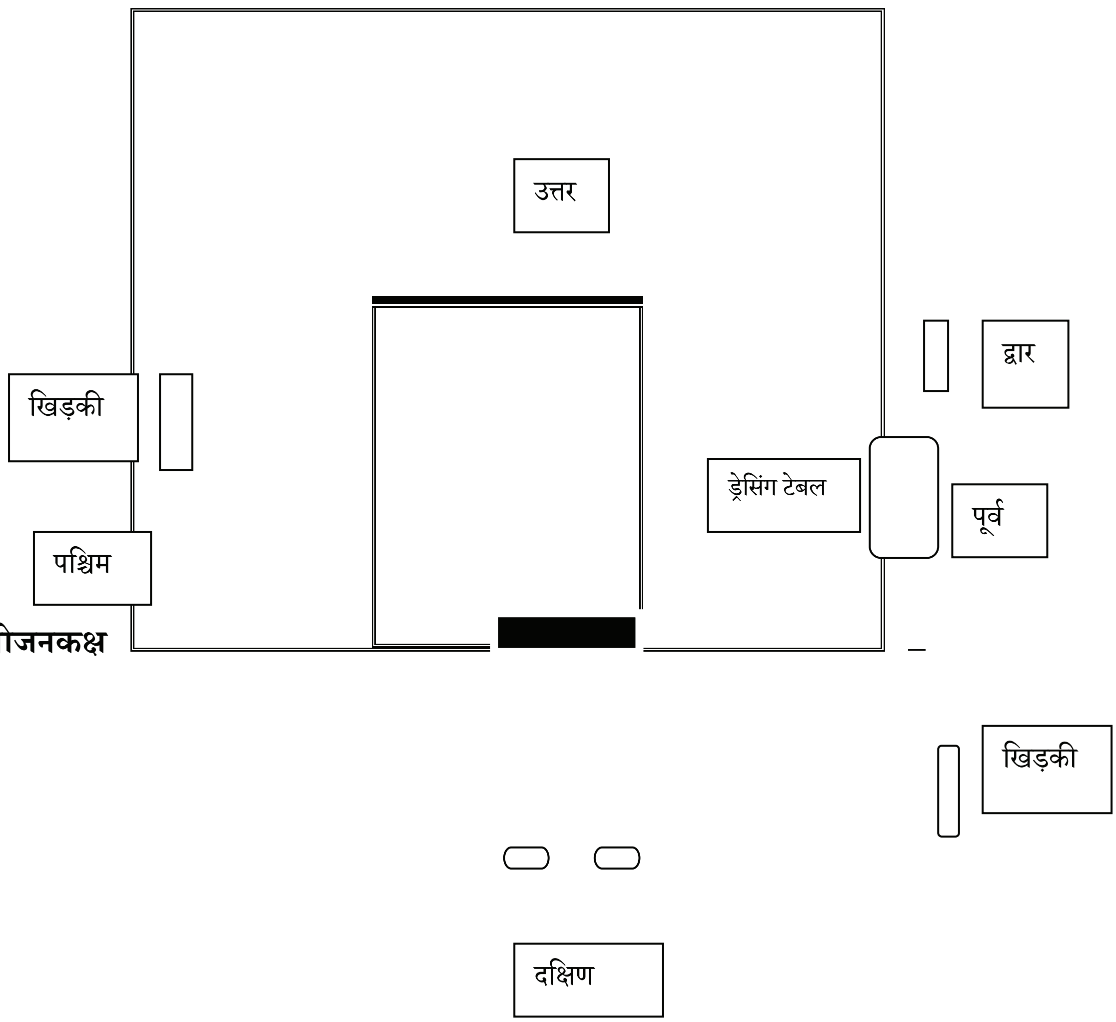

भोजनकक्ष

प्राचीनकाल में रसोई घर में ही बैठकर भोजन करने का प्रचलन था। और आज रसोईघर के पास भोजन करने के लिए डाइनिंग टेबिल लगाकर खाने का प्रचलन है। आमतौर पर ड्राइंग रूम के एक भाग में रसोई के समीप डाइनिंग टेबिल लगा ली जाती है। यह तीन-चार कमरों के छोटे घर की देन है। यदि व्यक्ति का सामर्थ्य हो और वह अलग से भोजन कक्ष बना सके, तो यह कक्ष भवन के पश्चिम में बनाना सर्वोत्तम है। यथा बृहद्वास्तुमाला में कहा गया है कि -

भोजनं पश्चिमायाम्।

इसके अतिरिक्त भोजन कक्ष के निर्माण के सन्दर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार है-

❖ भोजनकक्ष भवन के पश्चिम में बनाना चाहिए।

❖ भोजन कक्ष का द्वार पूर्व, उत्तर या पश्चिम में होना चाहिए, दक्षिण में कदापि नहीं ।

❖ भोजन करने के लिए डाइनिंग टेबिल आयताकार या वर्गाकार बनाना चाहिए।

❖ भोजन करने वाले का मुख पूर्व की ओर होना सर्वोत्तम है, पश्चिम और उत्तर की ओर भी शुभ तथा दक्षिण की ओर होना अशुभ है।

❖ भोजन कक्ष का द्वार तथा खिड़कियां पूर्व, उत्तर या पश्चिम में होने चाहिए।

❖ भोजन कक्ष का तल शेष कक्षों के तलों से कुछ ऊँचा रखा जाता है ।

शौचालय - नैऋत्य एवं दक्षिण के बीच में शौचालय के लिए सबसे उपयुक्त स्थान माना जाता है। अतः शौचालय यहीं बनाना चाहिए। किन्तु गटर लाइन और सैप्टिक टैंक बनाना हो या अन्य कक्ष के साथ संलग्न शौचालय बनाना हो, तो पश्चिम या उत्तर दिशा में वायव्य कोण के निकट बनाये जा सकते हैं। किन्तु ईशान, आग्नेय, पूर्व एवं भवन के मध्य में कदापि शौचालय नहीं बनाना चाहिए। शौचालय का द्वार एवं खिड़कियाँ दक्षिण दिशा को छोड़कर पूर्व, उत्तर या पश्चिम की ओर बनायी जा सकती है। शौचालय में सीट (डब्ल्यू सी) उत्तर या दक्षिण में इस प्रकार लगानी चाहिए कि मल-मूत्र त्याग के समय व्यक्ति का मुँह उत्तर या दक्षिण की ओर रहे। शौच के समय बैठने पर व्यक्ति का मुँह पूर्व की ओर होना निषिद्ध है। शौचालय में संगमरमर का उपयोग नहीं करना चाहिए। चाहें तो सिरेमिक टाइल, जो रफ हो लगाये जा सकते हैं। शौचालय में पानी का नल या पात्र पूर्व, पश्चिम या ईशान में रखना उचित है। आग्नेय या नैऋत्य में नहीं रखना चाहिए। इसके फर्श का ढलान ईशान, पूर्व या उत्तर की ओर रहना चाहिए। शौचालय के सैप्टिक टैंक का गड्ढा कभी भी दक्षिण दिशा में खोदना/बनाना नहीं चाहिए ।

सैप्टिक टेंकः- सैप्टिक टेंक को मूल वायव्य में न होकर पश्चिम दिशा रखा जा सकता है। स्थानाभाव में इसे दक्षिण दिशा में भी रखा जा सकता है। सैप्टिक टेंक को पूर्व एवं पश्चिम दिशा स्थित कक्षों की दीवारों से दूर रखना चाहिए। यह टेंक ईशान कोण, ब्रह्म स्थान व आग्नेय कोण को छोड़कर बनाना चाहिए। इसके निर्माण में निम्न ध्यान रखना चाहिये। सैप्टिक टेंक मकान की दीवार या चार दीवारी से सटाकर नहीं बनाना चाहिए। यदि भवन में तलघर अर्थात बेसमेन्ट हो तो सैप्टिक टेंक, तलघर से दूर बनाना चाहिये अन्यथा तलघर में नमी का प्रभाव बढ़ सकता है। इसकी ऊँचाई भूमितल से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। सैप्टिक टेंक को पूर्व-पश्चिम दिशा में उत्तर दक्षिण की अपेक्षा लम्बवत बनाना चाहिये।

स्टोर कक्ष –

जब मनुष्य अपने लिए भवन बनाकर उसमें रहना शुरू करता है तो वह अपने जीवन को सुविधामय बनाने के लिए अनेक प्रकार के वस्तुओं का संग्रह करता है। इनमें से कुछ वस्तुएँ तो इस प्रकार की होती है जिनका प्रयोग बहुत कम होता है अतः भवन में ही इन सभी वस्तुओं को एक निश्चित स्थान पर रखा जाता है ताकि आवश्यकता पड़ने पर इनका प्रयोग किया जा सके, ऐसे स्थान को ही स्टोर कहते हैं। स्टोर का भवन में अत्यन्त महत्व है। भवन के नैऋत्य कोण में स्टोर बनाने का विधान है क्योंकि इस भाग में वास्तुपुरुष के पैर होते है अत: यह भाग जितना भारी होगा, जितना स्थिर होगा, वास्तुपुरुष का आधार भी उतना ही सुदृढ होगा, स्टोर का निर्माण करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए। स्टोर का द्वार ईशान, आग्नेय या दक्षिण में न बनाएँ, स्टोर में कम से कम खिड़की या रोशनदान रखे। स्टोर क्षेत्रफल की दृष्टि से भी ज्यादा बड़ा नहीं होना चाहिए। नैऋत्य कोण में भी पश्चिमी दीवार पर स्टोर का निर्माण शयनकक्ष और रसोईघर के साथ संयुक्त स्टोर का निर्माण भी दक्षिण-पश्चिम में करना चाहिए। स्टोर को ब्रह्म स्थल या सीढियों के नीचे कभी भी नहीं बनाना चाहिए।

कोषागार - नगदी एवं बहुमूल्य वस्तुएँ (आभूषण आदि) को रखने के लिए भवन की उत्तर दिशा में कोषागार बनाना उचित होता है। किन्तु कोषागार कभी भी भण्डार के साथ नहीं बनाना चाहिए। क्योंकि इन दोनों की प्रकृति में अन्तर है। भण्डार में रखी वस्तुएँ प्रतिदिन या दिन में कई बार रखी-निकाली जाती हैं, जब कि कोषागार में कभी-कभी कुछ रखने या निकालने की आवश्यकता होती है। इस कक्ष में केवल एक मजबूत द्वार होता है, जो पूर्व या उत्तर दिशा में रखा जाता है। इसमें खिड़की या रोशनदान नहीं होते। कोषागार में तिजोरी या बहुमूल्य वस्तुएँ रखने की आलमारी दक्षिणी दीवार के साथ इस प्रकार रखनी चाहिए कि वह उत्तर की ओर खुले। तिजोरी या तो दिवार में लगा देनी चाहिए या दीवार से २-३ इंच के अन्तर पर रखनी चाहिए। तिजोरी या आलमारी कक्ष के ईशान कोण में कभी भी नहीं रखनी चाहिए। इससे धन का नाश होता है। और वायव्य कोण में रखने से धन की हानि होती है। सेफ में बर्तन, कपड़े एवं सुगन्धित इत्र बगैरह नहीं रखने चाहिए। यदि सेफ/तिजोरी दीवार में लगी हो तो मूल्यवान सामान सबसे ऊपर के खाने में नहीं रखना चाहिए।

आगन्तुक कक्ष (ड्रांइगरूम) - आगन्तुक कक्ष जिसे स्वागत कक्ष (आधुनिक भाषा में ड्राइंग रूम) कहते हैं, भवन का एक महत्त्वपूर्ण कक्ष है। घर में किसी प्रयोजन से आने वाले लोग कुछ समय तक इस कक्ष में बैठकर गृह-सदस्यों के साथ किसी विषय पर चर्चा कर सकते हैं। घर के सदस्य भी सामूहिक रूप से बैठकर इस कक्ष में चर्चा आदि कर सकते हैं। आधुनिक समय में यह कक्ष

अधिकतर इस प्रकार से बनाने का रिवाज है कि आने वाले व्यक्ति को इस कक्ष में आते ही सम्पूर्ण घर के विषय में कुछ भी ज्ञान न हो, वह केवल इस कक्ष तक ही सीमित रहें, आगन्तुक कक्ष का निर्माण करते समय अग्रलिखित तथ्य ध्यातव्य हैं।

- ❖ ड्राइंग रूम का निर्माण ईशान से पूर्व की ओर तथा उत्तर से वायव्य कोण की ओर करना चाहिए।
- ❖ ड्राइंग रूप का तल और छत शेष कक्षों से कुछ नीचा रखना चाहिए।
- ❖ ड्राइंग रूप में खिडकियां/झरोखे आदि पूर्व तथा उत्तर में रखनी चाहिए।
- ❖ ड्राइंग रूप का प्रवेश द्वार भी पूर्व या उत्तर में रखना चाहिए।
- ❖ ड्राइंग रूम का निर्माण नैऋत्य कोण में हानिकारक हैं।
- ❖ ड्राइंग रूम का निर्माण वर्गाकार या आयताकार करना चाहिए।
- ❖ ड्राइंगरूम में सोफा, दीवान इत्यादि भारी फर्नीचर पश्चिम और दक्षिण दिशा में रखना चाहिए।
- ❖ गृहस्वामी को सदा पूर्वमुखी या उत्तरमुखी होकर ही बैठना चाहिए।

औषधिकक्ष - घरेलू नुस्खों से दवाई बनाने, दवाइयों का रखने और संक्रामक रोग से ग्रस्त पारिवारिक सदस्य के विश्राम के लिए मकान के उत्तर और ईशान के बीच में औषधिकक्ष बनाया जाता है। उत्तर-पूर्व में होने के कारण प्रातः कालीन सूर्य की किरणें इसमें रखी औषधियों और विश्राम करने वाले व्यक्ति को सशक्त बनाती है। इन रश्मियों की जीवाणु नाशक क्षमता रोगों के वायरस का नष्ट करती है। फलतः इस कक्ष में रखी औषधि और विश्राम करने वाला रोगी जल्दी ही रोग के प्रभाव से मुक्त हो जाता है। यह परिवार का एक प्रकार का ‘‘फर्स्ट एड सेन्टर" है। इस कक्ष का सदैव बीमारी के लिए उपयोग न आने के कारण अन्य कार्यों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

सूतिका गृह -पहले संयुक्त परिवारों में प्रसव दाइयों की देखरेख में प्रायः घर में ही कराया जाता था। आज प्रसव घर के बजाय अस्पताल एवं नर्सिंग होम में होता है। गाँव-देहात में जहाँ अस्पताल या नर्सिंग होम की सुविधा नहीं है, वहाँ लोग प्रसव के लिए प्रसूतिका को पास के नगर/कस्बे के अस्पताल ले जाते हैं अथवा घर में दाइयों की देखरेख में प्रसव की व्यवस्था करते हैं। प्रसव के बाद एक महीना या सवा महीना तक प्रसूतिका की परिचर्या के लिए भी एक कमरे की आवश्यकता होती है। इन सब कार्यों के लिए घर के ईशान एवं पूर्व के बीच में सूतिका गृह बनाया जाता है। मतान्तर से यह नैऋत्य कोण में भी बनाया जा सकता है।

अतिथि कक्ष- हम सभी जानते है की हमारे देश में अतिथि को भगवान के रूप में माना जाता है। "**अतिथि देवो भव**" कहकर अतिथि का सम्मान भारत के अतिरिक्त किसी भी संस्कृति में दिखाई नहीं देता। पूर्ण नि:स्वार्थ भाव से तन, मन, धन से अतिथि की सेवा करना हर भारतीय अपना कर्तव्य मानता है। परन्तु अतिथि के भी कुछ कर्तव्य शास्त्रोक्त है। केवल ऐसा अतिथि ही सेवा के योग्य है जो अपने कर्तव्यों के प्रति जागरुक है जो अतिथि केवल अपना अधिकार समझ कर अतिथि धर्म भूलकर किसी के घर में बहुत समय तक रुककर गृह के सदस्यों पर बोझ बनने लगे, ऐसा अतिथि कदापि सेवा के योग्य नहीं हैं, इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारे वास्तुशास्त्र के आचार्यों ने भवन के वायव्य कोण में अतिथि कक्ष का निर्माण करने का निर्देश किया हैं क्योंकि इस कोण में वायु देव का आधिपत्य हैं और वायु की प्रकृति नित्य चलायमान है अत: इस कोण में शीघ्र ही परिस्थितियों में परिवर्तन होता रहता हैं। वायव्य कोण में अतिथि कक्ष का निर्माण करने से आने वाला अतिथि अपने अतिथि धर्म की मर्यादा भङ्ग होने से पहले ही पूर्णतया सन्तुष्ट होकर जाता हैं, अतिथि कक्ष के निर्माण में अग्रलिखित तथ्य ध्यातव्य हैं-

- ❖ इस कक्ष के पूर्व-उत्तर में खिडकियां आदि बनानी चाहिए।
- ❖ कक्ष के दक्षिण और नैऋत्य के मध्य में संयुक्त शौचालय का निर्माण करना चाहिए।
- ❖ अतिथि कक्ष में पलंग और अलमारियों आदि की व्यवस्था दक्षिण-पश्चिम की दीवार के साथ करनी चाहिए।
- ❖ अतिथि कक्ष में हीटर आग्नेय कोण में तथा ए०सी०/कूलर आदि पश्चिम में रखना चाहिए।

अध्ययन कक्ष- विद्या का हमारे जीवन में कितना महत्त्व है? यह सब जानते हैं। विद्या मनुष्य को वास्तविक रूप में मनुष्य बनाती हैं। विद्या से हीन व्यक्ति असभ्य माना जाता है। विद्या न केवल हमें जीवन में व्यवहार कुशल बनाती हैं बल्कि हमारे नैतिक-उत्थान में भी मुख्य भूमिका निभाती है। आधुनिक समय में तो विद्या ही धनार्जन का मूल है क्योंकि जो व्यक्ति जितना ज्यादा विद्वान, ज्ञानवान और शास्त्रविद् हो, वह उतना ही अच्छा पद प्राप्त करता है। हर माता-पिता की यह इच्छा होती है कि उनकी सन्तान उच्च शिक्षा ग्रहण करें, उनकी विद्यार्जन में रूचि हो, वह जो भी पढ़े, उसे पूर्ण मनोयोग से आत्मसात् करें और आवश्यकता होने पर उसकी सफल अभिव्यक्ति करें। इसी को ध्यान में रखते हुए हमारे आचार्यों ने नैऋत्य और पश्चिम के मध्य में अध्ययन कक्ष बनाने का निर्देश किया हैं। यथोक्तम्-

राक्षसजलयोर्मध्ये विद्याभ्यासस्य मन्दिरम्

अर्थात् नैऋत्य और पश्चिम के मध्य में विद्याभ्यास का स्थान बनाना चाहिए। वस्तुत: पदविन्यास की दृष्टि से यह स्थान दौवारिक और सुग्रीव का है। इन पदों पर अध्ययन कक्ष बनाने से विद्यार्थी में विद्याभ्यास और अभिव्यक्ति के गुण स्वत: ही आ जाते है। अध्ययक्ष कक्ष के निर्माण में अग्रलिखित तथ्य ध्यातव्य है-

- ❖ अध्ययन के समय अध्ययनकर्ता का मुँह पूर्व या उत्तर दिशा की तरफ रहना चाहिए । पुस्तकों की आलमारी या रैक उत्तर-पूर्व की दीवार से सटे रखें या उसी में फिक्स (स्थिर) करवा दें। इसके बाद अन्य कोणों में या दीवार में रैक नहीं बनवाना चाहिए।
- ❖ अध्ययनकक्ष की दीवारों को हल्के नीले सफेदीयुक्त रंग से रंग करवाना श्रेष्ठ होता है। इससे अध्यवसायी व्यक्ति की एकाग्रता सुस्थिर बनी रहती है। साथ ही इस रंग से आध्यात्मिक एवं मानसिक शान्ति का उद्भव होता रहता है। अर्थात् यह रंग दोनों का प्रतीक माना गया है। यद्यपि इसके अतिरिक्त भी कुछ रंग हैं; जैसे फीका हरा, क्रीम (बादामी) जो शुभदायक होते हैं।
- ❖ इस कक्ष के ईशान या उत्तर में सरस्वतीजी या अपने इष्ट का चित्र लगाकर पहले उनका स्मरण-पूजन कर अध्ययन हेतु बैठना चाहिए । इस कक्ष में महान् चिन्तकों, महापुरुषों एवं वैज्ञानिकों और विद्वानों के चित्र या तैलचित्रादि लगावें ।
- ❖ यदि अशक्ततावश बैठ कर पढ़ने में मन न लगता हो तो कक्षस्थित पश्चिम में पलंग या चारपाई आदि बिछाकर पूर्व सिरहाने के सहारे अध्ययन करें। विकल्प से दक्षिण की तरफ पलंग की व्यवस्था हो सकती है । बशर्ते आपका सिरहाना दक्षिण तरफ तथा पैर उत्तर की तरफ ही हो ।
- ❖ वायव्य कोण में पुस्तक रखने की व्यवस्था न करें अन्यथा यह पुस्तक चोरी चली जाएगी या आप्तजनों से मांग ली जाएगी जो कभी वापस नहीं मिलेगी।
- ❖ अध्ययनकक्ष में हवा और प्रकाश की व्यवस्था समुचित रूप में होनी चाहिए।
- ❖ पुस्तक को कभी भी गीले फर्श पर नहीं रखें, अन्यथा गीलेपन के प्रभाव से दीमक लगकर पुस्तक को क्षति पहुँचा सकता है।

किसी भी भवन के अन्तर्गत शास्त्रोक्त षोडश कक्षों के स्थान पर उस स्थान की प्रकृति, प्रवृत्ति एवं आवश्यकतानुसार शास्त्र एवं आवश्यकता के मध्य सामञ्जस्य स्थापित करते हुए शास्त्रोक्त भोजनालय, दधिमन्थन एवं घी कक्ष के स्थान पर भोजनालय एवं खाद्यभण्डारण, शयन एवं

शौचाकक्ष को यथावत रखेंगें क्यों कि ये दोनों कक्ष आज भी उतने ही आवश्यक है जितना पहले थे। अध्ययन एवं शस्त्रागार के स्थान पर अध्ययन एवं व्यायामशाला, कोप एवं भोजन कक्ष के स्थान पर भोजन स्थान, बेसिन, जूठा वर्तन रखने का स्थान या अविवाहित पुत्र/पुत्री का कक्ष बनाया जा सकता है। पूर्वोक्त अन्य कक्ष एवं रति कक्ष के स्थान पर बहू का कक्ष एवं छोटा स्टोर बनाया जा सकता है। औषधि कक्ष एवं भण्डार के स्थान पर अतिथिकक्ष, आगन्तुक कक्ष (डाइंगरूम) या बच्चे का कक्ष बना सकते है। पूजा के स्थान पर पूजा का ही स्थान बनायें। सर्ववस्तु और स्नान कक्ष के स्थान पर स्नान कक्ष, बैठक या अतिथि कक्ष आदि का निर्माण किया जा सकता है। जिसका मूल आधार वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ ही हैं।

सीढियाँ - सोपान (सीढियाँ) किसी भी भवन का महत्त्वपूर्ण अङ्ग होता हैं क्योंकि यह भवन के एक तल को दूसरे तल से जोड़ता है। चल और अचल भेद से यह दो प्रकार का होता है- **"अचलं च चलं चैव द्विधा सोपानमीरितम्"** (मानसार), जिसमें चल सोपान अधिकतर लकड़ी के होते हैं जिन्हें सरलता से अपनी सुविधा के अनुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है चल सोपान सम्प्रति लोहे एवं एल्मूनियम के भी बन रहे हैं। अंचल सोपान भवन में एक ही स्थान पर स्थिर होते हैं तथा यह अधिकतर ईंट और पत्थर से बनाए जाते हैं। कहीं-कहीं लोहे से भी ये अचल सोपान बनते हैं। सीढियों के निर्माण के लिए भवन का पूर्वी और दक्षिणी भाग सर्वोत्तम होता हैं। सीढियों का घुमाव सदैव प्रदक्षिणा क्रम से अर्थात् दांई तरफ होना चाहिए। सीढ़ियों का निर्माण करते समय निम्नलिखित तथ्यों का विशेष ध्यान रखना चाहिए-

- ❖ सीढ़ियों में सदैव दो द्वार रखने चाहिए, जिनमें से एक प्रवेश द्वार और दूसरा निर्गम द्वार। निर्गम द्वार प्रवेश द्वार से सदैव १२ वा भाग कम होना चाहिए।
- ❖ सीढ़ियों की चौडाई एक हाथ से तीन हाथ तक रखनी चाहिए। इनकी वृद्धि ६ अंगुल के हिसाब से करनी चाहिए। सीढ़ियों में पायादान (स्टैप्स) जिन्हें पट्टिका कहा जाता है, संख्या तीन से आरम्भ कर एक सौ तेईस तक रखी जा सकती है। इनकी वृद्धि २ के अनुसार करनी चाहिए।
- ❖ पायदानों की संख्या सदैव विषम होनी चाहिए जैसे ११, १३, १५, १७, १९, २१ आदि।
- ❖ सोपान के मध्य में विश्राम स्थल का निर्माण अवश्य करना चाहिए। ये विश्राम स्थल (Platfarm) अपनी सुविधा के अनुसार पाँच या सात पायदानों के अनन्तर बनाने चाहिए।

- ❖ ईशान कोण में कभी भी सीढ़ियों का निर्माण नहीं करना चाहिए।
- ❖ सीढ़ियाँ कभी भी घर के मुख्य द्वार के सामने नहीं बनानी चाहिए।
- ❖ सीढ़ियाँ घर में नकारात्मक ऊर्जा का स्थान है अत: सीढ़ियों के नीचे नकारात्मक ऊर्जा के स्थान जैसे शौचालय, स्टोर, और कूडा रखने का स्थान नहीं बनाना चाहिए।
- ❖ सीढ़ियों के नीचे कभी भी मन्दिर नहीं बनाना चाहिए।
- ❖ भवन की बेसमेन्ट एवं ऊपर की मंजिल पर जाने वाली सीढियाँ भिन्न-भिन्न स्थान से होनी चाहिए।
- ❖ सीढियों की दीवारों पर उत्तम दृश्यों का अङ्कन करना चाहिए।
- ❖ घुमावदार सीढ़ियों का घुमाव हमेशा प्रदक्षिणा क्रम से ही रखना चाहिए।

अभ्यासप्रश्न – 2

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये –

6- भवन के ....के बीच में औषधिकक्ष बनाया जाता है।

7- भोजनकक्ष भवन के ....में बनाना चाहिए।।

8- सैप्टिक टेंक सामान्यतः ....को छोड़कर बनाना चाहिए।।

9- आग्नेय कोण में भोजन बनाते समय गृहिणी का मुख .... होना चाहिए।

10- उत्तर एवं पश्चिम के मध्य का कोण .... कहलाता है।

3.4 सारांश -

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हमने जाना की गृह कक्ष विन्यास का शास्त्रीय स्वरूप क्या है एवं वर्तमान काल में प्रचलित भवन में कक्षों का स्वरूप कैसा होना चाहिए। सामन्यरूप से शास्त्रीय विधान के अंतर्गत 16 तरह के कक्षों का विन्यास शास्त्रों में बताया गया है। प्राचीन काल में षोडश कक्षात्मक भवन का निर्माण करना प्रचलित था। लोगों के पास भवन-निर्माणार्थ भूखण्ड भी पर्याप्त होते थे तथा घर में रहने वाले सभी सदस्यों के श्रम-सहयोग से आर्थिक संगठन की समस्या भी आड़े नहीं आती थी। परन्तु वर्तमान समय में लोगों के पास पर्याप्त लम्बा-चौड़ा भूखण्ड उपलब्ध नहीं है और सभी लोंगों की आर्थिक समृद्धता भी नही रहती। अतः आजकल संयुक्त परिवार का विघटन होने एवं अर्थहीनता के कारण छोटे-छोटे भूखण्डों में स्थानाभाव को दृष्टि में रखते आवश्यकतानुरूप गृह का निर्माण होने लगा है। अत: समय के साथ प्रकृति-प्रवृत्ति एवं मनोभावादि समस्त क्रियात्मक परिदृश्य में बदलाव होना स्वाभाविक प्रक्रिया ही तो है। पूर्वाचार्यों के निर्देशानुसार गृह का निर्माण वर्तमान में

सम्भव से कुछ परे अवश्य है। परन्तु वास्तुशास्त्र के मूलभूत सिध्दान्तों के साथ सामञ्जस्य स्थापित करते हुए आज भी भवन निर्माण किया जा सकता है। विज्ञान की नित्य-नयी प्रयोगात्मक विधा का समञ्जस्य आर्किटेक्चरों द्वारा आधुनिकता के परिक्षेत्र में ऐसे बिठा दिया गया है कि कम जगह में आवश्यकतानुरूप कक्षादि का निर्माण हो जा रहा है। तात्पर्य यह कि कक्षादि का निर्माण हो, उसमें आधुनिकता भी हो। किन्तु निर्माण यदि शास्त्र की मर्यादा का पालन करते हुए हो तो वैसे गृह में निवास करने वाला स्वामी सुख-समृद्धि से पूर्ण तथा शान्तिमय जीवन जीता है । यह तभी सम्भव है जब आप शास्त्र से सम्बन्ध रखेंगे और उसमें विश्वास पैदा करेंगे। अतः हमेशा गृह निर्माण वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ही करना चाहिए जिससे अधिकाधिक शुभ फल की प्राप्ति हो सके।

3.5 पारिभाषिक शब्दाबली

कक्ष-विन्यास-भवन में कक्षों की स्थिति।

ब्रह्मस्थान-भवन (वास्तु / पिंड) का मध्य स्थान।

शस्त्रागार-शास्त्रों को रखने का स्थान।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास 1-

2- सत्य , 2 –असत्य, 3- असत्य, 4- सत्य, 5- सत्य, 6- असत्य।

अभ्यास -2

1- उत्तर और ईशान, 2- पश्चिम, 3- ईशान कोण, ब्रह्म स्थान व आग्नेय कोण, 4–पूर्व, 5– वायव्य।

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

(घ) मूल लेखक – विश्वकर्मा, सम्पादक एवं टीकाकार – महर्षि अभय कात्यायन, विश्वकर्मप्रकाशः(२०१३), चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी |

(ङ) मूल लेखक – श्रीरामनिहोर द्विवेदी संकलित, टीकाकार –डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी एवं डा रवि शर्मा , वृहद्वास्तुमाला(२०१८) , चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी |

(च) मूल लेखक – श्रीरामदैवज्ञ , टीकाकार – प्रो. रामचन्द्र पाण्डेय,मुहूर्तचिन्तामणिः(२००९) वास्तुप्रकरण , चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी |

नोट -अन्य संदर्भो का उद्धरण प्रत्येक संदर्भ के पृष्ठ पर है |

3.8 सहायक पाठ्यसामग्री -

मयमतम् – मयमुनि

बृहत्संहिता – वराहमिहिर

वास्तुसारः – प्रो. देवीप्रसादत्रिपाठी

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6- गृह कक्ष विन्यास का शास्त्रीय विधान लिखिए।

7- पूजा घर के बारे में लिखिए।

8- रसोई घर की आंतरिक सरचना के बारे में लिखिए।

9- शयन कक्ष के बारे में बताइये।

10- प्रस्तुत इकाई का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

खण्ड -2

गृहनिर्माण विधि एवं मुहूर्त्त विचार

इकाई -1 गृहनिर्माण में मासादि विचार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 गृह निर्माण में मास विचार

  1.3.1 गृहनिर्माण में पक्ष शुद्धि विचार

  1.3.2 गृहनिर्माण में नक्षत्र शुद्धि विचार

  1.3.3 गृहनिर्माण में लग्न शुद्धि विचार

1.4 गृहनिर्माण में पंचांग शुद्धि विचार

1.5 सारांश

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. ज्योतिष पंचम सेमेस्टर के अन्तर्गत BAJY(N)-330 पाठ्यक्रम के द्वितीय खण्ड की प्रथम इकाई 'गृहनिर्माण में मासादि विचार' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहनिर्माण में राहु मुख-पुच्छ विचार, खात प्रविधि, शिलान्यास एवं गृहकक्ष विन्यास आदि विचार का अध्ययन कर लिया है। अब आप गृह निर्माण में मासादि का निर्णय कैसे करते है? इसका अध्ययन करने जा रहे है।

गृह निर्माण प्रक्रिया में 'मास निर्णय' आवश्यक होता है। मास ज्ञान के बिना गृहनिर्माण प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न हो सकती है। अत: वास्तुशास्त्र के प्रवत्तर्को एवं आचार्यों द्वारा मासादि विचार बतलाया गया है। गृह निर्माण में मास का शुभाशुभ प्रभाव भी पड़ता है।

अत: आइए अब हम सब वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आचार्यों द्वारा प्रतिपादित 'गृह निर्माण में मासादि विचार' से सम्बन्धित विषयों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेगें कि –

- गृहनिर्माण में कौन सा मास उत्तम होता है।
- गृहनिर्माण में मासादि विचार किस प्रकार किया जाता है।
- मास का शुभाशुभ प्रभाव क्या होता है।
- वास्तु शास्त्र के अन्तर्गत गृहनिर्माणान्तर्गत मास, पक्ष, अयन एवं ऋतु का विचार कैसे करते है।
- वास्तुशास्त्र में मास के अतिरिक्त कौन-कौन सा विचार प्रमुख है।

1.3 गृहनिर्माण में मास विचार

गृहनिर्माण प्रत्येक मानव के भौतिक जीवन का अभिन्न हिस्सा है। मानवों के रहने का या निवास करने का स्थान को 'गृह' नाम से सम्बोधित किया जाता है। यद्यपि हम सब जानते है कि प्रत्येक जीव रहने हेतु स्वगृह निर्माण करता है परन्तु प्रमुखता के दृष्टिकोण से यहाँ हम केवल मानव जीवन से जुड़े वास्तुशास्त्रीय सम्बन्धित गृहनिर्माण का अध्ययन करेंगे। वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत हमारे प्राचीन ऋषियों ने गृहनिर्माण के पूर्व अनेक विचार उपस्थापित किये हैं। उन्हीं विचारों में से एक

है - मासादि विचार।

सर्वप्रथम मास को यहाँ समझते है। मास किसे कहते है? मास कितने होते है? कौन-कौन से प्रमुख मास है? गृहनिर्माण में मासादि का विचार कैसे करते हैं? आइए हम सभी इन समस्त प्रश्नों के उत्तर को यहाँ जानने का प्रयास करते हैं।

त्रिंशत् दिनात्मकं मासमेकम् अर्थात् ३० दिनों का एक मास होता है। आप सभी ने चैत्रादि द्वादश (१२) मासों का नाम अवश्य ही सुना होगा। इन मासों का हमें 'वैदिक नाम' भी वेदों में प्राप्त होता है। प्रमुखता एवं व्यावहारिक दृष्टिकोण से सौर मास एवं चान्द्रमास दो प्रकार के मासों का सर्वाधिक प्रचलन दिखलाई पड़ता है।

सूर्य के द्वारा एक राशि (३० अंश) का भोग काल 'सौर मास' के नाम से जाना जाता है। अमान्ताद् अमान्तं यावत् चान्द्रमास:। अर्थात् एक अमान्त से दूसरे अमान्त पर्यन्त 'चान्द्रमास' होता है। चैत्रादि मास की गणना चान्द्रमास में ही होता है।

मासों का वैदिक नाम - मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभः, तपस्य, इष, ऊर्जा, मार्ग, भग, तपस, तपस्य।

प्रचलित मासों का नाम – चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन।

अब गृह निर्माण में मास विचार के अन्तर्गत अध्ययनोपरान्त हमें अलग-अलग मत प्राप्त होते हैं। आइए हम सब उनका यहाँ अवलोकन करते हैं।

महर्षि नारद जी के मत में गृहारम्भ के अन्तर्गत सौरमास कथन -

पौषफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्त्तिकाः ।
मासाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यशुभप्रदाः ।।

अर्थात् महर्षि नारद जी के अनुसार पौष, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण, कार्तिक ये समस्त सौर मास गृह-निर्माण में पुत्र, पौत्र, आरोग्य आदि शुभ फल देने वाले होते हैं। अत: गृहारम्भ में इन मासों का ग्रहण करना चाहिए।

श्रीपति के मतानुसार गृहारम्भ के अतन्तर्गत चान्द्रमास कथन -

शोको धान्यं मृतिपशुहृती द्रव्यवृद्धिर्विनाशो
युद्धं भृत्यक्षतिरथ धनं श्रीश्च वह्नर्भयत्वम्।
लक्ष्मीप्राप्तिर्भवति भवनारम्भकर्त्तुः क्रमेण

चैत्रादूचे मुनिरिति फलं वास्तुशास्त्रोपदिष्टम्।।

श्रीपति के अनुसार चैत्रादि चान्द्रमासों में गृहारम्भ से क्रमशः शोक, धान्य, मृत्यु, पशुहरण, द्रव्यवृद्धि, विनाश, युद्धभय, भृत्य-क्षति, धनलाभ, श्रीप्राप्ति, अग्निभय व लक्ष्मीप्राप्ति होती है, ऐसा बतलाया गया है। स्पष्टता के लिए आप नीचे क्षेत्र में देखकर समझ सकते हैं –

गृहारम्भ में १२ मासों का फल विचार

चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भाद्रपद	आश्विन	कार्तिक	मार्ग.	पौष	माघ	फाल्गुन
शोक	धान्य	मृत्यु	पशुहरण	द्रव्यवृद्धि	विनाश	युद्धभय	भृत्य क्षति	धन लाभ	श्रीः	अग्नि भय	लक्ष्मी प्राप्ति

गृहनिर्माण में मासदोष का अभाव -

पाषणेष्टयादिगेहादि निम्द्यमासे न कारयेत्।
तृणदारूगृहारम्भे मासदोषो न विद्यते ।।

तृण व लकड़ी के गृह में मास दोष नहीं होता है; किन्तु पाषाण, ईट व मिट्टी-का गृह निन्द्य मासों में नहीं बनाना चाहिए। ऐसा ऋषियों का मत है। अत: इसका गृहनिर्माण में ध्यान रखना चाहिए।

गृहनिर्माण में आचार्य लल्ल का कथन -

गृह निर्माण आरम्भ करने के पूर्व आचार्य लल्ल का कथन है कि यदि प्रश्न काल में प्रश्कर्ता जिस अंग का स्पर्श कर प्रश्न करता हो, कालपुरूष का वह अंग यदि शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो उसे गृहारम्भ का आदेश करना चाहिए अथवा नहीं। यथा –

कालनरस्य यदंगं सौम्यग्रहवीक्षितं युतं वाऽपि।
तच्चेत्स्पृशति प्रष्टा तदास्यनिर्माणमदिश्यम्।।

वृद्ध नारद द्वारा गृहनिर्माण में कालशुद्धि विचार –

आरम्भं च समाप्तिं च प्रासादपुरसद्मनाम्।
उत्थिते केशवे कुर्यान्न प्रसुप्ते कदाचन।।

अर्थात् प्रासाद, पुर और गृह का आरम्भ अथवा समाप्ति भगवान विष्णु के जाग्रतावस्था में ही करना चाहिए उनके शयन काल में नहीं।

गृहारम्भ में मास सम्बन्धित अन्य मत -

चैत्रे शोककरं गृहादिरचितं स्यान्माधवेऽर्थप्रदम्।

ज्येष्ठे मृत्युकरं शुचौ पशुहरं तद्वृद्धिदं श्रावणे।।
शून्यं भाद्रपदेत्विषे कलिकरं भृत्यक्षयं कीर्तिके।
धान्यं मार्गसहस्ययोर्दहनभीर्माघे श्रियं फाल्गुने।।

गृहारम्भ यदि चैत्र मास से किया जाय तो शोक होता है, वैशाख में धन-लाभ, ज्येष्ठमास में मृत्युदायक, आषाढ़ मास में पशुहानि, श्रावण में पशुवृद्धि, भाद्रपद में शून्यता (निष्क्रियता, अवसाद), आश्विन मास में कलह, कार्तिक में भृत्यनाश, मार्गशीर्ष, और पौष मास में अन्नलाभ माघमास में अग्निभय, और फाल्गुन मास में गृहारम्भ करने से लाभ होता है। इस संदर्भ में निम्न श्लोक भी द्रष्टव्य है-

शोको धान्यं मृति पशुहयती द्रव्यवृद्धिर्विनांशो।
युद्धं भृत्यक्षतिरथफलं श्रीश्चवहेन्भंयं च।।
लक्ष्मीप्रातिभंवति भवनारम्भकर्तुः क्रमणे।
चैत्रादूचे मुनिभिरसकृद्वास्तुशास्त्रेषु विज्ञैः।।

नारद द्वारा कथित मासशुद्धिः -

सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिकाः।
मासाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्य फलप्रदाः।।

मार्गशीषं, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण और कात्तिक मास में गृहारम्भ कराने से पुत्र और आरोग्यता प्राप्त होती है।

अन्य मत -

वैशाखे श्रावणे मार्गे माघे फाल्गुनके तथा।
कन्यायुग्मधनुर्मीनभिन्ने सूर्ये गृहं शुभम्।।

वैशाख, श्रावण, मार्गशीष, माघ और फाल्गुन मास तथा कन्या, मिथुन, धनु और मीन के सूर्य को छोड़कर गृहनिर्माण शुभ होता हैं।

त्याज्यमास में मतान्तर -

आषाढ चैत्राश्वयुजोर्जमाघज्येष्ठेषु सप्रौष्ठपदेषु नूनम् ।
निकेतनानां घटनंनृपाणां यागेश्वरचार्यमते न शस्तम्।।

आषाढ, चैत्र, आश्विन, कार्तिक, माघ, ज्येष्ठ, और भाद्रपद ये मास योगेश्वराचार्य के मतानुसार गृहनिर्माण में शुभद नहीं होते हैं।

नारद मत में संक्रान्तिवशेन प्रशस्तमासः-

गृहंसस्थापनं सूर्ये मेषस्थे शुभदं भवेत्।
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम्।।
कर्कटे शुभदं प्रोक्त सिंहे भृत्यविवर्धनम्।
कन्यारोगं तुले सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम्।।
कार्मुकेतु महाहानिर्मकरे स्याद्धनागमः।
कुम्भे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सदम्भयावहम् ।।

मेष के सूर्य में गृहस्थापन शुभद होता है। वृष के सूर्य में धनवृद्धि, मिथुन के सूर्य में मृत्यु, कर्क के सूर्य में सुभ, सिह के सूर्य में भुत्यों की वृद्धि, कन्या के सूर्य में रोग, तुला के सूर्य में सुख, वृश्चिक के सूर्य में धनवृद्धि, धनु के सूर्य में महत हानि, मकर के सूर्य में धनागम, कुम्भ के सूर्य में रत्नलाभ और मीन के सूर्य में गृहारम्भ भय देने वाला होता है।

उपर्युक्त श्लोक के अनुसार मेष, वृष, कर्क, सिंह, तुला वृश्चिक मकर और कुम्भ के सूर्य में गृह निर्माण प्रशस्त होता है। मेष के सूर्य फाल्गुन चैत्र मास में वृष के सूर्य वैशाख और ज्येष्ठ मास में, कर्क के सूर्य श्रावण मास में, सिंह के सूर्य भाद्रपदमास में, तुला के और वृश्चिक के सूर्य कार्तिक और मार्गशीर्ष मास में, मकर कुम्भ के माघ और फाल्गुनमासों में होते हैं। इस प्रकार चान्द्र और और मासों में विरोधाभास उन्पन्न होने से गृहनिर्माण कार्य में कौन मास ग्राहय हो इसके निर्णय हेतु राम दैवज्ञ का यह वचन द्रष्टव्य है –

कुम्भेऽर्के फाल्गुने प्रागपरमुखगृहं श्रावणे सिंहकर्क्योः।
पौषे नक्रे च याम्योत्तरमुखसदनं गोऽजगेऽर्के च राधे।।
मार्गे जूकालिगे सद् ध्रुवमृदुवरूणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः।
सूतीगेहन्त्वसदित्यां हरिभविधिभयोस्तत्र शस्तः प्रवेशः।।

अर्थात् फाल्गुन मास में कुम्भ के, श्रावण मास में कर्क और सिंह के, तथा पौष मास में मकर के सूर्य होने से पूर्व-पश्चिम दिशा में द्वारवाले गृह का निर्माण कराना शुभ है। वैशाख मास में मेष-वृष के, मार्गशीर्ष मास में तुला और वृश्रिक के सूर्य हों तो उत्तर-दक्षिण द्वार वाले गृह का निर्माण शुभद हैं। ध्रुव, मृदु, शतभिष, स्वात, वसु (धनिष्ठात) अर्क (हस्त) और पुष्य नक्षत्रों में ग्हारम्भ शुभद होता है। सूतिकागृह का निर्माण पुनर्वसु में प्रारम्भ करना चाहिए तथा श्रवण अथवा अभिजित नक्षत्र उसमें में प्रवेश करना चाहिए।

बोध प्रश्न –

1. एक मास में कितने दिन होते हैं?

   क. २० ख.७ ग.३० घ.३६५

2. अमान्ताद अमान्तं यावत् किं भवति?

   क. सौरमास: ख. चान्द्रमास: ग. खरमास: घ. मलमास:

3. सूर्य की दैनिक गति कितनी है?

   क. १० विकला ख. १ अंश ग. ३ अंश घ. ३० अंश

4. श्रीपति के अनुसार वैशाख मास में गृहारम्भ का क्या फल है?

   क. पुत्र प्राप्ति ख. धान्य प्राप्ति ग. रोग घ. भय

5. 'विष्णुशयन में गृहारम्भ निषेध है' – यह किसका मत है?

   क. श्रीपति ख. रामदैवज्ञ ग. वृद्ध नारद घ. विश्वकर्मा

6. कुम्भ के सूर्य में गृहनिर्माण कैसा होता है?

   क. प्रशस्त ख. अशुभ ग. मध्यम घ. कोई नहीं

श्रीपति का मत -

ककिनक्तहरिकुम्भगतेऽर्के पूर्वपश्चिममुखानि गृहाणि ।
तौलिमेषबृषवृविश्वतेदक्षिणोतरमुखानि च कुर्यात् ।।
अन्यथा यदि करोति दुर्मतिर्व्याधिशोकधननाश नमश्नुत् ।
मीनचापिमिथुनाङगनागते कारयेत्र गृहमेव भास्करे ।।

पूर्व-पश्चिमाभिमुख गृह का निर्माण, कर्क, मकर, सिंह और कुम्भ के सूर्य में, याम्मोत्तराभिमुख गृह का निमार्ण तुला, वृश्चिक, मेष और वृष के सूर्य में करना शुभद होता है। इनसे इतर मीन, धनु, मिथुन और कन्या के सूर्य में गृहनिर्माण कराने वाला व्यक्ति, रोग, शोक और धनक्षय से कष्ट भोगता है।

रामदैवज्ञ का मत -

कैश्चिन्मेषरवौ मघौ वृषभगे ज्येष्ठ शुचौ कर्कटे ।
भाद्रे सिहगते घटऽश्वयुजि चोर्जेऽलौ मृगे पौषके ।।
माघे नक्तघटे शुभं निगदितं गेहं तथोर्जे न सत ।

कन्यायां च तथा धनुष्यपि न सत्कृष्णादिमासाद् भवेत् ।।

किसी के मतानुसार मेष के सूर्य चैत्रमास मे, वृष के सूर्य ज्येष्ठ मास में, कर्क के सूर्य हों तो आषाढ़ मास में, सिंह के सूर्य भाद्रपद मास में, तुला के सूर्य अश्विन मास में, वृश्चिक के सूर्य कार्तिक मास में, मकर के सूर्य पौष मास में, तथा मकर या कुम्भ के सूर्य यदि माघ मास में हों तो ये मास गृहारम्भ के लिए शुभद होते हैं। कार्तिक माघ मास में कन्या का तथा माघ मास में धनुराशि के सूर्य गृहारम्भ में त्याज्य होते हैं। मासों की गणना कृण्ण पक्ष से ही करनी चाहिए।

इस संदर्भ में वशिष्ठ का वचन भी द्रष्टव्य है -

मासे तपस्ये तपसि माधवे नभसि त्विषे।
उर्जे च गृहनिर्माणं पुत्रपौत्रधनप्रदम्।।

जीर्णगृहनिर्माणे मासशुद्धिः -

जीर्णोद्धारे जलाग्न्यादिभयत: पतिते गृहे।
श्रावणोर्जे तथा माघे कारयेत्सुखदं गृहम्।।

जल अथवा अग्नि से पतित जीर्णगृहोद्धार श्रावण, कार्तिक और माघ मास में करने से गृह का सुख कर्त्ता को प्राप्त होता है।

देवालयं तडागश्च वाटिकोद्धरणं गृहम् ।
गृहमासोदितं शस्तं माघेऽपि मुनिसत्तम।।

देवालय, तालाब, बाग आदि का उद्धार कार्य गृहारम्भ के मासों में तथा माघ मास में करना शुभद होता है।

तृणदारूगृहारम्भे मास दोषो न विद्यते।
पाष्ज्ञाणेष्टयादिगेहानि निन्द्यमासे न कारयेत्।।
शस्तं पशुगृहं ज्येष्ठेचाश्विने धान्यनीडकम्।
पानीयशालिका माघे चैत्रे धारागृहं तथा ।।

तृण और दारू (काष्ठादि) के गृह निर्माण में माम शुद्धि आवश्यक नहीं पत्थल और ईट के गृह का निर्माण त्याज्य मासों नहीं करना चाहिए। ज्येष्ठ मास में पशुशाला आश्विन मास में धान्यभण्डार, माघ मास में पौशाला आदि का निर्माण, तथा जलधारा गृह का निर्माण चैत्र मास में करना चाहिए।

1.3.1 गृहारम्भ में पक्षशुद्धि का विचार -

शुक्लपक्षे भवेत्सौख्यं कृष्णे तस्करतो भयम्।

महर्षि वशिष्ठ का मत -

गीर्वाणपूवंगीर्वाणमन्त्रिणोर्दृश्यमानयो।
शुक्लपक्षेदिवाकायं न निर्माणञरात्रिषु।।

शुक्ल पक्ष में गृहारम्भ करने से सुख की प्राप्ति होती है। कृष्णपक्ष में गृह निर्माण से चोरी का भय रहता है।

गुरू शुक्र के उदित होने पर शुक्लपक्ष के दिन में गृहारम्भ करना चाहिए न कि रात्रि में।

यहाँ रात्रि शब्द से मध्य रात्रि के दो प्रहर मात्र ही ग्रहण करना चाहिए न कि सम्पूर्ण रात्रि। जैसा कि कहा भी है- 'महानिशा तु विज्ञेया मध्यमं प्रहरद्यम् ।' तथा-

अस्तदोषोऽपि नो ग्राहाय: पतिदैवसिको बुधै:।
नास्तदोष: सदा भानोर्मैत्रे चेन्दोर्ननीचता।।

गृहारम्भ में निषिद्ध तिथि -

दारिद्रयं प्रतिपत्कुर्याच्चतुर्थी धनहारिणी।
अष्टम्युच्चाटनी ज्ञेया नवमी शस्त्रघातिनी।।
आमायां राजभीतिस्याच्चतुर्दश्यां स्त्रिया: क्षय:।

प्रतिपदा तिथि में गृहारम्भ दरिद्रता, चतुर्थी में धनक्षय, अष्टमी में उच्चाटन, नवमी तिथि में शस्त्रादि से घात, अमावस्या में राजभय तथा चतुदंशी तिथि में गृहारम्भ करने से स्त्री की हानि होती है।

भृगुरपि-

रिक्ताष्टमीदर्शरवीन्दुभौमाविवर्जनीया बिदुषा प्रयत्नत:।

रिक्तातिथियाँ (4।9।14), अष्टमी, अमावास्या तिथियों तथा रवि, चन्द्र और भौम वारों को यत्नपूर्वक त्याग देना चाहिए ।

1.3.2 गृहारम्भ में नक्षत्र शुद्धि विचार -

चित्रानुराधामृगरेवतीषु स्वातौ च तिष्ये च तथोत्तरासु।
ब्राहयो धनिष्ठाशततारकासु गेहादिकारम्भणमानन्ति।।

चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, स्वाती, पुष्य,, उत्तरात्रय, रोहिणी, धनिष्ठा और शतभिष, इन नक्षत्रों में गृहारम्भ शुभद होता है।

चित्राशतभिषक्स्वाती हस्तः पुष्यपुनर्वसु ।
रोहिणीरेवतीममूल श्रवणोत्तरफाल्गुनी।।
धनिष्ठाचोत्तराषाढ़ा तथा भाद्रोत्तरान्विता।
वास्तु पूजनमेतेषु नक्षत्रेषु करोति यः ।
समाप्नोति नरो लक्ष्मीमिति प्राह पराशरः।।

चित्रा, शतभिषा, स्वाती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, रेवती, मूल, श्रवण उत्तराफाल्गुनी, धनिष्ठा, उत्तरापाढ, उत्तरभाद्रपद, अश्विनी, मृगशीर्ष तथा अनुराधा नक्षत्र में वास्तु पूजन करने वाला व्यक्ति लक्ष्मी को प्राप्त करता है ऐसा पराशर का मत है।

गर्ग ने भी ऐसा ही कहा है-

त्रयुत्तरेऽपि च रोहिण्यां पुष्ये मैत्रे करद्ये।
धनिष्ठादितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्यते।।

अन्य मत -

हस्तादित्यशशाङ्कपुष्यपवनप्राज्येशमित्रोत्तराः।
चित्राश्विश्रवणेषु वृश्चिकघटौ त्यवत्वा विरिक्तेतिथौ।।
शुक्राचार्यशनैश्चरज्ञशशिनो वारेऽनुकूले विधौ।
सभ्दिर्वेशमनि सूतिकागृहविधिः क्षेमंकरः कीतितः।।

हस्त, पुनवंसु, मृगशिर, पुष्य, स्वाती, रोहिणी, अनुराधा, उत्तरात्रय, चित्रा, अश्विनी और श्रवण नक्षत्र में, वृश्चिक और कुम्भ लग्न तथा रिक्ता तिथियों (4।9।14) को त्याग कर अन्यतिथियों में शुक्र, वृहस्पति, शनि, बुध और सोमवार को चन्द्रमा अनुकूल होने पर उपर्युक्त नक्षत्रों में गृहारम्भ या सूतिकागृह का निर्माण कल्याणकारक होता है।

वास्तुराजवल्लभ ग्रन्थ के अनुसार -

वास्तोः कर्मणि धिष्ण्यवारतिथयोऽश्विन्यत्तराणां त्रिकम् ।
हस्तादित्रयमैवत्रतोद्वयमिदं पुष्यो मृगो रोहिणी।।
निन्द्यौभूसुतभास्करौ च शुभदा पूर्णा च नन्दातिथिः।
तेषां वैधृतिशूलगण्डपरिघव्याघातवज्रा अपि।।

वास्तुकर्म में ग्राह्य नक्षत्र वार तिथियों को कहता हूँ। अश्विनी उत्तरात्रय, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, पुष्य, मृगशिर और रोहिणी ये शुभद है। रवि, भौम वार छोड़कर अन्य वारों में, नन्दा और पूर्णा (9।6।99।5।10।15) तिथियों में, वैधृति, शूल, गण्ड, परिघ, व्याघत और वज्रयोगों को छोड़कर अन्य योगों में वास्तु कर्म शुभद होता है।

अन्य मत -

विष्कुम्भव्यतिपातकौ च न शुभौ योगा: परेशोभना:।

शस्तं नागववाख्यतैतिलगरं युग्मां तिथिं वर्जयत् ।

मौहूर्त त्वथ विश्वमष्टनवमं पंचत्रिरागाद्रिकम् ।

श्रेष्ठं च दितयं तुलावृषघटौ युग्मं धनु: कन्यके।।

विष्कुम्भ और व्यातीयात योग को छोड़ अन्य योग शुभद हैं। नाग, बव, तैतिल, गर, करण भी श्रेष्ठ हैं। समतिथियों को त्याग देना चाहिए। 3।5।6।7।8।9।13। तिथियाँ तथा तुला, वृष, कुम्भ, मिथुन, धनु और कन्या लग्न श्रेष्ठ होती है।

मत्स्यपुराण के अनुसार -

वज्रव्याघातशूलेषु व्यतिपातातिगण्डयो:।

विष्कुम्भगण्डपरिघे चाष्टयोगे न कारयेत्।।

विश्वकर्मप्रकाश ग्रन्थ के अनुसार -

स्वातीमैत्रेऽथ माहेन्द्रे गान्धर्वे भगरोहिणे।

स्तम्भोच्छायादिकर्तव्यमन्यत्र परिवर्जयेत् ।।

स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, घनिष्ठा, पूर्वफाल्गुनी, रोहिणी, स्तम्भ की ऊचाई आदि कार्य करना चाहिए। अन्य नक्षत्रों में नहीं।

<u>1.3.3 गृहनिर्माण में लग्नशुद्धि विचार</u> -

द्वयङगेवा स्थिरभे च सौम्यसहिते लग्ने शुभैर्वीक्षिते।

सौम्यैर्वीर्यसमन्वितैश्च दशमे निमार्णमाहुर्बुधा:।।

तैर्वाधीनवकेन्द्रगै: सुफलदं पापैस्त्रिषष्ठायगै:।

क्रू रोहयष्टमसंस्थितोऽपि मरणं कुर्त्तुर्विधत्ते तराम् ।।

शुभ ग्रहों से युक्त या दुष्ट, स्थिर अथवा द्विस्भाव लग्न में वास्तुकर्म शुभ होता है। अथवा जिस लग्न से केन्द्र (1।4।7।10 भावों) में अथवा त्रिकोण (4/9 भाव) में शुभ ग्रह, और त्रिषडाय

(3/6/11 भाव) में पाप ग्रह स्थित हों उस लग्न में वास्तुकर्म शुभ होता है। अष्टमभाव यदि पापाक्रान्त हो तो गृहेश की मृत्यु होती है।

श्रीपति की सम्मति भी कुछ इसी प्रकार है-

द्यङगेस्थिरे वा भवने विलग्ने सौम्यग्रहैर्युक्तनिरीक्षिते च।
कर्मस्थितैर्वीययुतैश्चसौम्यैनिमाणमाहुर्भवनस्यसन्तः ।
पापैस्त्रिषडायगतैस्त्रिकोणे केन्द्राश्रितैस्साधुभिरालयस्य।
वदन्तिनिर्माणमिहाष्टमस्थः क्रुरस्तु कर्तुर्मरणं करोति।।

1.4 गृहनिर्माण में पंचांग शुद्धि विचार

रामदैवज्ञ के अनुसार -

भौमार्करिक्तामाघू ने चरोनाङ्गे विपंचके।
व्यष्टान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्रायारिगैः खलैः ।।

रवि और भौमवार, रिक्ता (4।9।14) अमावास्या और सप्तमी तिथियों, चरलग्न और वाणपंचक को छोड़कर अष्टम और द्वादश की शुद्धि हो, केन्द्र, त्रिकोण शुभान्वित हो त्रिषडाय पाप युक्त हो ऐसे लग्न में गृहारम्भ शुभद होता है।

गृहारम्भ में पंचक का परित्याग करने के लिए उक्त श्लोक में कहा गया है। परन्तु इससे पूर्व गृहारम्भ नक्षत्रों में धनिष्ठा, शतभिषा, उ0भा0 और रेवती नक्षत्रों का ग्रहण किया गया है। ऐसी स्थिति में इन नक्षत्रों के सम्बन्ध में सन्देह उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इसका समाधान करते हुए आचार्य ने प्रमिताक्षरा टीका में माण्डव्य ऋषि का वचन कहा है –

धनिष्ठा पंचके नैव कुर्यात् स्तम्भसमुच्छ्रयम्।
सूत्रधार शिलान्यास प्रकारादि समारभेत्।।

अर्थात् धनिष्ठा पंचक नक्षत्रों में स्तम्भारोपण तथा गृहाच्छादन निषेध है। परन्तु अन्य सभी कार्य किए जा सकते हैं।

गृहारम्भ में नक्षत्र और वार का फल –

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः सजीवै
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात्।
द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रै

वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात्।।

अर्थात् गुरु से युक्त पुष्य, ध्रुवसंज्ञक तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, श्रवण, आश्लेषा एवं पू0षा0, नक्षत्रों में तथा गुरुवार को आरम्भ किया गया गृह पुत्र और राज्य सुख को देने वाला होता है। शुक्र से युक्त विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा और आर्द्रा नक्षत्रों तथा शुक्रवार को आरम्भ किया गया गृह धन-धान्य को देने वाला होता है।

अन्य फल –

सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः।
कौजेऽह्निवेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात्।।
सज्ञैः कदास्रार्यमतक्षहस्तै
र्ज्ञस्यैव वारे सुखपुत्रदं स्यात्।।

भौम से युक्त हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पू0षा0, मूल नक्षत्रों में तथा मंगलवार को आरम्भ किया गया गृह अग्निभय एवं पुत्र को कष्ट देने वाला होता है। बुध से युक्त रोहिणी, अश्विनी, उ0फा0, चित्रा और हस्त नक्षत्रों में तथा बुधवार को निर्मित गृह सुख और पुत्र देने वाला होता है।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि गृहनिर्माण प्रत्येक मानव के भौतिक जीवन का अभिन्न हिस्सा है। मानवों के रहने का या निवास करने का स्थान को 'गृह' नाम से सम्बोधित किया जाता है। यद्यपि हम सब जानते है कि प्रत्येक जीव रहने हेतु स्वगृह निर्माण करता है परन्तु प्रमुखता के दृष्टिकोण से यहाँ हम केवल मानव जीवन से जुड़े वास्तुशास्त्रीय सम्बन्धित गृहनिर्माण का अध्ययन करेंगे। वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत हमारे प्राचीन ऋषियों ने गृहनिर्माण के पूर्व अनेक विचार उपस्थापित किये हैं। उन्हीं विचारों में से एक है - मासादि विचार। त्रिंशत् दिनात्मकं मासमेकम् अर्थात् ३० दिनों का एक मास होता है। आप सभी ने चैत्रादि द्वादश (१२) मासों का नाम अवश्य ही सुना होगा। इन मासों का हमें 'वैदिक नाम' भी वेदों में प्राप्त होता है। प्रमुखता एवं व्यावहारिक दृष्टिकोण से सौर मास एवं चान्द्रमास दो प्रकार के मासों का सर्वाधिक प्रचलन दिखलाई पड़ता है। सूर्य के द्वारा एक राशि (३० अंश) का भोग काल 'सौर मास' के नाम से जाना जाता है। अमान्ताद् अमान्तं यावत् चान्द्रमासः। अर्थात् एक अमान्त से दूसरे अमान्त पर्यन्त 'चान्द्रमास' होता है। चैत्रादि मास की गणना चान्द्रमास में ही होता है। महर्षि नारद जी के अनुसार पौष, फाल्गुन,

वैशाख, माघ, श्रावण, कार्तिक ये समस्त सौर मास गृह-निर्माण में पुत्र, पौत्र, आरोग्य आदि शुभ फल देने वाले होते हैं। अत: गृहारम्भ में इन मासों का ग्रहण करना चाहिए।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

संक्रान्ति - परिवर्तन

गृह – घर

सौर मास – सूर्य के द्वारा एक राशि भोग काल सौर मास कहलाता है।

चान्द्रमास – एक अमान्त से दूसरे अमान्त पर्यन्त चान्द्रमास होता है।

मास – चैत्रादि 12 मास होते हैं।

गृहारम्भ – गृह निर्माण का आरम्भ

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. ख
4. ख
5. ग
6. क

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वास्तुसार: – प्रोफेसर देवीप्रसाद त्रिपाठी

वृहद्वास्तुमाला – टीकाकार – डॉ. हरिशंकर पाठक

मुहूर्तचिन्तामणि – रामदैवज्ञ, टीकाकार – आचार्य रामचन्द्र पाण्डेय

वास्तुरत्नाकर -

1.9 सहायक पाठ्यसामग्री

वास्तुराजवल्लभ

मयमतम्

वास्तुप्रबोधिनी

मुहूर्तचिन्तामणि

वृहत्संहिता

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मास का परिचय दीजिये।
2. गृहारम्भ निर्माण में विविध मास विचार फल लिखिये।
3. मासादि विचार का मत-मतान्तर प्रस्तुत कीजिये।
4. गृहनिर्माण में पक्ष, मास एवं लग्नशुद्धि का प्रतिपादन कीजिये।
5. गृहनिर्माण में पंचांग शुद्धि विचार का लेखन कीजिये।

इकाई - 2 गृहद्वार विचार

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 गृह द्वार विचार

2.3.1 दिशाओं का द्वार फल विचार

2.3.2 द्वार वेध का फल

2.3.3 द्वार सम्बन्धित उपद्रव फल

2.3.4 द्वारस्थापन चक्र

2.3.5 द्वारस्थापन में तिथ्यादि निर्णय विचार

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. ज्योतिष, पंचम सेमेस्टर BAJY(N)-330 पाठ्यक्रम के द्वितीय खण्ड की द्वितीय इकाई 'गृहद्वार विचार' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहनिर्माण में मासादि विचार का अध्ययन कर लिया है। अब आप गृह निर्माण में द्वार का निर्णय कैसे करते है? इसका अध्ययन करने जा रहे है।

किसी भी गृह के निर्माण प्रक्रिया में 'द्वार निर्णय' का अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष होता है। द्वार किस दिशा की ओर होनी चाहिए। द्वार कैसा होना चाहिए। द्वार का दैर्घ्य-विस्तार कितना होना चाहिए। आदि –इत्यादि समस्त विषय गृहद्वार विचार के अन्तर्गत आते हैं।

आइए हम सब वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आचार्यों द्वारा प्रतिपादित 'गृह द्वार विचार' से सम्बन्धित विषयों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेगें कि –

- गृहद्वार किसे कहते है।
- गृहनिर्माण में द्वार का निर्णय कैसे किया जाता है।
- गृह द्वार का दैर्घ्य-विस्तार कितना होना चाहिए।
- द्वार का शुभाशुभ प्रभाव क्या होता है।
- वास्तुशास्त्र में गृहद्वार का निर्णय किस प्रकार किया गया है।

2.3 गृहद्वार विचार

वास्तुशास्त्र के प्रवत्तर्कों द्वारा गृहनिर्माण प्रक्रिया में द्वार का विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण बतलाया गया है। गृहद्वार का शुभाशुभ फल प्रत्यक्षतया गृहस्वामी पर पड़ता है। अतएव गृहनिर्माण परम्परा में आचार्यों ने गृहद्वार का महत्व प्रतिपादित किया है।

गृह का मुख्य द्वार कैसा होना चाहिए? किस दिशा में होना चाहिए? उसका दैर्घ्य- विस्तार कितना होना चाहिए? गृहनिर्माण में द्वार शुद्धि, नक्षत्र शुद्धि आदि इत्यादि समस्त विषयों का प्रतिपादन इस इकाई में आपके ज्ञानार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है। गृहस्य द्वारं गृहद्वारम्। सामान्यतया गृहद्वार का अर्थ होता है – घर का मुख्य द्वार। गृहद्वार के अध्ययनोपरान्त आप सभी को अनेक मत-मतान्तर भी देखने को मिलेंगे। तो आइए हम एक-एक उसका अध्ययन करते है।

विभिन्न राशि वालों के लिए गृह द्वार निर्णय –

पूर्वे ब्राह्मणराशीनां वैश्यानां दक्षिणेशुभम्।
शूद्राणां पश्चिमे द्वारं नृपाणामुत्तरेमतम्।।

ब्राह्मण राशि (कर्क, वृश्चिक, मीन) वालों के लिए गृह द्वार पूर्व में, क्षत्रिय राशि (वृष, कन्या एवं मकर) वालों के लिए उत्तर में, वैश्य राशि (मिथुन, तुला, कुम्भ) वालों के लिए दक्षिण में तथा शूद्र राशि (मेष, सिंह एवं धनु) वालों के लिए पश्चिम दिशा में गृह द्वार बनाना शुभ फल देने वाला होता है। राजाओं के लिए उत्तर दिशा में गृहद्वार बनाना उत्तम होता है।

आय परत्वेन द्वार निर्णय –

सर्वद्वारइहध्वजोवरूणदिग्द्वारं च हित्वा हरिः।
प्राग्द्वारो वृषभो गजो यम सुरेशाशामुखः स्याच्छुभः।।

अर्थात् ध्वज आय वाले गृह में सभी दिशाओं में द्वार रखना शुभद होता है। सिंह आय के लिए पश्चिम से इतर दिशाओं में, वृष आय के लिए पूर्व दिशा में, गज आय के लिए पूर्व और दक्षिण दिशाओं में द्वार शुभ होता है।

वर्णायपरत्वेन गृहद्वार निर्णय –

ध्वजे प्रतीच्यां मुखमग्रजानामुदंगमुखं भूमिभृतां च सिंहे।
विशोवृषे प्राग्वदनं गजेतु शूद्रस्य याम्यां हि समामनन्ति।।

ब्राह्मण वर्ण और ध्वज आय वाले गृह में पश्चिम की ओर, क्षत्रिय वर्ण और सिंह आय के लिए उत्तर दिशा में, वैश्य वर्ण और वृष आय के लिए पूर्व दिशा में और शूद्रवर्ण और गज आय के लिए दक्षिण दिशा में गृह द्वार करना शुभफलदायी है।

गृह द्वार लम्बाई और चौड़ाई में ही बनाना उत्तम होता है। कोणों में द्वार नहीं बनाना चाहिए। वह अशुभ फलदायी होता है। जैसा कि कहा भी है –

द्वारमायातः कार्यं पुत्रपौत्रधनप्रदम्।
विस्तारकोणं द्वारं यद् दुःखशोकभयप्रदम्।।

दीवार के मध्य में द्वार बनाना आचार्यों द्वारा निषेध किया गया है। साथ ही द्वार के उपर भी द्वार नहीं बनाना चाहिए। यथा – **भित्तिमध्ये कृतं द्वारं द्रव्यधान्यविनाशनम्। आवहेत् कलहं शोकं नारीर्वा सम्प्रदूषयेत्।।** **द्वारस्योपरयिद्द्वारं द्वारं द्वारस्यसम्मुखम्।**
न कार्यं व्ययदं यच्च संकटं तद्दरिद्रकृत्।।

माण्डव्य के मतानुसार द्वारस्थापन -

नवभागं गृहं कृत्वा पंचभागं तु दक्षिणे।
त्रिभागमुत्तरे गृहं कार्यं शेषं द्वारं प्रकीर्तितम्[1] ॥

घर के जिस भाग में दरवाजा बनाना हो उस भाग में 9 का भाग देकर पाँच भाग दक्षिण और तीन भाग उत्तर में छोड़कर अवशिष्ट भाग में द्वार रखना चाहिए।

विशेष- यहाँ वाम, दक्षिण भाग मकान से निकलते समय का लेना चाहिए। कहा है 'दक्षिणाङ्.ग: सर्वै प्रौक्तो मन्दिरान्निःसृते सति। यो भूयाद्दक्षिणे भागे वामे भूयात्स वामग इति'।

नवगुणसूत्रविभक्तान्यष्टगुणेनाथवा चतुषष्टेः।
द्वाराणि यानि तेषामनलादीनां फलोपनयः[2] ॥

81 पद वास्तु में चारों दिशाओं में 9 - 9 कोष्ठक होते हैं, लेकिन 64 पद में 8 -8 कोष्ठक रहते हैं। दोनों ही परिस्थितियों में 8 द्वार एक दिशा में हो सकते हैं। तब चारों दिशाओं में 8×4=32 द्वार हो सकते हैं। घर में जिस देवता के स्थान पर दरवाजा हो उसका फल आगे के श्लोक में बताया जा रहा है।

2.3.1 दिशाओं का द्वार फल विचार -

पूर्वद्वार फलम्

अनिलभयं स्त्रीजन्म प्रभूतधनता नरेंद्रतो लब्धिः।
क्रोधाधिकत्वमनृतं क्रौधं चौर्य क्रमात्पूर्वे[3] ॥

पूर्व दिशा के प्रथम दरवाजे का नाम शिखि होता है, इसमें दरवाजा रखने पर वायु का भय होता है। दूसरे का पर्जन्य, इसमें बनाने पर कन्या का जन्म होता है। तीसरे का नाम जयन्त होता है इसमें दरवाजा रखने पर धन की अधिकता होती है। चौथे का नाम इन्द्र है, इसमें रखने पर राजप्रियता होता है। पाँचवें का नाम सूर्य हाता है इसमें बनाने पर क्रोध की अधिकता होती है। छठे का नाम सत्य होता होता है। इसमें इसमें असत्यता, सातवें का नाम भृश होता है, इसमें क्रुरता और आठवें का नाम अन्तरिक्ष होता है उसमें दरवाजा बनाने पर चोरी होती है।

---

1. वास्तुप्रदीपे। ज्यो. नि. 172 पृ. 10 श्लो.।
2. बृ. सं. 52/69
3. तत्रैव श्लो. 70

वृहत्संहिता ग्रन्थ में प्रतिपादित गृहद्वार फल

दक्षिण द्वार फल -

अल्पसुतत्वं प्रैष्यं नीचत्वं भक्ष्यपानसुतवृद्धिः।
रौद्रं, कृतघ्नमधनं सुतवीर्यघ्नं च याम्येन ।।

दक्षिण में अनिल पद में द्वार हो तो कम पुत्र, पूषा पद में हो तो दासभाव, वितथ में हो तो नीच कर्म व नीच आचरण, वृहत्क्षत पर हो तो अन्न की बहुतायात व पुत्र वृद्धि, यम पर हो तो अशुभ, गन्धर्व पर हो तो कृतघ्नता, भृंगराज पर हो तो निर्धनता और मृग पर हो तो पुत्र की शक्ति का ह्रास होता है।

पश्चिमद्वारफलम्

सुतपीडा रिपुवृद्धिर्न सुतधनाप्तिः सुतार्थफलसम्पत्।
धनसम्पत्तिनृपतिभयं धनक्षयो रोग इत्यपरे ।।

पितर पद द्वार हो तो पुत्रों का कष्ट, दौवारिक पद हो तो शत्रु वृद्धि, सुग्रीव पद में द्वार हो तो धन व पुत्र वृद्धि, पुष्पदन्त में द्वार हो तो सुतार्थफल, वरूणपद में हो तो धनाप्ति असुर पद हो तो राजभय, शोष पद हो तो धन नाश तथा पापयक्ष्मा पद में द्वार हो तो रोगभय होता है।

उत्तरद्वारफलम्

वधबन्धो रिपुवृद्धिः सुतधनलाभः समस्तगुणसम्पत्।
पुत्रधनाप्तिर्वैरं सुतेन दोषाः स्त्रिया नैःस्वम् ।।

उत्तर दिशा में रोग पद पर द्वार हो तो मृत्यु बन्धन, सर्पपद में द्वार हो तो शत्रु वृद्धि, मुख्य पद में द्वार हो तो धन व पुत्र का लाभ, भल्लाट पद द्वार हो तो सब गुण व सम्पत्तियाँ, सोम पर द्वार हो तो पत्र से द्वेष, चरक पद पर द्वार हो तो सुत दोष अदिति पद में द्वार हो तो स्त्री द्वारा कष्ट, दिति में द्वार हो तो निर्धनता होती है।

तुला, मेष, वृष, वृश्चिक राशि के सूर्य में दक्षिण, उत्तर दिशा में दरवाजे का मुख रखना चाहिए। इसके विपरीत राशियों के सूर्य में मीन-धनु-कन्या में जो मकान बनता है वह बुद्धिहीन रोग व शोक युक्त होता है।

महर्षि गर्ग के मत से द्वार नक्षत्र -

कृत्तिकाभगमैन्द्रं च विशाखा च पुनर्वसुः।

तिष्यो हस्तस्तथाऽऽद्रां च क्रमात् पूर्वेषु निर्दिशेत्।।
चित्रा विशाखा पौष्णं च नैर्ऋतं यमदैवतम्।
वैश्वदेवाश्विनं मैत्रं क्रमाद् दक्षिणसंश्रितम्।।
पि यं प्रोष्ठपदार्यम्णमाषाढं च द्विदैवतम्।
वारूणाश्विनसावित्रं क्रमात् पश्चिम संश्रितम्।।
स्वात्याश्लेषाभिजित्सौम्यं वैष्णवं वासवं तथा।
याम्यं ब्राह्मं क्रमात् सौम्यद्वारेषु च विनिर्दिशेत्।।

पूर्व दिशा में ईशान से चलकर प्रदक्षिण क्रम से कृत्तिका, पू. फा., ज्येष्ठा विशाखा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, आर्द्रा ये पूर्व दिशा के द्वार नक्षत्र हैं। चित्रा, विशाखा, रेवती, मूल, भरणी, उ. षा., अश्विनी, अनुराधा ये दक्षिण दिशा के द्वार नक्षत्र हैं। मघा, उ. भा. उ. फा. उ. षा. विशाखा, शतभिषा, अश्विनी, हस्त, ये पश्चिम दिशा के द्वार नक्षत्र हैं। स्वाती, श्लेषा, अभिजित्, मृगशिरा, श्रवण, ज्येष्ठा, भरणी, रोहिणी ये उत्तर दिशा के द्वार नक्षत्र हैं। द्वार नक्षत्र व गृह स्वामी से चन्द्रमा व तारा की अनुकूलता देखकर द्वार निश्चिय करना चाहिए। आय का विचार (ध्वजादि) भी आवश्यक है।

2.3.2 द्वारवेध का फल -

मार्गतरूकोणकूपस्तम्भभ्रमविद्धमशुभदं द्वारम्।
उच्छ्रायाद् द्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय ।।

दरवाजे के सामने मार्ग (सीधा Vertical गलियारा), पेड़, कोना, कुआँ, खम्भा, पानी निकलने का स्थान (नाली) हो तो अशुभ होता है। लेकिन दरवाजे की ऊँचाई से दुगनी दूरी पर उक्त चीजें हों तो वेध दोषकारक नहीं माना जाता है। यह दूरी भवन की ऊँचाई की दुगनी न होकर दरवाजे की ऊँचाई से दुगनी होनी चाहिए।

नारायण मत में -

कोणाध्वभ्रमकूपकर्द - मतरूद्वास्तंभदेवेक्षितं।
सद्मोच्चं द्विगुणाधिकांतरभवे वेधे न दोषः किल।।

मार्ग, भ्रम (कुलाल चक्रादि), कुआ, कीचड़, वृक्ष द्वारन्तर, खम्भा, देवमन्दिर से विद्ध घर का मुख नहीं बनाना चाहिये और घर की ऊँचाई से दूगनी दूरी होने पर ये दोष दाता नहीं होते हैं।

द्वारोच्छ्रायद्विगुणितां भूमिं त्यक्त्वा बहिः स्थितः।

न दोषाय भवेद्वेधो गृहस्य गृहिणोऽथवा ।।

द्वार की ऊँचाई से द्विगुणित भूमि को छोड़कर बाहर की भूमि पर द्वारवेध नहीं होता है। वेध से तात्पर्य ठीक सामने होने से है। दरवाजे के सामने खड़ी रेखात्मक स्थिति हो तो गली, नाली आदि वेध दोषकारक होती है।

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषदं तरूणा।
पड्.कद्वारे शोको व्ययोऽम्बुनिःस्त्राविणि प्रोक्तः।।
कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे।
स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्रह्मणाभिमुखे ।।

गलियारे से वैध हो तो गृहस्वामी के लिए विनाश कारक। पेड़ से वैध हो तो घर के बालकों के लिए दोष कारक, कीचड़ व पानी के स्थान से वैध हो तो शोक कारक तथा नाली का वेध हो तो खूब धन व्यय होता है। कुआँ हो तो मानसिक अस्थिरता, मिर्गी आदि। दरवाजे के ठीक सामने देव प्रतिमा हो तो गृहस्वामी का विनाश। खम्बा हो तो स्त्रियों के लिए दोष कारक। ब्रह्मा स्थान (भीतर से) या बाहर ब्रह्मा की प्रतिमा से वेध हो तो कुलनाश होता है।

2.3.3 द्वारसम्बन्धित उपद्रव फल -

उन्मादः स्वयमुद्घाटितेऽथ पिहिते स्वयं कुलविनाशः।
मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनमेव नीचे च ।।
द्वारं द्वारस्योपरि यत्तत्र शिवाय सड्.कटं यच्च।
आव्यात्तं क्षुद्रयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति।।
पीडाकरमतिपीडितमन्तर्विनतं भवेदभावाय।
बाह्यविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभिः पीडा।।

घर के दरवाजे बिना किसी ज्ञात कारण के ही स्वयं खुलने लगें तो उन्माद (मानसिक विकार) स्वयं बन्द होने लगें तो कुल का नाश होता है। मान या नाप से अधिक हों तो राजपक्ष से भय तथा नाप से कम हो तो चोरभय, विपत्ति व दुःख होता है। दरवाजे के ठीक उपर अन्य दरवाजा हो तो शुभ नहीं होता है। कम चौड़ा दरवाजा भी अशुभ होता है। बहुत चौड़ा या खड़ी हुई ढोल के समान द्वार हो तो भुखमरी, तिरछा या झुका हुआ द्वार हो तो वंश नाशक होता है। दरवाजे के उपर शिरोदल के पास वाला भाग अर्थात् देहली के ठीक विपरीत चौड़ाई वाला भाग अधिक भारी या चौड़ा हो तो पीड़ा कारक, घर में भीतर की ओर झुका द्वार हो तो सब प्रकार से धन-जन की हानि, बाहर की ओर

झुका हो तो अधिक प्रवास, जिस दिशा में लगा हो, उससे भिन्न दिशा में झुकाव हो या खुलता हो तो दस्यु भयकारक होता है।

द्वार सज्जा –

मूलद्वारं नान्यैर्द्वारैरभिसन्दधीत रूपद्धर्या।
घटफलपत्रप्रमथादिभिश्च तन्मंगलैश्चिनुयात्।।

प्रधान द्वार के रूप व सौन्दर्य के समान घर के शेष द्वारों को न बनायें। मुख्य द्वार को कुम्भ, फल, पल्लव, शिव गण, नारिकेल, लता, हंस आदि की प्रतिकृतियों से सुसज्जित करना चाहिए।

दैर्घ्ये नवांशा: पदमत्र सव्याद्
द्वारं शुभं प्राक्त्रिचतुर्थभागे।
चतुर्थषष्ठे दिशि दक्षिणस्यां।
पश्चाच्चतु: पंचमके तथोदक्।।

सामूहिक द्वार की व्यवस्था में दीर्घ या जिस दिशा में द्वार करना हो, उसके विस्तार में नव भाग करके पूर्वादि दिशा क्रम से द्वार किया जाय, पूर्व में तीसरे-चौथे भाग, दक्षिण में चौथे-छठवें, उत्तर व पश्चिम में चौथे- पाँचवें भाग में द्वार शुभ होता है।

मय मत में द्वार वेध –

ब्रह्मस्थाने तु विद्धेन नागदन्तस्थलानि च।
मृद्दारूभिर्गवाक्षैश्च खातमार्गैस्तथैव च।।
द्वारैश्च भित्तिभिश्चैव मध्यभागै: कथंचन।
स्वामिनो मरणं तत्र दु:खं स्यादुत्तरोत्तरम्।।

अर्थात् ब्रह्मस्थान से वेध नहीं होना चाहिए (मध्य भाग का द्वार ब्रह्म वेध होता है)। नागदन्त (खूँटी आदि के स्थानों से), मृत् (मिट्टी की ढेरी), वृक्ष, जंगला, खाता गड्ढा, रास्ता, द्वार, भित्ति के वेध से गृहस्वामी की मृत्यु व उत्तरोत्तर दु:ख बढ़ता जाता है, ब्रह्मस्थान से देवस्थान का ग्रहण उचित है, क्योंकि दूसरे पद्य में मध्य भाग से विस्तार-दीर्घ के बीच का भाग ग्रहण है।

अथ द्वारवेधफलम् -

मार्गतरूकोणकूपस्तम्भभ्रमविद्धमशुभदं द्वारम्।
उच्छायाद्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय ।।149।।

मार्ग, वृक्ष, कोण, कूप, स्तम्भ, चक्र, आदि से वेधित द्वार अशुभ होता है। किन्तु आवश्यक होने पर द्वार से द्विगुणित ऊँचाई के अन्तर पर बनाने से वेध दोष नहीं होता है।

विशेष फल -

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषद तरूणा।
पङ्कद्वारे शोकोव्ययोऽम्बुनिःस्त्राविणिप्रोक्तः।।
कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे।
स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्राह्मणाभिमुखे।।

मार्ग से विद्ध द्वार स्वामी का नाश करता हैं, वृक्ष से विद्ध द्वार गृहे के बालकों को कष्ट देता है, पंक्ति से विद्ध द्वार होने से शोक देता है, जलनिर्गम नाली आदि से विद्ध होने पर द्वार घनक्षय कराता है; कूयें से विद्ध होने पर अपस्मार मृगों रोग देता है, देवविग्रह से विद्ध द्वार विनाशक होता है। स्तम्भविद्ध द्वार स्त्री को दुराचारिणी बनाता है। और ब्राह्मण से विद्ध होने पर कुल का नाश करता है।

बोध प्रश्न : -

1. ब्राह्मण राशियाँ कौन-कौन सी है?
   क. कर्क, वृश्चिक, मीन ख. वृष, कर्क, मीन ग. तुला, धनु, कुंभ घ. मेष, मिथुन, सिंह
2. ब्राह्मणों के लिए गृह द्वार किस दिशा में रखना उत्तम होता है?
   क. पूर्व में ख. पश्चिम में ग. उत्तर में घ. दक्षिण में
3. राजाओं के लिए गृह द्वार किस दिशा में रखने को बतलाया गया है?
   क. उत्तर ख. दक्षिण ग. पूर्व घ. पश्चिम
4. 'अश्विनी' किस दिशा का द्वार नक्षत्र है?
   क. पश्चिम ख. दक्षिण ग. पूर्व घ. उत्तर
5. द्वार के उपर द्वार बनाना कैसा होता है।
   क. शुभाशुभ ख. शुभ ग. अशुभ घ. कोई नहीं
6. पश्चिम दिशा में सुग्रीव पद पर द्वार हो तो क्या फल होता है।
   क. पुत्र व धन लाभ ख. रोग ग. दुःख घ. मान वृद्धि

अन्य भी -

उन्मादः स्वयमुद्घाटितऽथपिहिते स्वयं कुलविनाशः।
मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनमेव नीचे च।।
द्वार द्वारस्योपरि यत्तन्न शिवाय संकट यच्च।।
आव्यात्तं क्षुद्रयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति।।
पीडाकरमतिपीडीतमन्तविंनत भवेदभावाय।
वाहायविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभिः पीडा।।

गृह का द्वार यदि स्वयमेव खुल जाता हो तो वह उन्माद कारक होता है। यदि स्वयं बन्द हो जाता हो तो कुल का नाश करने वाला होता हैं। द्वारमान से अधिक द्वारहो तो राजभय और मान से कम होने पर चौरभय और व्यसन कारक होता है।

द्वार के ऊपर द्वार हो तो वह विपत्ति कारक होता है। कपाटों की मोटाई अधिक अथवा अल्प हो तो वह क्षुधा और पीड़ा कारक होता है। यदि कपाट टेढ़ा हो तो कुल विनाशक होता है। यदि कपाटों मे जोड़ हो तो वह गृहेश को पीड़ा देता है। गृह के भीतर की ओर यदि कपाटों का झुकाव हो तो गृहेश को मारता है। बाहर की ओर यदि झुका हो तो वह प्रवासी बनाता हैं।अन्य दिशा में झुकाव होने से चौरभय होता है।

विशेषः -

मूलद्वारं नान्यंद्वारैरभिसन्दधीत रूपद्धर्या।
घटफलपत्रप्रमथादिभिश्र तन्मड.गलैश्चिनुयात् ।।

प्रधान या मुख्य द्वार जैसा अन्य द्वार नहीं बनाना चाहिए (अर्थात अन्य- द्वारा की सजावट मुख्य द्वार से हीन होनी चाहिए।) घट, फल, पत्र लतादि, सिंहादि (भित्ति चित्रों से) से मुख्य द्वार को ही अलड्.कृत करना चाहिए।

अन्यः -

पृष्ठतः पार्श्वयोर्वापि न वेधं चिन्तयेद्बुधः।
प्रासदेवा गृहे वापि वेधमग्रे विनिर्दिशेत ।।
प्रथमान्त्ययामवर्ज्य द्वित्रिप्रहरसम्भवा।
छायावृक्षद्वयादीनां सदादुःखप्रदायिनी ।।

प्रासाद अथवा गृह के पृष्ठ और पार्श्व भाग में वेध नहीं होता (सम्मुख ही वेध होता है)। प्रथम और अन्तिम प्रहर को छोड़कर द्वितीय और तृतीय प्रहर में (गृह के पास लगाये गये वृक्षों की)

छाया यदि गृह पर पड़ेतो वह कुल को कष्टकर होती है।

नव भागं गृहंकृत्वा पंचभागं तु दक्षिणे।
त्रिभागमुत्तरे कार्यं शेषं द्वारं प्रकीर्तितम् ।।

गृह के जिस भाग में (गृह की लम्बाई अथवा चौड़ाई में) में द्वार बनाना हो उसके नव समान खण्ड कर दाहिनी ओर से पाँच खण्ड छोड़कर छठे खण्ड में द्वार बनाना चाहिए।

दक्षिण और वाम भाग के निर्णयार्थ वास्तुराजवल्लभ में यह मानक निर्धारित किया है-

दक्षिणाङ्ग: स वै प्रोक्तो मन्दिरान्नि:सृते सति।
यो भूयादक्षिणे भागे वामे भूयात्स वामग:।।

गृह से निकलते समय दाहिने हाथ की ओर दाहिना भाग और बायें हाथ की ओर वाम भाग होता है।

नवगुणसूत्रविभक्तान्यष्टगुणेनाऽथवा चतु: षष्ठे।
द्वाराणि यानि तेषामनलादीनां फलोपनय:।।
अनलभयं स्त्रीजननं प्रभूतधनतां नरेन्द्रवाल्लभ्यम् ।
क्रोधपरता नृतत्वं क्रौर्यं चौर्यं च पूर्वेण ।।
अल्पसुतत्वं प्रैष्यं, नीचत्वं भक्ष्यपानसुतवृद्धि:।
रौद्रं कृतघ्नमधनं सुतवीर्यघ्नं च याम्येन।।
सुतपीडारिपुवृद्धिर्नसुतधनाप्ति: सुतार्थफलसम्पत्।
धनसम्पन्नृपतिभयं धनक्षयो राग इत्परे।।
बधवन्धोरिपुवृद्धि: सुतधनलाभ: समस्तगुणसम्पत्।
पुत्रधनाप्तिर्वैरं सुतेन: दोषा: स्त्रियां नै:स्वम्।।

नव गुणित सूत्र में विभाजित कर 69 पद में अथवा अष्टगुणित सूत्र से 64 पद में शिखि आदि देवताओं के विभाग होते हैं। उनमें द्वार बनाने के फल कहते हैं।

पूर्व दिशा में प्रथम शिखि भाग में द्वार बनाने से अग्निभय 2- पर्यन्त भाग में द्वार बनाने से कन्याओं का जन, 3- जयन्त भाग में द्वार बनानेसे प्रचुर धन लाभ, 4- इन्द्र के भाग में द्वार बनाने से राजकृपा, 5- सूर्य भाग में द्वार बनाने से क्रोधाधिक्य, 6- सत्य भाग में द्वार बनाने से झूठ की अधिकता, 7- भृश भाग में द्वार बनाने से क्रुरता, 7- आकाश भाग में द्वार करने से चौरभय होता है।

दक्षिण दिशा में 1- वायु भाग में द्वार बनाने से सन्तति की अल्पता, 2- पूषा या पौष्ण भाग में द्वार बनाने से दास वृत्ति, 3- वितथ भाग में द्वार बनाने से नीच वृत्ति, 4- वृहत्क्षतभाग में द्वार बनाने से भक्ष्य, पान और पुत्रों की वृद्धि होती है। 5- यम के भाग में द्वार बनाने से अशुभ फल की प्राप्ति, 6- गंर्धव के अंश में द्वार बनाने से कृतघ्नता, 7- भृड.गराज के भाग में द्वार करने से दारिद्रय, 8- मृग के भाग में द्वार बनाने से सन्तति और पराक्रम की हानि होती है।

पश्रिम दिशा में 1- पितृ भाग में द्वार बनाने से संतति कष्ट, 3- दौवारिक में बनाने से शत्रुओं की वृद्धि, 3- सुग्रीव भाग में द्वार बनाने से धन और पुत्र की अप्राप्ति, 4- कुसुमदन्त नामक भाग में बनाने से पुत्रादि तथा धनधान्य की अभिवृद्धि, 5- वरूण भाग में बनाने से धन प्राप्ति, 6- असुर भाग में बनाने से राजभय, 7- शोष भाग में बनाने से धनक्षय 8- पाप पक्षमा भाग में बनाने से रोगादि का भय होता है।

उत्तर दिशा में 1- रोग भाग में द्वार बनाने से वध और बन्धन की प्राप्ति होती है। 2- सार्प भाग में द्वार बनाने से शत्रुवृद्धि 3- मुख्य भाग में द्वार बनाने से धनलाभ 4- भल्लाट भाग में द्वार बनाने से गुण और सम्पत्ति का लाभ 5- सौम्य भाग में बनाने से पुत्र धन की वृद्धि, 6- भौजड.ग नामक भाग में द्वार बनाने से पुत्र से विरोध, 7- आदित्य भाग में द्वार बनाने से स्त्री को कष्ट 8- दिति भाग में द्वार बनाने से निर्धनता होती है।

द्वात्रिंशद् (३२) द्वारों का शुभाशुभत्व –

पूर्व

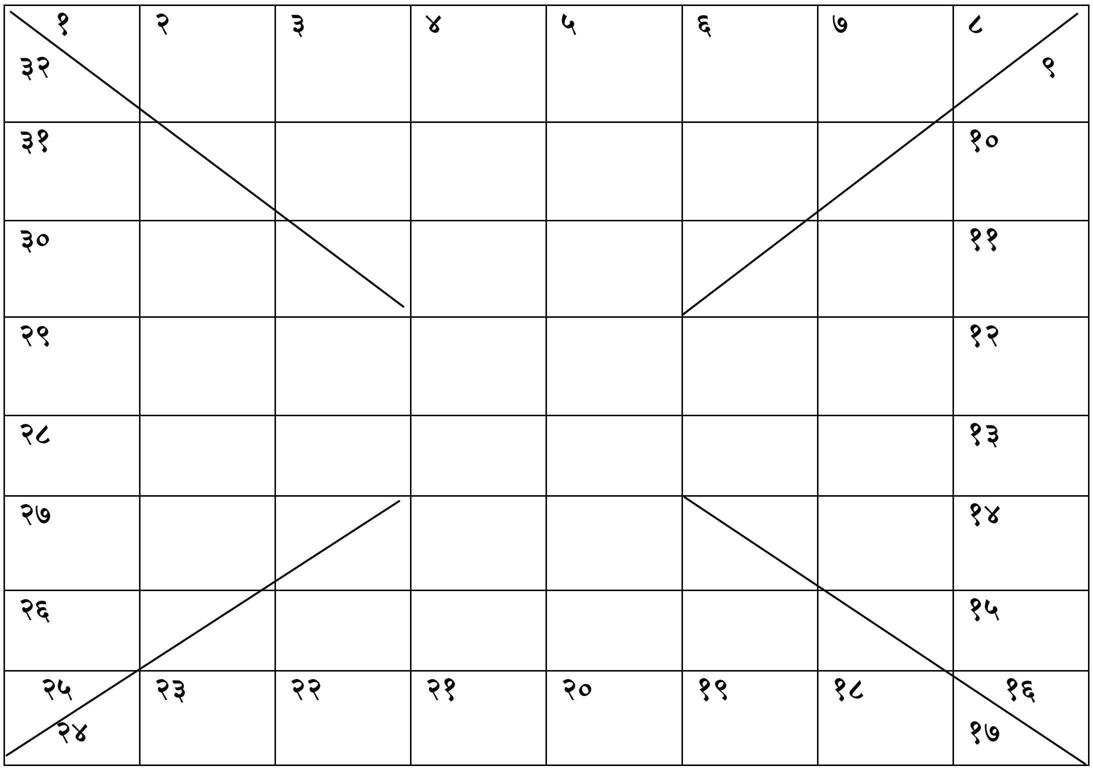

पश्चिम

उपर ३२ द्वारों का क्रमश: फल कहा गया है। जैसे कि पूर्व में प्रथम शिखि भाग में द्वार बनाने से भय २ में पर्यन्त भाग में द्वार बनाने से कन्या संतति, ३ जयन्त भाग में प्रचुर धन लाभ आदि समस्त फल, स्पष्ट है आप सभी समझ ही गये होंगे। उपर क्षेत्र में दाहिनें ओर दक्षिण तथा बायें और उत्तर दिशा ग्रहण करना चाहिए।

उपर्युक्त संदर्भ में निम्न बचन भी द्रष्टव्य है-

पूर्वाण्यैशान्यां याम्याग्नेरययां दक्षिणानिजानीयात् ।
द्वाराणि नैर्ऋतात पश्चिमान्युदक्स्थानिवायव्याम्।।
आग्नेयमग्निभयं पार्जन्यंस्त्रीप्रसूतिदं द्वारम् ।
प्रचुरधनदं जयन्तं नृपवल्लभकारि माहेन्द्रम् ।।
शौर्येक्रोध: प्रचुर: सत्यऽनृतवादितं भृशेकौर्यम् ।

चौर्यं तथान्तरिक्षे प्राग्द्वाराणि प्रदिष्टानि ।।
वायव्येऽल्पसुतत्वं प्रैष्यं पीष्णेऽथनीचता वितथे ।
बह्नत्रपानपुत्रं वृहत्क्षते याम्यापि रौद्रम् ।।
गान्धर्वे गन्धलं नृपचौर्यभयाय भृंगराजाख्यम् ।
मृगमपि सुतवीर्यघ्नं दक्षिणतो द्वारनिर्देश: ।।
पित्रये शरीरपीडा दौवारिकसंज्ञिते च रिपुवृद्धि:।।
सुग्रीव धनहानि: पुत्रधनाढयं कुसुमदन्तम् ।
वारूणमर्थ निचयदं नृपभयदं चासुर विनिर्दिष्टम् ।
शोषं धनहानिकरं बहुरोगं पापयक्ष्माख्यम् ।।
रोगमखं बधबन्धदमात्मजवैराभिवृद्धिदं नागम् ।
मुख्यं धनसुतवृद्धिदमनेककल्याणदं च भल्लाटम् ।।
सौम्यं धनपुत्रकरं भौजड.गे पुत्रवैररिपुवृद्धि:।
अदितौ स्त्रीदोषा: स्युर्दितौ धनं सक्षयं याति।।

2.3.4 द्वार चक्रम् -

सूर्यर्क्षाद्युगभै:शिरस्यथफलं लक्ष्मीस्तत: कोणभै-
र्नागैरूद्वसनं ततो गजमितै: शाखासु सौख्यं भवेत् ।
देहल्यां गुणभैर्मृतिर्गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभै:
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयंशुभम् ।।

सूर्य नक्षत्र से गिनकर 4 नक्षत्र शिर में उसके बाद के 8 नक्षत्रों को कोणों में अगले 8 नक्षत्र शाखा में, 3 नक्षत्र देहली में, और पुन: 4 नक्षत्र मध्यभाग में स्थापित करना चाहिए। शिर, शाखा और मध्य के नक्षत्रो में द्वार स्थापन करने से लक्ष्मी प्राप्ति ओर सुख की प्राप्ति होती है। कोण और देहली में पड़ने वाले नक्षत्रों में क्रमश: उद्वास और मृत्यु होती है।

स्पष्टार्थ द्वार चक्रम्

स्थान	शिर	कोण	शाखा	देहली	मध्य
नक्षत्र सं0	4	8	8	3	4
फल	लक्ष्मी प्राप्ति	उद्वास	सौख्य	मृति	सौख्य

मुहूर्त कल्पद्रुम में भी इसी प्रकार का वचन उपलब्ध है।

सूर्यर्क्षाघ्गनागाष्टगुणवेदैः शुभाशुभम्।

शिरः कोणद्वारशाखादेहली मध्यगैः क्रमात्।।

ज्योतिर्निबन्धकार के अनुसार-

द्वारचक्रं प्रवक्ष्यामि भाषितं विश्वकर्मणा।

सूर्यभाद्रं चतुष्कं तु शिरस्योपरि विन्यसेत्।।

द्वे द्वे कोणे प्रदातव्ये शाखायुग्मे द्वयं द्वयम्।

अधश्च त्रीणि देयानि वेदामध्ये प्रतिष्ठिता।।

राज्यं स्यादूर्ध्वनक्षत्रे कोणेषूद्वासनं भवेत्।

शाखायां लभतेलक्ष्मी अधश्चैव मृतिं भवेत्।।

मध्यभेषु लभेत्सौख्यं चिन्तनीयं सदा बुधैः।।

अन्य वचन भी द्रष्टव्य है -

दिनकरकिरणा क्रान्तर्क्षतोद्वारचक्रे युगयुगयमवेद द्वि द्वि वेदद्विरामै।

मित्रमुडुगणभागं विन्यसेदूर्ध्वतोन्तनियममखिलदिग्गं नाप्य: कधोणभंसत्।।

द्वारस्थापनम् -

द्वारस्थापननक्षत्राण्युच्यन्तेऽश्विनिचोत्तराः।

स्वातौ पूष्णि च रोहिण्यां द्वारशाखावरोपणम्।।

अश्विनी, उत्तरात्रय, स्वाती, रेवतो, रोहिणी, ये नक्षत्र द्वारस्थापन के लिये शुभद होते हैं।

मतान्तर-

अश्विनी चोत्तरा हस्तपुष्यश्रुतिमृगेषु च।

रोहिण्यां स्वातिभेऽन्त्ये च द्वारशाखां प्ररोपयेत्।।

इस मत से अश्विनी, उत्तरात्रय, हस्त, पुष्य, श्रवण, मृगशिर, रोहिणी, और रेवती द्वारस्थापनार्थ प्रशस्त नक्षत्र हैं।

2.3.5 द्वारस्थापन में तिथ्यादि निर्णयः -

पंचमी धनदा चैव मुनिनन्दवसौ शुभम्।

प्रतिपत्सु न कर्तव्यं कृते दुःखमवाप्नुयात्।।

द्वितीयायां द्रव्यहानिः पशुपुत्रविनाशनम्।

तृतीया रोगदा ज्ञेया चतुर्थी भङ्.कारिणी।।

कुलक्षयं तथा षष्ठी दशमी धननाशिनी।

विरोधकृदमापूर्णा न स्याच्छाखावरोपणम्।।

पंचमी में द्वार संस्थापन करने से धन लाभ, सप्तमी, अष्टमी तथा नवमी तिथियो में द्वार स्थापन शुभद होता है। प्रतिपदा में द्वार स्थापन से कष्ट होता है। द्वितीया में द्रव्यहानि और पशु हानि तृतीया तिथि में रोग और चतुर्थी में द्वारस्थापन करने से विग्रह, षष्ठी तिथि में द्वार स्थापन करने से कुल का नाश होता है। दशमी तिथि में स्थापन करने से धन का नाश होता है। अमावस्या और पूर्णिमा तिथियों में द्वारस्थापन करने से विरोध होता है। अत: अशुभ तिथियों में द्वारशाखा आदि का स्थापन नहीं करना चाहिए।

मूहूर्तमुक्तवल्याम् ग्रन्थ में -

भवेत्पूष्णी मैत्रेच पुष्ये च शाक्रे करेदस्त्रचित्रानिलौचादितौ च।
गुरूश्चन्द्रशुक्रार्कसौम्ये च वारे तिथौ नन्दपूर्णाजयाद्वारशाखा।।

रेवती, अनुराधा, पुष्य, ज्येष्ठा, हस्त, अश्विनी, चित्रा, स्वाती, और पुनर्वसु नक्षत्रों में, रवि, सोम, बुध, बृहस्पति और शुक्रवारों में, नन्दा (1।6।11), पूर्णा (5।10।15), और जया (4।9।14) तिथियों में द्वार स्थापन शुभद होता है।

ध्रुवभे शुभवारे च स्थिरलग्न शुभेदिने।
द्वारं स्थापनं मृगं चित्रं वर्गसम्पद्विवर्द्धनम्।।
चरे स्थिरे च नक्षत्रे बुधशुक्रदिने तिथौ।
शुभे कपाटयोग: स्याद् द्विस्वभावोदये गृहे।।

ध्रुव नक्षत्र (उत्तरात्रय और रोहिणी) शुभ तिथि, वार और स्थिर लग्न में द्वार स्थापन करना चाहिए। मृगशिर और चित्रा नक्षत्र कुल और सम्पत्ति की वृद्धि करने वाले है। चर और स्थिर नक्षत्रों (उत्तरात्रय, रोहिणी स्थिर और स्वाती, पुनवंसु, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिष, चर) बुध शुक्रवार, शुभतिथि और द्वि-स्वभाव लग्न में कपाट लगाना शुभद होता है।

माण्डव्य का मत -

सूत्रशङ्‌गिशलाद्वारं तुलाच्छदनपूर्वकम्।
कार्यस्तम्भप्रतिष्टोक्ते धिष्ण्ये वारे तिथौ तथा।।

सूत्र, शड्.कु, शिलान्यास, द्वारस्थापन, गृहच्छादन स्तम्भप्रतिष्ठा आदि के लिए विहित तिथि नक्षत्र वारों में कपाट लगाना शुभद होता है।

एक मत यह भी है-

चरेस्थिरे च नक्षत्रे बुधशुक्रदिनेतिथौ।
शुभे कपाटयोग: स्याद् द्विस्वभावोदये गृहे।।

अर्थात् चर और स्थिर नक्षत्रों (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष और रोहिणी, उत्तराक्रम), बुध-शुक्र वारों और शुभ तिथियों (1।2।3।5।7।10।11।13।15) में और द्विस्वभावलग्न में कपाट लगाना शुभद होता है।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि वास्तुशास्त्र के प्रवत्तर्को द्वारा गृहनिर्माण प्रक्रिया में द्वार का विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण बतलाया गया है। गृहद्वार का शुभाशुभ फल प्रत्यक्षतया गृहस्वामी पर पड़ता है। अतएव गृहनिर्माण परम्परा में आचार्यों ने गृहद्वार का महत्व प्रतिपादित किया है।

गृह का मुख्य द्वार कैसा होना चाहिए? किस दिशा में होना चाहिए? उसका दैर्घ्य- विस्तार कितना होना चाहिए? आदि इत्यादि समस्त विषयों का प्रतिपादन इस इकाई में आपके ज्ञानार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है।

सामान्यतया गृहद्वार का अर्थ होता है – घर का मुख्य द्वार। गृहद्वार के अध्ययनोपरान्त आप सभी को अनेक मत-मतान्तर भी देखने को मिलेंगे। तो आइए हम एक-एक उसका अध्ययन करते है।

राशि वालों के लिए गृह द्वार निर्णय –

पूर्वे ब्राह्मणराशीनां वैश्यानां दक्षिणेशुभम्।
शूद्राणां पश्चिमे द्वारं नृपाणामुत्तरेमतम्।।

ब्राह्मण राशि (कर्क, वृश्चिक, मीन) वालों के लिए गृह द्वार पूर्व में, क्षत्रिय राशि (वृष, कन्या एवं मकर) वालों के लिए उत्तर में, वैश्य राशि (मिथुन, तुला, कुम्भ) वालों के लिए दक्षिण में तथा शूद्र राशि (मेष, सिंह एवं धनु) वालों के लिए पश्चिम दिशा में गृह द्वार बनाना शुभ फल देने वाला होता है। राजाओं के लिए उत्तर दिशा में गृहद्वार बनाना उत्तम होता है। इसी प्रकार गृहद्वार निर्णय के लिए अलग-अलग कई विधियाँ, मत-मतान्तर आचार्यों द्वारा प्रतिपादित किया है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

गृहनिर्माण - घर बनाना

द्वार – घर का मुख्य प्रवेश स्थान

शुभाशुभ – शुभ और अशुभ

दैर्घ्य–विस्तार - लम्बाई एवं चौड़ाई

क्षत्रिय राशि – 2,6,10 राशियाँ

नृप – राजा

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. क
3. क
4. ख
5. ग
6. क

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वास्तुसार – प्रोफेसर देवीप्रसाद त्रिपाठी

वृहद्वास्तुमाला – टीकाकार – डॉ. हरिशंकर पाठक

मुहूर्त्तचिन्तामणि – रामदैवज्ञ, टीकाकार – आचार्य रामचन्द्र पाण्डेय

वास्तुप्रबोधिनी– डॉ. अशोक थपलियाल

2.9 सहायक पाठ्यसामग्री

वास्तुराजवल्लभ

मयमतम्

वास्तुप्रबोधिनी

मुहूर्त्तचिन्तामणि

वृहत्संहिता

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. राशिपरत्वेन एवं आयपरत्वेन गृहद्वार निर्णय का उल्लेख कीजिये।
2. गृह द्वार का विस्तृत वर्णन कीजिये।
3. द्वार की महत्ता पर प्रकाश डालिये।
4. द्वाविंशति (३२) द्वारों का शुभाशुभत्व का वर्णन कीजिये।
5. द्वार संबंधित उपद्रवों का फल लिखिये।

इकाई - 3 गृहारम्भ विधि

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 गृहारम्भ विधि

3.3.1 गृहारम्भ से पूर्व विचारणीय विषय

3.3.2 गृहों के नाम व नक्षत्रानुसार शुभाशुभ विचार

3.3.3 गृह निर्माण का फल, गृहराशि विचार एवं शाला से शुभाशुभ कथन

3.3.4 गृह निर्माणारम्भ एवं तिथ्यादि शुद्धि

3.3.5 शिलान्यास

3.4 भूमि संशोधन

3.4.1 गृहारम्भ में निषेध

3.4.2 गृहारम्भ से नक्षत्र और वार से विशेष फल

3.4.3 गृह प्रवेश मुहूर्त्त

3.4.4 गृहशांति पूजन व महत्व

3.5 सारांश

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 सहायक पाठ्यसामग्री

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए.ज्योतिष, पंचम सेमेस्टर- BAJY(N)-330 पाठ्यक्रम के द्वितीय खण्ड की तृतीय इकाई 'गृहारम्भ विधि' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहनिर्माण में मासादि विचार, द्वार निर्णय आदि का अध्ययन कर लिया है। अब आप गृह निर्माण का आरम्भ कैसे करते है? इसका अध्ययन करने जा रहे है।

'गृह' प्रत्येक मानव जीवन का अभिन्न हिस्सा है। क्योंकि मनुष्य जहाँ निवास करता है और अपना जीवन यापन करता है, उस स्थान का नाम है गृह। अत: गृहनिर्माण में गृहारम्भ की क्या विधि होनी चाहिये। इसका वास्तुशास्त्रीय ज्ञान हम इस इकाई में करने जा रहे है।

आइए हम सब वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आचार्यों द्वारा प्रतिपादित 'गृहारम्भ विधि' से सम्बन्धित विषयों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करते हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेगें कि –

- गृहारम्भ किसे कहते है।
- गृहनिर्माण का आरम्भ कैसे किया जाता है।
- गृहारम्भ करने से पूर्व क्या-क्या महत्वपूर्ण कार्य करना चाहिए।
- गृहारम्भ के क्या-क्या सोपान है।
- गृहारम्भ में विचारणीय विषय क्या है।

3.3 गृहारम्भ विधि

आप सभी को विदित है कि गृह का महत्व मानव मात्र के लिए कितना आवश्यक है। क्योंकि बिना गृह के जीवन-यापन में प्राणी-मात्र को असुविधा होती है। वास्तु शास्त्र में गृह का महत्व प्रतिपादित करते हुए आचार्य कथन है कि –

गृहस्थस्य क्रिया: सर्वा न सिद्ध्यन्ति गृहं विना।
यतस्तस्माद् गृहारम्भ कर्म चात्राभिधीयते।।

अर्थात् गृह के बिना गृहस्थ के समस्त स्मार्त व वैदिक कार्य सफल नहीं होते हैं या अल्प फल वाले

होते हैं, इसलिए यहाँ गृहारम्भ के बारे में बतलाया जा रह है। आगे कहते है कि दूसरे के घर पर किया हुआ श्रौत व स्मार्त कर्म निष्फल हो जाता है, क्योंकि दूसरे के घर में कृत कार्य का फल गृहेश या गृहस्वामी को भी मिलता है। यथा -

परगेहकृता: सर्वा: श्रौतस्मार्त्तक्रिया शुभा:।
निष्फला: स्युर्यतस्तासां भूमिश: फलमश्नुते।।

अत: सभी को स्वयं का गृह निर्माण करना चाहिए। यह अलग बात है कि प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में हर संभव प्रयास करता है कि वह अपने गृह का निर्माण करें, परन्तु इस कार्य में कई तो सफल हो जाते हैं और कई असफल भी रह जाते हैं।

उक्त श्लोक में एक प्रश्न उठता है कि यदि कोई धन देकर किसी दूसरे के गृह में किरायेदार के रूप में निवास कर रहा हो, तो भी क्या उसके द्वारा किये गये धार्मिक कार्य (पुण्यादि) का फल गृहपति को मिलेगा? तो इसका उत्तर है कि नहीं, जब तक आप किसी दूसरे के गृह में धन देकर रह रहे है तो आपका पुण्य का फल आपको ही मिलना चाहिए, न कि गृह पति को। क्योंकि आप रहने के लिए प्रतिमास गृहस्वामी को भुगतान कर रहे है। इससे आप उस निवास स्थान का (धन देने के काल तक) स्वामी माने जायेंगे। ऐसा मेरा मत है।

गृह प्रशंसा में आचार्य कथन –

स्त्रीपुत्रादिकभोगसौख्यजननं धर्मार्थकामप्रदं
जन्तूनामयनं सुखास्पदमितं शीताम्बुघर्मापहम्।।
वापीदैवगृहादिपुण्यमखिलं गेहात्समुत्पद्यते।
गेहं पूर्वमुशन्ति तेन विबुधा: श्रीविश्वकर्मादय:।।

अर्थात् गृह स्त्री, पुत्रादि के भोग सुख का जनक, धर्म, अर्थ, काम को देने वाला, जीवों का निवास स्थान, सुख का स्थान, ठण्ड, वर्षा और गर्मी से बचाने वाला होता है। गृह निर्माण करने से वापी, देव मन्दिर आदि निर्माण का समस्त फल मिलता है। इसलिए पूर्वाचार्य विश्वकर्मादि ने सर्वप्रथम भवन बनाने का आदेश दिया है।

गृहारम्भ विधि -

द्वारशुद्धिं निरीक्ष्यादौ भशुद्धिं वृषचक्रत:।
निष्पंके स्थिरे लग्ने द्वयंगे वालयमारभेत्।।
त्यक्त्वा कुजार्कयोश्चांशं पृष्ठे चाग्रे स्थितं विधुम्।

बूधेज्यराशिगं चार्कं कुर्याद् गेहं शुभाप्तये।।

सर्वप्रथम द्वारशुद्धि का विचार कर वृषचक्र के अनुसार नक्षत्र शुद्धि देखना चाहिये। पंचक नक्षत्रों (धनिष्ठा से रेवती तक) छोड़कर स्थिर अथवा द्विस्वभाव लग्न में गृहारम्भ करना चाहिये। मंगल और सूर्य का अंश, आगे तथा पीछे का चन्द्रमा एवं मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन राशि के सूर्य को छोड़कर गृहारम्भ अर्थात् गृहनिर्माण आरम्भ करने का विधान है।

3.3.1 गृहारम्भ के पूर्व विचारणीय विषय –

ग्रामादेरनुकूलत्वं दिशो भूतग्रहस्य च।
गृहधिष्ण्यादिकं शुद्धं वीक्ष्यायव्ययमंशकान्।।
सुगेहं रचयेद्धीमान् वास्तुशास्त्राऽनुसारतः।

गृहारम्भ के पूर्व सर्वप्रथम ग्राम (जहाँ गृह बनाना हो) की अनुकूलता फिर दिशा की अनुकूलता उसके बाद भूमि की अनुकूलता का और तत्पश्चात् पिण्ड, आय, वार नक्षत्रादि का शास्त्रानुसार विचार करके गृह निर्माण का कार्य आरम्भ करना चाहिए।

अन्य कथन –

आदौ भूमिपरीक्षणं शुभदिने पश्चाच्च वास्तवर्चनं।
भूमेः शोधनकं ततोऽपि विधिवत्पाषाणतोयान्तकम्।।
पश्चाद्वेश्मसुरालयादिरचना पादसंस्थापनं
कार्यं लग्नशशांकशाकुनबलैः श्रेष्ठे दिने धीमता।।

अर्थात् पहले शुभदिन में भूमि की परीक्षा करके बाद में वास्तुपूजन पूर्वक तह पर्यन्त या पानी पर्यन्त भूमि का शोधन करके उसके बाद लग्न, चन्द्रमा, शकुन का बल देख कर शुभ मुहूर्त्त में पादसंस्थापन (गृहारम्भ) बुद्धिमानों को करना चाहिये।

गृहारम्भ में कालशुद्धि विचार –

गृहेशतत्स्त्रीसुतवित्तनाशोऽर्केन्द्वीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे।
कर्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते पृष्ठगते खनिः स्यात्।।

अर्थात् सूर्य, चन्द्र, गुरू और शुक्र के निर्बल, अस्त और नीच राशि में स्थित होने पर क्रम से गृहस्वामी, गृहेश की पत्नी, सुख और धन का नाश होता है। अर्थात् यदि सूर्य निर्बल, एवं नीच राशिगत हो तो गृहस्वामी का, चन्द्रमा निर्बल एवं नीच हो तो स्त्री का, गुरू निर्बल अस्त एवं नीच राशिगत हो तो सुख का तथा शुक्र यदि निर्बल–अस्त और नीच हो तो धन का नाश होता है।

चान्द्र नक्षत्र और वास्तु नक्षत्र दोनों के गृह के सम्मुख दिशा में रहने से गृहस्वामी का निवास उस गृह में नहीं होता तथा उक्त दोनों नक्षत्रों के गृह के पृष्ठभाग में स्थित रहने पर चौर भय होता है।

3.3.2 गृहों के नाम व नक्षत्रानुसार शुभाशुभ विचार –

ध्रुवधान्ये जयनन्दौ खरकान्तमनोरमं सुमुख दुर्मुखोग्रं च।
रिपुदं वित्तद नाशे चाक्रन्द विपुल विजयाख्यं स्यात्।।

1. ध्रुव 2. धान्य, 3. जय 4. नन्द 5. खर 6. कान्त 7. मनोरम 8. सुमुख 9. दुर्मुख, 10. उग्र 11. रिपुद 12. वित्तद 13. नाश 14. आक्रन्द 15. विपुल 16. विजय ये क्रमानुसार 16 संख्यात्मक गृहों के नाम है।

ध्रुवादि नाम साधन। गृह में पूर्व और उत्तर द्वार अभीष्ट है। अत: शाला ध्रुवांक योग 1 + 8 = 9, 9 + 1 = 10 योग संख्या 10 है। अत: दसवें गृह का नाम उग्र दो अक्षरों वाला हुआ।

अंश साधन – पूर्वसाधित व्यय – 1, ध्रुवादि गृह की नामाक्षर संख्या – 2 गृहपिण्ड - 101, 1 + 2 = 3 + 101 = 104 ÷ 3 = शेष 2 अत: यम अंश हुआ।

वास्तुरत्नावली में यह कहा गया है कि जन्म नक्षत्र के अनुसार भी गृह में या नगर में वास करना चाहिये।

अभीष्ट नगर या गाँव के नक्षत्र से गणना कर इस प्रकार नक्षत्र स्थापित करके देखें जहॉं अपना जन्म नक्षत्र पड़े। तदनुसार शहर में निवास का शुभाशुभ विचार करें।

पुरूषाकृति ग्राम वास चक्र –

अंग	मस्तक	मुख	पेट	पाद	पीठ	नाभि	गुदा	दायॉं हाथ	बायॉं हाथ
नक्षत्र	5	3	5	6	1	4	1	1	1
फल	लाभ	धन हानि	धन धान्य	स्त्री हानि	हानि	सम्पत्ति	भय पीड़ा	युद्ध	विलाप

उदाहरणार्थ - किसी व्यक्ति का जन्म नक्षत्र आर्द्रा है। दिल्ली का नक्षत्र पू0भा0 है। पूर्वा भाद्रपद से गणना करने पर आर्द्रा नौवॉं नक्षत्र आया । जो पेट पर पड़ता है । अत: धन धान्य वृद्धि दिल्ली में रहने का फल आया।

अथव ग्राम नक्षत्र से 7 -7 नक्षत्र क्रमश: मस्तक, पीठ, हृदय व पैरों पर मान कर देखें। मस्तक में धन व मान, पृष्ठ में हानि व निर्धनता हृदय पर सुख सम्पत्ति व पैरों पर अस्थिरता रहती है। यहॉं अपने नाम नक्षत्र से देखा जायेगा। उदाहरण में दिल्ली के नक्षत्र से विचारणीय व्यक्ति शुभदर्शन का

नाम नक्षत्र शतभिषा पूर्वाभाद्रपद से गणना करने पर अन्तिम सप्तक अर्थात् पैरों पर पड़ता है जो कि मन की अस्थिरता का द्योतक है।

3.3.3 गृह निर्माण का फल, गृहराशि विचार एवं शाला से शुभाशुभ कथन -

कोटिघ्नं तृणजे पुण्यं मृण्मये दशसंगुणम्।
ऐष्टिके शतकोटिघ्नं शैलेऽनन्तं फलं गृहे।।

पर्णशाला बनाने से कोटि गुण, मिट्टी का घर बनाने से दस करोड़ गुण, ईंट का गृह बनाने से सौ करोड़ गुणा और पत्थरों द्वारा घर बनाने से अनन्त फलों की प्राप्ति होती है।

गृहराशि विचार – मेष में अश्विनी से नक्षत्र, सिंह में मघा से 3 नक्षत्र व धनु में मूल से 3 नक्षत्र होते है। अन्य सभी राशियॉ यथा क्रम 2.2 नक्षत्रों की होती है।

अश्विन्यादि त्रयं मेषे सिंहे प्रोक्तं मघा त्रयम्।
मूलादित्रितयं   चापे   शेषभेषु   द्वयं   द्वयम्।।

शाला से शुभाशुभ - बाल्कनी, प्रवेश लॉबी, ऑगन कहॉ बनायें यह ध्यान रखना चाहिये। इससे भी शुभाशुभ होता है। यदि उक्त चीजें न हों तो गृह में जिधर बाहर खुलने वाले दरवाजे बनायें उससे भी विचार किया जा सकता है।

पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, तथा उत्तर इस क्रम से 1,2,4,8 ये ध्रुवांक है। जिधर शाला हो उसके ध्रुवांको में 1 जोड़कर जो संख्या बने, वही निम्नानुसार गृह का नाम या संज्ञा होती है। तदनुसार फल शुभ नाम से शुभ या अशुभ से अशुभ होगा –

1. ध्रुव
2. धान्य
3. जय
4. नन्द
5. खर
6. कान्त
7. मनोरम
8. प्रमुख
9. दुर्मुख
10. क्रूर
11. रिपुद
12. धनद

13. क्षय
14. आक्रान्द
15. विपुल
16. विजय

ध्यातव्य हो कि यदि चारों दिशाओं में द्वार शालादि बनती हो तब यह पूर्वोक्त विचार नहीं करना है। उक्त उदाहरण वाले व्यक्ति शुभदर्शन के फ्लैट में यथोचित परिवर्तन क्षेत्रफल में करवा दिया गया है। अब दरवाजा व बाल्कनी उत्तर व दक्षिण पूर्व के कोने में निर्माण करवानी है।

पूर्वांक 1 + दक्षिण दिशांक 8 = 9 + 1 अतिरिक्त तो 10 वॉ घर क्रूर होगा। यह ठीक नहीं है। अत: हम शुभदर्शन जी को सलाह देते हैं कि आप अपने गृह मं सम्भव हो तो बाल्कनी दक्षिण पश्चिम में या पूर्व दिशा में अग्निकोण से हटाकर बनायें तो शुभ होगा।

यदि मकान बनवाते समय कुशल वास्तुविद् ज्योतिषी से सलाह लेते है, तो निश्चित ही कल्याणकारी सिद्ध होगा।

बोध प्रश्न : -

1. निम्न में से किसके अभाव में गृहस्थ के समस्त स्मार्त व वैदिक कार्य सफल नहीं होते हैं?
   क. जल ख. भोजन ग. गृह घ. धन
2. परगेह से क्या तात्पर्य है?
   क. वास्तु गृह ख. दूसरे का घर ग. अपना गृह घ. गृहपति
3. गृहारम्भ से पूर्व किसका विचार करना चाहिए?
   क. स्थान ख. दिशा ग. पिण्डादि का घ. उपर्युक्त सभी
4. पादसंस्थापन का क्या अर्थ है?
   क. शिलान्यास ख. गृहारम्भ ग. गृहनिर्माण घ. कोई नहीं
5. कार्तिक मास गृह निर्माण के लिए कैसा माना गया है?
   क. उत्तम ख. मध्यम ग. अधम घ. सभी
6. गृहों के कितने नाम कहे गये है?
   क. १० ख.११ ग.१५ घ.१६
7. पत्थरों द्वारा गृह निर्माण का क्या फल है?
   क. दस गुणा ख. १०० गुणा ग. करोड़ गुणा घ. अनन्त फल

3.3.4 गृह निर्माणारम्भ एवं तिथ्यादि शुद्धि -

गृह निर्माणारम्भ – वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, माघ, फाल्गुन मासों में 3,6,9 राशियों की संक्रान्ति को छोड़कर गृहारम्भ करना चाहिये। कार्तिक मास निर्माणारम्भ के लिये मध्यम है।

1,4,9,14,30 तिथियों को छोड़कर शेष वारों में, जहाँ तक हो सके शुक्ल पक्ष में अग्नि, मृत्यु, बाणादि की शुद्धि देखकर व भूमिशयन न होने पर गृह निर्माणारम्भ करें।

वेधरहित चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, स्वाती, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, हस्त, पुनर्वसु, शतभिषा, नक्षत्रों में पूर्ववत् लग्न शुद्धि देखकर गृहारम्भ करना चाहिये। चर लग्न को गृहारम्भ में वर्जित करना चाहिये।

तिथ्यादि शुद्धि –

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेङ्गे विपंचके।
व्यष्ठान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्रयायारिगैः खलैः।।

मंगल और रविवार को छोड़कर अन्य वारों में 4,9,14,30,1 तथा किसी के मत से अष्टमी को भी त्याग कर शेष तिथियों में, चर लग्न मे, क, तु, म, रहित लग्न में, बाण पंचक स्पष्ट सूर्य के भुक्तांश 2,11,20,29 हों तो अग्नि दोष रहित काल में, लग्न से शुभग्रह 12,8 से अतिरिक्त स्थान में और पापग्रह 3,6,11 वे हो तो गृह निर्माणारम्भ शुभ है।

गृहारम्भ विधि में शिलान्यास एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटक है। गृहनिर्माण कार्य आरम्भ करने के पूर्व आचार्यों द्वारा शिलान्यास करने का विधान बतलाया गया है। आइए हम सब शिलान्यास से भी परिचित होते हैं।

3.3.5 शिलान्यास

शिलान्यास में शिला का अर्थ है – पत्थर। शिला को या ईष्ट को स्थापित कर गृहारम्भ में पूजन की जाती है, तत्पश्चात् गृहनिर्माण का कार्य आरम्भ किया जाता है। विदित हो कि शिलान्यास के पूर्व ग्राम राशि से शुभाशुभ स्थान का विचार करना आवश्यक है, इसी के आधार पर गृह निर्माण हेतु उस स्थल पर शिलान्यास कर्म करना चाहिये।

शिलान्यास मुहूर्त्त –

अधोमुखैश्च नक्षत्रैः कर्त्तव्यं भूमिशोधनम्।
शिलान्यासः प्रकर्त्तव्यो गृहाणां श्रवणे मृगे।।
पौष्णे हस्ते च रोहिण्यां पुष्याश्विन्युत्तरात्रये।
मृदु - ध्रुवैः शुभं कुडयमित्युक्तं विश्वकर्मणा।।

श्लोक का अर्थ है कि आश्लेषा, मूल, विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी और मघा इन नक्षत्रों में भूमिशोधन खात, श्रवण, मृगशिरा, रेवती, हस्त, रोहिणी, पुष्य, अश्विनी और तीनों उत्तरा में शिलान्यास तथा मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा रोहिणी इन नक्षत्रों में दिधाल आदि

का निर्माण करना शुभ है।

गृहारम्भ की शुभ वेला में खनित नींव को प्रस्तुत शिलान्यास मुहूर्त्त के दिन विधिवत् पत्थरों से पूरित कर देना चाहिये। तदर्थ ग्राह्य तिथ्यादि शुद्धि इस प्रकार है –

तिथि – 1 तिथि कृष्णपक्ष 2,3,5,7,10,11,12,13 शुक्लपक्ष की तिथियाँ।

वार – चन्द्रवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार एवं शनिवार।

नक्षत्र – अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, तीनों उत्तरा, हस्त, श्रवण एवं रेवती।

विशेष – सम्यक् समय में ब्रह्मा, वास्तुपुरूष, पंचलोकपाल, कूर्म, गणेश तथा स्थान देवताओं का शिष्टाचार पूर्वक पूजन एवं स्वस्ति – पुण्याहवाचनादि के साथ तथा स्वर्ण एवं गंगादि पुण्य स्थानों की रेणु सहित मुख्य शिला का उचित कोण में स्थापन करें। तदनन्तर, प्रदक्षिण क्रम से अन्य पत्थरों को जमाना चाहिये।

प्रायोगिक रूप में शिलान्यास विधि –

शिलान्यास में सर्वप्रथम उत्तम भूमि का चयन करके उस स्थान पर पाँच शिलाओं व ईट्टों को पूर्व दिशा में अग्नि कोण में स्थापना कर आरम्भ में षोडशोपचार विधि से गणेशादि देवता, वास्तु देवतादि का पूजन करना चाहिये, तत् पश्चात् शिलाओं का पूजन करना चाहिये। उसी क्रम में वास्तु देवता का पूजन करते समय तॉबे के कलश में चॉदी का नाग– नागीन, कच्छप, सप्तधातु आदि डालकर मन्त्र द्वारा अभिमन्त्रित कर भूमि के अन्दर स्थापित करना चाहिये। इससे गृहारम्भ कार्य आसानी पूर्वक सम्पन्न हो जाती है। शिलान्यास कर्म गृहारम्भ कार्य में अति आवश्यक है।

3.4 भूमि संशोधन

भूमि में खनन का अधिकार -

स्वामिहस्तप्रमाणेन ज्येष्ठपत्नीकरेण वा।
हस्तमात्रं खनेद भूमिं नृणां प्रोक्तं पुरातनैः।।
जलान्तं प्रस्तरान्तं वा पुरूषान्तमथापि वा।
क्षेत्रं संशोध्य चोद्धृत्य शल्यं सदनमानभेत्।।

गृहनिर्माण कर्ता के हाथ से अथवा उसकी पत्नी के हाथ से एक हाथ गहरी भूमि को खोदकर परीक्षा करे या जल निकलने तक, या पत्थर निकलने तक या एक पुरूष के प्रमाण की गहराई तक भूमि को खोदकर उसका शोधन कर शल्य निकालकर गृह निर्माण प्रारम्भ करना चाहिये।

मुहूर्त्तचिन्तामणि में खातविधि –

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शुम्भुदिशे विलोमतः।

मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात् पृष्ठविदिक् शुभाभवेत्॥

देव मन्दिर के निर्माण में मीन से 3 राशि के सूर्य हो तो ईशान कोण में, मिथुन से 3 राशि में वायव्य कोण में, कन्या से 3 राशि में नैऋत्य कोण में और धन से 3 राशि में अग्नि कोण में राहु का मुख रहता है।

गृह निर्माण में सिंह से 3 राशि में ईशान कोण में, वृश्चिक से 3 राशि में वायव्य कोण में, कुम्भ से 3 राशि में नैऋत्य कोण में और वृष से 3 राशि में अग्नि कोण में राहु का मुख रहता है।

जलाशय निर्माण में मकर से 3 राशि में, ईशान कोण में मेष से 3 राशि में, वायव्य कोण में कर्क से 3 राशि में नैऋत्य कोण में और तुला से 3 राशि में अग्निकोण में राहु का मुख रहता है । अत: मुख से पिछले कोण में खात शुभ होता है।

वृषाकोदित्रिकं वेद्यां सिंहादि गणयेद् गृहे।
देवालये च मीनादि तडागे मकरादिकम्॥

गर्गाचार्य के मत से वेदी में वृर्षाक में 3 राशि, गृह में सिंह के सूर्य से 3 राशि, गृह में सिंह के सूर्य से 3 राशि, देवालय में मीन के सूर्य से 3 राशि, तडाग आदि में कमकर के सूर्य से 3 राशियों में राहु का मुख होता है।

'विश्वकर्मप्रकाश' में भूमि संशोधनप्रकार –

खातं भूमिपरीक्षणे करमितं तत्पूरयेत्तन्मृदा
हीने हीनफलं समे समफलं लाभो रजोवर्द्धने।
तत्कृत्वा जलपूर्णमाऽऽशतपदं गत्वा परीक्ष्यं पुन:॥
पादोनाऽर्द्धविहीनकेऽथनिभृते मध्याधमेष्टाम्बुभि:।
निखनेद्धस्तमात्रेण पुनस्तेनैव पूरयेत्।
पांशुनाधिकमध्योनश्रेष्ठमध्याधमा: क्रमात्॥

भूमि परीक्षण के समय भूस्वामी या उसकी प्रधान पत्नी के हाथ से एक – एक हाथ लम्बा, चौड़ा, गहरा गड्ढा खोदकर उसको पानी से भर दें। तत्पश्चात् उससे 100 कदम दूर जाकर उस भूमि के पास लौट आयें फिर परीक्षा करें यदि गर्त भरा हो तो उत्तम, चौथाई जल सूख जाये तो मध्यम आधे से भी कम रहे तो अधम समझे।

अथवा उसी मिट्टी से उस गड्ढा को भरे यदि मिट्टी बच जाये तो उत्तम, बराबर हो तो मध्यम, घट जाये तो अधम समझे।

'वास्तुरत्न' नामक ग्रन्थ में भूमि संशोधन –

कर्तुश्च हस्तप्रमितं खनित्वा खातं पयोभि: परिपूरितं चेत्।
वसेत्सुतार्थी परिपूरितंसच्छुष्के भवेत् तत्क्षणमेव नाश:।।
स्थिरे जले वै स्थिरता गृहस्य स्याद्दक्षिणावर्त्तजलेन सौख्यम्।
क्षिप्रं जलं शोषयतीह खातो मृत्युर्हि वामेन जलेन कर्तु:।।
अथवा सर्वधान्यानि वापयेच्च समन्तत:।
यत्र नैव प्ररोहन्ति तां प्रयत्नेन वर्जयेत्।।

गृहपति के हाथ भर गहरी खोदी गयी भूमि को जल से भरें यदि जल भरा रह जाये तो शुभ, तत्काल सूख जाये तो अशुभ और जल भरते समय स्थिर रहे तो गृह की स्थिरता। पानी दक्षिण की ओर घूमे तो सुख, बायीं ओर घूमे तो मृत्युदायक होता है। अथवा जिस भूमि पर निवास करने की इच्छा हो उस पर सभी अन्नों को एक साथ बोयें, जहॉं अंकुर न उगें तो उस स्थान को निवास योग्य न समझे, अत: उसे त्याज्य कर देना चाहिये।

खात के मध्य में पाषाणादि प्राप्तिफल –

खन्यमाने यदा भूमौ पाषाणं प्राप्यते तदा।
धनायुश्चिरता वै स्यादिष्टकासु धनागम:।।
कपालांगारकेशादौ व्याधिना पीडितो भवेत्।

भूमि खोदने पर यदि वहॉं पत्थर मिल जाये तो धन एवं आयु की वृद्धि होती है, यदि ईंट मिले तो धनागम, कपाल, हड्डी, कोयला, केश आदि से रोग पीड़ा होती है।

खाते यदाश्मा लभते हिरण्यं तथेष्टकायां च समृद्धिरत्र।
द्रव्यं च रम्याणि सुखानि धत्ते ताम्रादिधातुर्यदि तत्र वृद्धि:।।

यदि गड्ढे में से पत्थर मिले तो सुवर्ण लाभ ईंट से समृद्धि, द्रव्य से सुख और ताम्रादि धातु से सब प्रकार की वृद्धि होती है।

'वास्तुराजवल्लभ' ग्रन्थ में भूमिपूजाविधि –

परीक्षितायां भुवि विघ्नराजं समर्चयेच्चण्डिकया समेतम्।
क्षेत्राधिपं चाष्ठदिगीशदेवान् पुष्पैश्च धूपैर्बलिभि: सुखाय।।

उक्त प्रकार से भूमि की परीक्षा करके श्रीगणेश तथा भगवती दुर्गा की पूजा करके क्षेत्रपाल तथा आठों दिग्पालों की फल, धूप, बलि आदि से पूजा करनी चाहिये।

गृहनिर्माण के लिये इष्टिका विचार –

विजया मंगला चैव निर्मला सुखदेति च।

चतुर्द्धा चेष्टका: प्रोक्ता गृहे च वरूणालये।।

तिथ्यंगुलानि विजया मंगला सप्तचन्द्रकै:।

पक्षेन्दुभिर्निमलास्यात् सुखदा रामपक्षभि:।।

प्रमाणमिष्टकायाश्च गर्गाद्यैर्मुनिभि: स्मृत:।

विजया, मंगला, निर्मला, सुखदा ये चार प्रकार की ईंटें गृह तथा जलाशय के लिये कही गई है। अब इनके प्रमाण होते है – 15 अंगुल विजया, 17 अंगुल मंगला, 12 अंगुल निर्मला, 23 अंगुल सुखदा का प्रमाण गर्गादि मुनियों के द्वारा कथित है।

इष्टकाचक्रम् –

पंचत्रीणि त्रिकं पंच सप्त पंचावनीयभात्।

सौख्यं मृत्यु क्रमेणैव इष्टकारम्भकर्मसु ।।

मंगल के नक्षत्र से ईंट रखने के दिन नक्षत्र तक का फल निम्नलिखित है –

मंगल के नक्षत्र से गणना फल –

5	3	3	5	7	5
सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु	सौख्य	मृत्यु

इष्टकोपरि वह्निदीपचक्रम्

सप्तपंचमुनिवेदपंचभि: शोकलाभरूजभीतिभीसुखम् ।

भौमभाच्च गणयेत्सुधी: सदा इष्टकोपरि सुवह्निदीपनम् ।।

मंगल के नक्षत्र से अग्निदीपन नक्षत्र तक का विचार चक्र –

मंगल नक्षत्र से गणना फल

7	5	7	4	5
शोक	लाभ	रोग	भय	सुख

शिलान्यास विधि –

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत् प्रथमम् ।

शेषा: प्रदक्षिणेन स्तम्भांश्चैव प्रतिस्थाप्या: ।।

कोण की विधिवत् पूजा करके पूर्व दक्षिण के कोण में प्रथम शिलान्यास करके शेष प्रदक्षिण क्रम से स्थापना करे।

स्तम्भस्थापन –

प्रासादेषु च हर्म्येषु गृहेष्वन्येषु सर्वदा ।
आग्नेय्यां प्रथमं स्तम्भं स्थापयेत्तिद्वधानत:।।

प्रासाद, धनिकों के गृह तथा सामान्य ग्रहों में भी सदैव अग्निकोण में ही विधिपूर्वक स्तम्भ स्थापन करना चाहिये ।

सूत्रभित्तिशिलान्यासं स्तम्भस्यारोपणं तथा।
पूर्वदक्षिणयोर्मध्ये कुर्यादित्याह कश्यप:।।

महर्षि कश्यप के मत से सूत्रभित्ति, शिलान्यास तथा प्रथम स्तम्भ स्थापन पूर्व दक्षिण के मध्य में ही करना चाहिये।

3.4.1 गृहारम्भ में निषेध –

गृहेशतत्स्त्रीसुतवित्तनाशो
ऽर्केन्द्रीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे।
कर्तु: स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे।।
पुर: स्थिते पृष्ठगते खनि: स्यात्।।

गृहारम्भ के समय गृहकर्ता के सूर्य, चन्द्रमा, वृहस्पति और शुक्र निर्बल हो, अस्त हो या नीच के हो तो क्रम से गृहेश, उसकी स्त्री, सुख और धन का नाश होता है । चन्द्रमा नक्षत्र तथा वास्तु नक्षत्र सम्मुख पड़े तो गृहकर्ता का उसमें वास न हो, यदि पृष्ठगत पड़े तो खनि (चोरी) होती है ।

3.4.2 गृहारम्भ में नक्षत्र और वार से विशेष फल –

पुष्यध्रुवेन्दु हरिसर्पजलै: सजीवै।
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात्।।
द्वीशाष्वितक्षवसुपाशिशिवै: सशुक्रै।
वरि सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात्।।
सारै: करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलै: कौजे
ऽह्नि वेश्माग्निसुतार्विदं स्यात्।।
सज्ञै: कदास्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैव।
वारे सुखपुत्रदं स्यात्।।
अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकै:।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुते गृहम्।।

पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, श्रवण, आश्लेषा, पूषा इनमें से कोई नक्षत्र में वृहस्पति हो और वृहस्पति वार हो तो गृहारम्भ करने से पुत्र और धन की प्राप्ति हो, तथा विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शततारा, आर्द्रा इनमें से किसी नक्षत्र से युक्त शुक्र और शुक्र ही के वार में गृहारम्भ करने से धन – धान्यदायक होता है ।

हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूषा, मूल इनमें से किसी नक्षत्र से युक्त मंगल और मंगलवार भी हो तो गृहारम्भ करने से अग्निभय और पुत्र को पीड़ा हो तथा यदि रोहिणी, अश्विनी, उ0फा0, चित्रा, हस्त इनमें से किसी नक्षत्र से युक्त बुध हो और बुधवार भी हो तो गृहारम्भ करने से पुत्रसुख होता है। पू0भा0, उ0भा0, ज्येष्ठा, अनुराधा, रेवती, स्वाती, भरणी इनमें से किसी नक्षत्र से युक्त शनि और शनिवार भी हो तो ऐसे योग में गृहारम्भ करने से वह गृह राक्षस और भूत से युक्त होता है।

लक्ष्मीयुक्त गृह के योग –

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथ वा।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्यायुक्तं चिरं गृहम्।।

लग्न में उच्च का शुक्र हो या चतुर्थ स्थान में उच्च का वृहस्पति हो अथवा उच्च का शनि एकादश में रहने से गृहारम्भ करने पर गृह दीर्घकाल तक लक्ष्मी से युक्त रहता है।

गृहनिर्माण पूर्ण होने पर गृहप्रवेश का विधान बतलाया गया है। यहाँ अब गृहप्रवेश का मुहूर्त्त भी आपकी जानकारी के लिए दिया जा रहा है।

3.4.3 गृहप्रवेश का मुहूर्त्त –

माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषु शोभनः।
प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः।।
प्रविशेन्नूतनं हर्म्यं ध्रुवैर्मैत्रैः सुखाप्तये।
यद्दिङ्मुखं गृहद्वारं तद्द्वारर्क्षे गृहं विशेत्।।

अर्थात् गृहप्रवेश में माघ, फाल्गुन, वैशाख और ज्येष्ठ मास शुभ तथा मार्गशीर्ष और कार्तिक मास मध्यम है। तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा अथवा द्वार के नक्षत्र में नवीन गृह में प्रवेश करना शुभ है।

विशेष - पूर्वादि दिशा में क्रम से कृत्तिकादि सात – सात नक्षत्र समझना चाहिये। यथा गृह का द्वार पूर्व दिशा में हो तो कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र प्रशस्त है।

3.4.4 गृहशांति पूजन व महत्व –

जब किसी भवन, गृह आदि का निर्माण पूर्ण हो जाता है, एवं गृहप्रवेश के पूर्व जो पूजन किया जाता है, उसे **गृहशांति पूजन** कहते है। यह पूजन एक अत्यंत आवश्यक पूजन है, जिससे गृह-वास्तु-मंडल में स्थित देवता उस मकान आदि में रहने वाले लोगों को सुख, शांति, समृद्धि देने में सहायक होते हैं। यदि किसी नये गृह में गृहशांति पूजन आदि न करवाया जाए तो गृह-वास्तु -देवता लोगों के लिए सर्वथा एवं सर्वदा विघ्न करते रहते है। गृह, पुर एवं देवालय के सूत्रपात के समय, भूमिशोधन, द्वारस्थापन, शिलान्यास एवं गृहप्रवेश इन पांचों के आरम्भ में वास्तुशांति आवश्यक है।

गृह-प्रवेश के आरंभ में गृह-वास्तु की शांति अवश्य कर लेनी चाहिए। यह गृह मनुष्य के लिए ऐहिक एवं पारलोकिक सुख तथा शान्तिप्रद बने इस उद्देश्य से गृह वास्तु शांति कर्म का प्रतिपादन ऋषियों द्वारा किया गया। कर्मकाण्ड में वास्तुशांति का विषय अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि, जरा सी भी त्रुटि रह जाने से लाखों एवं करोडों रूपये व्यय करके बनाया हुआ गृह जरा से समय मे भूतों का निवास अथवा गृहनिर्माणकर्ता, शिल्पकार अथवा गृहवास्तु शांति कराने वाले विद्वान के लिए घातक हो सकता है। वास्तुशांति करवाने वाले योग्य पंडित का चुनाव ही महत्वपूर्ण होता है, कारण कि वास्तुशांति का कार्य यदि वैदिक विधि द्वारा पूर्णतः संपन्न नहीं होता तो गृहपिण्ड एवं गृहप्रवेश का मुहूर्त भी निरर्थक हो जाता है। अतः गृह निर्माण कर्ता को कर्मकाण्डी विद्वान का चुनाव अत्यधिक विचारपूर्वक करना चाहिए।

गृहशांति पूजन न करवाने से हानियाँ -

- यदि गृहप्रवेश के पूर्व गृहशांति पूजन नहीं किया जाए तो दुस्वप्न आते हैं, अकालमृत्यु, अमंगल संकट आदि का भय हमेशा रहता है।
- गृहनिर्माता को भयंकर ऋणग्रस्तता, का सामना करना पडता है, एवं ऋण से छुटकारा भी जल्दी से नहीं मिलता, ऋण बढता ही जाता है।
- घर का वातावरण हमेशा कलह एवं अशांति पूर्ण रहता है। घर में रहने वाले लोगों के मन में मनमुटाव बना रहता है। वैवाहिक जीवन भी सुखमय नहीं होता।
- उस घर के लोग हमेशा किसी न किसी बीमारी से पीडित रहते है, तथा वह घर हमेशा बीमारीयों का डेरा बन जाता है।
- गृहनिर्माता को पुत्रों से वियोग आदि संकटों का सामना करना पड सकता है।
- जिस गृह में वास्तु दोष आदि होते है, उस घर मे बरकत नहीं रहती अर्थात् धन टिकता नहीं है। आय से अधिक खर्च होने लगता है।
- जिस गृह में बलिदान (पूजनादि में मंगल द्रव्यादि का) तथा ब्राह्मण भोजन आदि कभी न हुआ हो ऐसे गृह में कभी भी प्रवेश नहीं करना चाहिए। क्योंकि वह गृह आकस्मिक विपत्तियों को प्रदान करता है।

गृहशांति पूजन करवाने से लाभ

- यदि गृहस्वामी गृहप्रवेश के पूर्व गृहशांति पूजन संपन्न कराता है, तो वह सदैव सुख को प्राप्त

करता है।

- लक्ष्मी का स्थाई निवास रहता है, गृह निर्माता को धन से संबंधित ऋण आदि की समस्याओं का सामना नहीं करना पडता है।
- घर का वातावरण भी शांत, सुकून प्रदान करने वाला होता है। बीमारीयों से बचाव होता है।
- घर मे रहने वाले लोग प्रसन्नता, आनंद आदि का अनुभव करते है।
- किसी भी प्रकार के अमंगल, अनिष्ट आदि होने की संभावना समाप्त हो जाती है।
- घर में वास्तुदोष नहीं होने से एवं गृह वास्तु देवता के प्रसन्न होने से हर क्षेत्र में सफलता मिलती है।
- सुसज्जित भवन में गृह स्वामी अपनी धर्मपत्नी तथा परिवारीकजनों के साथ मंगल गीतादि से युक्त होकर यदि नवीन गृह में प्रवेश करता है तो वह अत्यधिक श्रेष्ठ फलदायक होता है।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि आप सभी को विदित है कि गृह का महत्व मानव मात्र के लिए कितना आवश्यक है। क्योंकि बिना गृह के जीवन-यापन में प्राणी-मात्र को असुविधा होती है। वास्तु शास्त्र में गृह का महत्व प्रतिपादित करते हुए आचार्य कथन है कि –

गृहस्थस्य क्रिया: सर्वा न सिद्धयन्ति गृहं विना।
यतस्तस्माद् गृहारम्भ कर्म चात्राभिधीयते।।

अर्थात् गृह के बिना गृहस्थ के समस्त स्मार्त व वैदिक कार्य सफल नहीं होते हैं या अल्प फल वाले होते हैं, इसलिए यहाँ गृहारम्भ के बारे में बतलाया जा रह है। आगे कहते है कि दूसरे के घर पर किया हुआ श्रौत व स्मार्त कर्म निष्फल हो जाता है, क्योंकि दूसरे के घर में कृत कार्य का फल गृहेश या गृहस्वामी को भी मिलता है।

अत: सभी को स्वयं का गृह निर्माण करना चाहिए। यह अलग बात है कि प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में हर संभव प्रयास करता है कि वह अपने गृह का निर्माण करें, परन्तु इस कार्य में कई तो सफल हो जाते हैं और कई असफल भी रह जाते हैं।

उक्त श्लोक में एक प्रश्न उठता है कि यदि कोई धन देकर किसी दूसरे के गृह में किरायेदार के रूप में

निवास कर रहा हो, तो भी क्या उसके द्वारा किये गये धार्मिक कार्य (पुण्यादि) का फल गृहपति को मिलेगा? तो इसका उत्तर है कि नहीं, जब तक आप किसी दूसरे के गृह में धन देकर रह रहे है तो आपका पुण्य का फल आपको ही मिलना चाहिए, न कि गृह पति को। क्योंकि आप रहने के लिए प्रतिमास गृहस्वामी को भुगतान कर रहे है। इससे आप उस निवास स्थान का (धन देने के काल तक) स्वामी माने जायेंगे। ऐसा मेरा मत है।

गृह प्रशंसा में आचार्य कथन है कि गृह स्त्री, पुत्रादि के भोग सुख का जनक, धर्म, अर्थ, काम को देने वाला, जीवों का निवास स्थान, सुख का स्थान, ठण्ड, वर्षा और गर्मी से बचाने वाला होता है। गृह निर्माण करने से वापी, देव मन्दिर आदि निर्माण का समस्त फल मिलता है। इसलिए पूर्वाचार्य विश्वकर्मादि ने सर्वप्रथम भवन बनाने का आदेश दिया है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

गृहारम्भ – गृह निर्माण का आरम्भ

गृह – घर

गृहस्थ – गृह में रहने वाला

श्रौत – वैदिक

अनन्त – जिसका अन्त न हो

गृहेश – गृह का स्वामी

शिला – पत्थर

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. घ
4. ख
5. ख
6. घ
7. घ

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वास्तुसार – प्रोफेसर देवीप्रसाद त्रिपाठी

वृहद्वास्तुमाला – टीकाकार – डॉ. हरिशंकर पाठक

मुहूर्त्तचिन्तामणि – रामदैवज्ञ, टीकाकार – आचार्य रामचन्द्र पाण्डेय

वास्तुरत्नाकर – विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी

3.9 सहायक पाठ्यसामग्री

वास्तुराजवल्लभ

मयमतम्

वास्तुप्रबोधिनी

मुहूर्त्तचिन्तामणि

वृहत्संहिता

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गृहारम्भ की महत्ता बतलाइये।
2. गृहारम्भ निर्माण में विचारणीय विषय कौन-कौन से है।
3. गृहारम्भ में मासादि विचार का मत-मतान्तर प्रस्तुत कीजिये।
4. गृहनिर्माण में काल शुद्धि का प्रतिपादन कीजिये।
5. सोदाहरण गृहों के प्रकार का उल्लेख कीजिये।
6. शाला का शुभाशुभ विचार लिखिये।
7. शिलान्यास विधि का वर्णन कीजिये।

इकाई - 4 गृहारम्भ मुहूर्त्त

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 गृहारम्भ मुहूर्त्त

4.4 सारांश

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. ज्योतिष पाठ्यक्रम के BAJY(N)-330 की चतुर्थ इकाई 'गृहारम्भ मुहूर्त्त' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहनिर्माण में मासादि विचार, द्वार विचार, गृहारम्भ विधि आदि का अध्ययन कर लिया है। अब आप गृह निर्माण के लिए मुहूर्त्त का निर्णय कैसे करते है? इसका अध्ययन करने जा रहे है।

गृह निर्माण आरम्भ करने के लिए ज्योतिष शास्त्र में शुभाशुभ मुहूर्त्त का विधान बतलाया गया है। अत: शुभ मुहूर्त्तानुसार ही गृहारम्भ करना चाहिए।

आइए हम सब वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत आचार्यों द्वारा प्रतिपादित 'गृहारम्भ मुहूर्त्त' से सम्बन्धित विषयों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेगें कि –

- गृहारम्भ के लिए शुभ मुहूर्त्त कौन-कौन से है।
- गृहारम्भ हेतु अशुभ मुहूर्त्त कौन है।
- गृहारम्भ में किन-किन कालों की महत्ता है।
- वास्तु शास्त्र में नूतन गृहारम्भ और जीर्ण गृह क्या है।
- मुहूर्त्त का निर्धारण कैसे करते है।

4.3 गृहारम्भ मुहूर्त्त

सर्वविदित है कि वैदिक सनातन परम्परा में मानव जीवन के जन्म काल से मृत्यु काल पर्यन्त प्रत्येक कार्य के लिए ज्योतिष शास्त्र द्वारा शुभाशुभ मुहूर्त्त का विधान बतलाया गया है। शास्त्र के प्रति आस्थावान जन-समुदाय अपने-अपने जीवन में इन शुभाशुभ मुहूर्त्त को जानकर, समझकर ही व्यवहार में प्रयोग करते हैं, ऐसा व्यवहार में देखा जाता है।

गृह की महत्ता पूर्व की इकाईयों में ही आपने समझ लिया है। अब आप गृहारम्भ के लिए शुभाशुभ कालखण्ड अथवा मुहूर्त्तादि का ज्ञान प्राप्त करने जा रहे हैं।

वास्तुशास्त्र एवं ज्योतिष के मुहूर्त्त ग्रन्थों में हमें 'गृहारम्भ मुहूर्त्त' का उल्लेख प्राय: सभी जगह दिखलाई पड़ता है।

गृहारम्भ मुहूर्त –

रोहिण्यां श्रवणात् त्रयेऽदितियुगये हस्तत्रये मूलके।
रेवत्युत्तर फाल्गुनीन्दुतुरगे मित्रोत्तराषाढयो:।।
शस्तं वास्तु कुजार्कवर्जितदिने गोकुम्भसिंहे झषे।
कन्यायां मिथुने नभ: शुचिसहोराधोर्जकं फाल्गुने।।

अर्थात् रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, अश्विनी, अनुराधा, उत्तराषाढ़ा इन नक्षत्रों में, मंगल, रवि को छोड़कर और दिनों में, वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, कुम्भ, मीन इन लग्नों में श्रावण, आषाढ़, मार्गशीर्ष, वैशाख, कार्तिक, फाल्गुन इन मासों में गृहारम्भ (वास्तु) शुभ होता है। अत: उक्त नक्षत्र, वार एवं मासों को ध्यान में रखकर ही गृहारम्भ करना चाहिए, ऐसा शास्त्र का आदेश है।

गृहारम्भ में समय शुद्धि –

कर्मसिद्धि: सुखायूंषि निमित्तशकुनादिभि:।
ज्ञात्वा प्रष्टुर्गृहारम्भे कीर्तयेत्समयं सुधी:।।

अर्थात् निमित्त शकुन आदि के द्वारा प्रश्नकर्ता के कर्म की सिद्धि, सुख और आयु इत्यादि का विचार करके गृहारम्भ का मुहूर्त्त ज्योतिर्विदों का बताना चाहिए।

निमित्त शकुन –

कालनरस्य यदंगं सौम्यग्रहवीक्षितं युतं वापि।
तच्चेत् स्पृशति प्रष्टा तदास्य निर्माणमादेश्यम्।।

कालपुरूष के जिस अंग को शुभग्रह पूर्ण दृष्टि से देखता हो, उस अंग को स्पर्श करके यदि प्रश्नकर्ता गृह का विषय पूछे तो गृह का निर्माण काल बताना चाहिए।

आरम्भं च समाप्ति च प्रासादपुरवेश्मनाम्।
उत्थिते केशवे कुर्यान्न प्रसुप्ते कदाचन।।

अर्थात् श्रीविष्णु भगवान के जागते रहने पर (आषाढ़ शुक्लपक्ष एकादशी से कार्तिक शुक्लपक्ष की एकादशी तिथि के भीतर) प्रासाद (राजमन्दिर), पुर और मकान इनका आरम्भ और प्रवेश करना चाहिए। विष्णु भगवान के शयनावस्था में गृहारम्भ करने का शुभ मुहूर्त्त नहीं होता है। यह सामान्य वचन है। अत: गृहारम्भ के समय उक्त विचार का ध्यान रखना आवश्यक है।

रत्नमाला नामक ग्रन्थ में गृहारम्भ के समय क्या करना चाहिए? यह बतलाते हुए कहते है कि -

विवाहोक्तान्महादोषानृते जामित्रशुद्धितः।
रिक्ताकुजार्कवारौ च चरलग्नं चरांशकम्।।
गुरुशुक्रार्कचन्द्रेषु स्वोच्चादिबलशालिषु।
गुर्वर्केन्दुबलं लब्ध्वा गेहारम्भः प्रशस्यते।।
द्वारशुद्धिं निरीक्ष्यादौ भशुद्धिं वृषचक्रतः।
निष्पंचके स्थिरे लग्ने द्वयंगे चालयमारभेत्।।
त्यक्त्वा कुजार्कयोश्चांशं पृष्ठे चाग्रे स्थितं विधुम्।
बुधेज्यराशिगं चार्कं कुर्याद्गेहं शुभाप्तये।।

अर्थात् विवाह में कहे गये महादोष, जामित्र, रिक्ता तिथि (४,९,१४), भौमवार, रविवार, चर लग्न (१,४,७,१०), चरलग्न का नवमांश इन सभी का त्याज्य (छोड़कर) करके, गुरु, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा इनके स्वोच्चादि बल से युक्त रहने पर और अपनी राशि से गुरु, सूर्य और चन्द्रमा इनके बली होने पर ही गृहारम्भ करना शुभदायक होता है।

पहले द्वार शुद्धि और वृषवास्तुचक्र देखकर पंचम राशि (सिंह) को छोड़कर स्थिर (२,८,११) संज्ञक और द्विस्वभाव ३,६,९,१२ लग्नों में गृहारम्भ करना चाहिये। बुध और वृहस्पति के राशि (३,६,९,१२) के सूर्य को छोड़कर शुभ फलों की प्राप्ति के लिए गृह बनाना आरम्भ करना चाहिये।

वास्तुराजवल्लभ ग्रन्थ के अनुसार गृहारम्भ में त्याज्य मास –

सूर्ये कार्मुकमीनगे सुरगुरौ सिंहे विधौ दुर्बले।
गण्डान्तव्यतिपातवैधृतिदिने दग्धे तिथौ भे तथा।।
शुक्रेऽस्तेऽथ गुरौ च पातसमये विष्ट्यां च मासेऽधिके।
चन्द्रे पापविलोकिते च सहिते कार्यं न किंचिच्छुभम्।।

अर्थात् धनु और मीन के सूर्य (पौष, चैत्र), सिंह के वृहस्पति, क्षीण चन्द्रमा, तिथि, नक्षत्र और लग्न गण्डान्त, व्यतिपात, वैधृति, दग्धातिथि, दग्धनक्षत्र, गुरु-शुक्र का अस्त, महापात, भद्रा, अधिमास, पापग्रह से दृष्ट या युक्त चन्द्रमा इनमें से किसी के रहने पर गृहारम्भ कार्य करना अशुभ बतलाया गया है। अत: इनका गृहारम्भ में त्याज्य करना चाहिये।

सौर मास शुद्धि -

गृहसंस्थापनं सूर्ये मेषस्थे शुभदं भवेत्।
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम्।।
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्धनम्।

कन्यायां रूक् तुलं सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम्।।
कार्मुके च महाहानिर्मकरे स्याद्धनागमः।
कुम्भे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्म भयावहम्।।

अर्थात् मेष राशि के सूर्य में गृहारम्भ करना शुभ, वृष राशि के सूर्य में धन की वृद्धि, मिथुन राशि के सूर्य में स्वामी का मरण, कर्क राशि के सूर्य में शुभ फलों की प्राप्ति, सिंह राशि के सूर्य में भृत्यों की वृद्धि, कन्या राशि के सूर्य में रोग, तुला राशि के सूर्य में सौख्य, वृश्चिक राशि के सूर्य में धन की वृद्धि, धनु राशि के सूर्य में महत् हानि, मकर राशि के सूर्य में धन लाभ, कुम्भ राशि के सूर्य में रत्नों का लाभ और मीन राशि के सूर्य में मकान बनाने का आरम्भ करने से भयदायक होता है अर्थात् द्विस्वभाव राशियों ३,६,९,१२ के सूर्य में निषिद्ध और चर तथा स्थिर राशियों १,२,४,५, ७,८,१०,११ के सूर्य में गृहारम्भ करना उत्तम होता है।

स्पष्टार्थ बोधक चक्रम् –

मेष	**वृष**	**मिथुन**	**कर्क**	**सिंह**	**कन्या**	**तुला**	**वृश्चिक**	**धनु**	**मकर**	**कुम्भ**	**मीन**
शुभ	धनवृद्धि	मरण	शुभ	भृत्य वृद्धि	रोग	सुख	धन वृद्धि	महती हानि	धनागम	रत्न लाभ	भय

चान्द्र मास शुद्धि-

सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिकाः।
मासाः स्युर्गहनिर्माणे पुत्रारोग्यफलप्रदाः।।

मार्गशीर्ष, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण, कार्तिक इन मासों में गृहारम्भ करने से पुत्र, आरोग्य इत्यादि की प्राप्ति होती है।

वशिष्ठ मत –

मासे तपस्ये तपसि माधवे नभसि त्विषे।
ऊर्जे च गृहनिर्माणं पुत्रपौत्र धनप्रदम्।।

तपस्य (फाल्गुन), तपस (माघ), माधव (वैशाख), नभसि (श्रावण), इष (आश्विन) और ऊर्ज (कार्तिक) ये सभी मास गृहनिर्माण में पुत्र-पौत्र धन इत्यादि की वृद्धि करने वाले होते हैं।

रत्नमाला ग्रन्थानुसार –

आषाढ़चैत्रज्ञश्वयुजोर्जमाघज्येष्ठेषु सप्रोष्ठपदेषु नूनम्।
निकेतनानां घटनं नृपाणां योगेश्वराचार्यमते न शस्तम्।।

आषाढ़, चैत्र, आश्विन, कार्तिक, माघ, ज्येष्ठ और भाद्रपद इन मासों में योगेश्वराचार्य के मत में गृह का आरम्भ करना निषिद्ध है।

'वास्तुराजवल्लभ' ग्रन्थ के अनुसार गृहारम्भ फल –

चैत्रे शोककरं गृहादिरचितं स्यान्माधवेऽर्थप्रदं।
ज्येष्ठे मृत्युकरं शुचौ पशुहरं तद्वृद्धिदं श्रावणे।।
शून्ये भाद्रपदे त्विषे कलिकरं भृत्यक्षयं कार्तिके।
धान्यं मार्गसहस्ययोर्दहनभीर्माघे श्रियं फाल्गुने।।

स्पष्टार्थ बोधक चक्रम् –

चैत्र	**वैशाख**	**ज्येष्ठ**	**आषाढ़**	**श्रावण**	**भाद्रपद**	**आश्विन**	**कार्तिक**	**मार्गशीर्ष**	**पौष**	**माघ**	**फाल्गुन**
शोक	धन प्राप्ति	मरण	पशु हानि	पशु वृद्धि	शून्य	कलह	भृत्य नाश	धान्य	धनागम	अग्नि भय	श्री

जीर्ण (पुराना) गृहनिर्माण में मासशुद्धि विचार –

जीर्णोद्धारे जलाग्न्यादिभयत: पतिते गृहे।
श्रावणोर्जे तथा माघे कारयेत्सुखदं गृहम्।।

जल, अग्नि और वायु इत्यादि के द्वारा गिरे हुए मकान का जीर्णोद्धार कराने के लिए श्रावण, कार्तिक और माघ में आरम्भ करने से शुभ होता है। इस श्लोक में स्पष्ट है कि मुहूर्त्त संकोच से नये मकान को पूर्वोक्त पद्यों द्वारा श्रावण, कार्तिक और माघ में आरम्भ करना लिखा है किन्तु मार्गशीर्ष, वैशाख, फाल्गुन और ज्येष्ठ इन्हीं ४ मासों में मकान बनवाने का कार्य आरम्भ करना चाहिए।

तृणकाष्ठ आदि के घर में मास नियम –

निषिद्धेष्वपि ऋक्षेषु स्वानुकूले शुभे दिने।
तृणदारूगृहारम्भे मासदोषो न विद्यते।।
पाषाणेष्टयादिगेहानि निन्द्यमासे न कारयेत्।
तृणदारूगृहारम्भे मासदोषो न विद्यते।।

अर्थात् निषिद्ध नक्षत्रों में भी शुभ दिन हो और अपने अनुकूल चन्द्रमा हों तो तृण और काठ के द्वारा बने मकान में मास-शुद्धि का विचार नहीं करना चाहिये। पत्थर, ईंट इत्यादि के मकान को निन्द्य मासों में आरम्भ करना अशुभ होता है। किन्तु तृण और काष्ठ के मकान में मासदोष का विचार नहीं होता है।

बोध प्रश्न -

1. गृहारम्भ कब शुभ होता है?
   क. श्रावण ख. आषाढ़ ग. मार्गशीर्ष घ.उपर्युक्त सभी
2. मेष राशि के सूर्य में गृहारम्भ करने का फल क्या होता है?
   क. अशुभ ख. शुभ ग. मरण घ. धन प्राप्ति
3. कृष्णपक्ष में गृहारम्भ कार्य आरम्भ करने से क्या होता है?
   क. सौख्य ख. चोरभय ग. धन हानि घ. मरण
4. तृण और काष्ठादि के मकान में किसका विचार नहीं होता है?
   क. पक्ष दोष का ख. मास दोष का ग. तिथि का घ. कोई नहीं
5. जीर्णगृह निर्माण आरम्भ किस मास में शुभ होता है।
   क. श्रावण ख. माघ ग. मार्गशीर्ष घ. सभी
6. गृहनिर्माण में प्रतिपदा तिथि का फल क्या है?
   क. मरण ख. दारिद्रय ग. शुभ घ. लक्ष्मी प्राप्ति

पक्ष शुद्धि -

शुक्लपक्षे भवेत्सौख्यं कृष्णे तस्करतो भयम्।
तस्माद्विचार्य कर्तव्यं यदीच्छेच्छ्रियमात्मनः।।

शुक्लपक्ष में गृहारम्भ करने से सौख्य और कृष्णपक्ष में गृहारम्भ करने से चोरभय होता है। इसलिए अपना हित चाहने वाले व्यक्ति को इनका विचार करके मकान बनवाना चाहिये।

पंचांग शुद्धि –

द्वितीया पंचमी मुख्या तृतीया षटिका तथा।
सप्तमी दशमी चैव द्वादश्येकादशी तथा।।
त्रयोदशी पंचदशी तिथयः स्युः शुभावहाः।
दारिद्रयं प्रतिपत्कुर्याच्चतुर्थी धनहारिणी।।
अष्टम्युच्चाटनं चैव नवमी शस्यघातिनी।
दर्शे राजभयं ज्ञेयं भूते दारविनाशनम्।।

इसका अर्थ है कि द्वितीया, पंचमी, तृतीया, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, पूर्णिमा, ये तिथियाँ गृहारम्भ में शुभ फल देने वाली होती हैं। प्रतिपदा दारिद्रय को देने वाली, चतुर्थी

धन की हानि करने वाली, अष्टमी उच्चाटन करने वाली, नवमी धान्य का नाश करने वाली, अमावस्या राजभय को देने वाली और चतुर्दशी स्त्रियों का विनाश करने वाली होती है।

ज्योतिर्निबन्ध ग्रन्थ के अनुसार नक्षत्र शुद्धि –

उत्तरेपि च रोहिण्यां पुष्ये मैत्रे करद्वये।
धनिष्ठाद्वितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्यते।।

तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा और रेवती इन ११ नक्षत्रों में गृहारम्भ करना प्रशस्त होता है।

ग्रन्थान्तर मुहूर्त्त -

स्वैत्रे मैत्रेऽथ माहेन्द्रे गान्धर्वे भगरोहिणी।
तथा वैरोचे सावित्रे मुहूर्त्ते गृहमारभेत्।।

अर्थात् स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, पू0फा0, रोहिणी, मूल, हस्त इन ७ मुहूर्त्तो में गृहारम्भ करना उत्तम होता है।

गृहारम्भ हेतु विशिष्ट योग –

शनिः स्वाती सिंहलग्नं शुक्लपक्षश्च सप्तमी।
शुभयोगः श्रावणश्च सकाराः सप्त कीर्तिताः।।
सप्तानां योगतो वास्तुः पुत्रपौत्रप्रदः सदा।
गाजाश्वधनधान्यादि पुरे तिष्ठन्ति सर्वतः।।

शनिवार, स्वाती नक्षत्र, सिंह लग्न, शुक्ल पक्ष, सप्तमी तिथि, शुभ योग और श्रावण मास ये सात सकार होते हैं। इन सातों के योग से गृहारम्भ गज, अश्व, धन, धान्य, पुत्र, पौत्र आदि देने वाला उत्तम योग होता है।

गृहारम्भ में लग्नशुद्धि विचार –

यहाँ नीचे सूर्यादि प्रत्येक ग्रहों का द्वादश भावों में गृहारम्भ के अन्तर्गत शुभाशुभ लग्न शुद्धि विचार का चक्र आप सभी के बोध के लिए दिया जा रहा है –

ग्रहाः / भाव	सूर्य	चन्द्रमा	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
प्रथम भाव १	वज्रपात	कोश हानि	मृत्यु	सामर्थ्य	त्रिवर्ग	पुत्रोत्पत्ति	दारिद्रय
धन भाव २	हानि	शत्रुक्षय	बन्धन	धन संपत्	धर्म लाभ	विनोद	नानाविध
तृतीय ३	विशेष शुभ	शुभ	अतिशुभ	शुभ	शुभ	शुभ	अतिशुभ

चतुर्थ ४	महालाभ	बुद्धिनाश	मित्रभेद	लाभ	नृपमान्य	भूमिलाभ	मित्रयोग
पंचम ५	पुत्रपीड़ा	कलह	कार्यहानि	स्वर्णप्राप्ति	मित्रार्थ लाभ	पुत्रार्थ लाभ	कामनाश
षष्ठ ६	राजपूजा	पुष्टि	लाभ	मानज्ञान	कौशल्या	धन लाभ	विद्यालाभ
सप्तम ७	कीर्तिभंग	रोग	विग्रह	हयभोग	गजभोग	भूमिभोग	नानाभय
अष्टम ८	शत्रुजन्य दु:ख	हानि	भय	मान धन प्राप्ति	विजय	स्वजन सुख	भय
नवम ९	धर्महानि	धातुक्षय	सामर्थ्य हानि	नाना भोग लाभ	बुद्धिभाग्य वृद्धि	मन्दोदय	कामदूषण
दशम १०	धनवृद्धि	कोशवृद्धि	बलवृद्धि	विजय	महत्सौख्य	शय्यासनादि सुख	कीर्तिलेप
एकादश ११	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ	शुभ
द्वादश १२	हानि	हानि	हानि	हानि	हानि	हानि	हानि

गृहप्रवेश मुहूर्त्तः -

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे
यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे।
स्याद्वेशनं द्वा:स्थमृदुध्रुवोडुभि
जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे।।

सूर्य के उत्तरायण होने पर मकर संक्रान्ति से मिथुन संक्रान्ति पर्यन्त, ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन एवं वैशाख मासों में गृह के मुख्य द्वार की दिशा वाले नक्षत्रों में तथा मृदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) और ध्रुवसंज्ञक (उ0फा0, उ0षा0, उ0भा0, रोहिणी) नक्षत्रों में जन्मराशि और जन्मलग्न से उपचय (३,६,१०,११) भावों में स्थित लग्नों एवं स्थिर (२,५,८,११) लग्नों में यात्रा के निवृत्ति पर राजा का अपने गृह में पुन: प्रवेश (सपूर्व प्रवेश) तथा नूतन गृह में प्रथम प्रवेश (अपूर्व प्रवेश) शुभ होता है।

गृहप्रवेश तीन प्रकार का होता है –

१. अपूर्व गृहप्रवेश
२. सपूर्व गृहप्रवेश
३. द्वन्द्वाभय प्रवेश

कुछ विद्वानों ने वधूप्रवेश को भी इसी के साथ गणना कर प्रवेश को ४ प्रकार का बतलाया है। वस्तुत: गृहप्रवेश तीन प्रकार का ही माना गया है। वसिष्ठ ने तीनों प्रवेशों का लक्षण इस प्रकार

कहा है –

अपूर्वसंज्ञ: प्रथमप्रवेशो
यात्रावसाने तु सपूर्वसंज्ञ:।
द्वन्द्वाभयस्त्वग्निभयादिजात -
स्त्वेवं प्रवेशस्त्रिविध: प्रदिष्ट:।।

अर्थात् नूतननिर्मित गृह में प्रथम प्रवेश अपूर्व संज्ञक एक बार मुहूर्त्त से यात्रा आरम्भ कर यात्रा की समाप्ति पर राजा पुन: मुहूर्त्त के अनुसार ही राज प्रसाद में जब प्रवेश करता है उसे यात्रानिवृत्ति में पुन: प्रवेश को सपूर्व संज्ञक तथा जल, अग्नि एवं राजकोप आदि से पीड़ित व्यक्ति किसी अन्य गृह में प्रवेश करता है उसे द्वन्द्वाभय प्रवेश कहते हैं।

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत्।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगै: शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकै:।।
शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे
अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्विश्म भकूटशुद्धम्।।

मृदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) ध्रुवसंज्ञक (तीनों उत्तरा, रोहिणी), चरसंज्ञक (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष) एवं मूल नक्षत्रों में वास्तुपूजन कर भूतबलि देनी चाहिये। अनन्तर जिस लग्न से त्रिकोण (५,९) केन्द्र (१,४,७,१०) ११,२ और ३ भावों में शुभ ग्रह स्थित हों , ३,६,११ भावों में पापग्रह गये हों, ४,८ भाव शुद्ध ग्रहरहित हों तथा गृहस्वामी के जन्मलग्न या जन्मराशि से अष्टम राशि प्रवेश लग्न में न हो, रविवार, भौमवार, रिक्ता ४,९,१४ तिथि, चर (१,४,७,१०) लग्न अमावस्या और चैत्र मास छोड़कर तथा भकूट (२ × १२ , ५ × ९ , ६ × ८ को छोड़कर) शुद्ध होने पर , जल से पूर्ण कलश और ब्राह्मण को आगे कर गृह में प्रवेश करना चाहिए।

गृहप्रवेश के पूर्व वास्तुपूजन का विधान है। पूजन के अनन्तर कलश, गौ, ब्राह्मण, आदि के साथ अपने – अपने कुलाचार एवं देशाचार के अनुसार गृहप्रवेश होता है। वसिष्ठ ने गृहप्रवेश की विधि बतलाते हुए लिखा है - शुक्र को पीछे तथा सूर्य को वाम भाग में कर, ब्राह्मणों तथा पूज्य पुरूषों का पूजन कर तोरण, माला, फूल, वितान आदि से सुसज्जित कर आगे पूर्णकलश, स्त्री एवं गीत वाद्य के साथ प्रवेश करना चाहिये।

गृहप्रवेशनिर्देश –

आदौ साम्यायने कार्यं नववास्तु प्रवेशनम्।

राज्ञा यात्रानिवृत्तौ च यद्वा द्वन्द्वप्रवेशनम्।।
विधाय पूर्वदिवसे वास्तुपूजां बलिक्रियान्।
माघ – फाल्गुन- वैशाख – ज्येष्ठमासेषु शोभनः।।
प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः।
प्रवेशे निर्णयः प्रोक्तः शास्त्रज्ञैः पूर्वसूरिभिः।।
गृहारम्भोदिते मासे धिष्ण्ये वारे विशेद् गृहम्
विशेत्सौम्यायने हर्म्यं तृणागारे तु सर्वदा।।

नवीन गृह में प्रवेश उत्तरायण में करना चाहिये। यात्रा निवृत्ति पर राजा का गृहप्रवेश भी उत्तरायण में शुभ होता है, द्वन्द्वात्मक प्रवेश भी उत्तरायण में ही करना चाहिये।

पहले दिन वास्तु पूजा और बलिदान करके माघ फाल्गुन वैशाख, ज्येष्ठ में गृहप्रवेश होता है तथा कार्तिक, मार्गशीर्ष में गृहप्रवेश मध्यम होता है।

गृहारम्भ के लिये कहे गये नक्षत्र तथा वार के समय सूर्य उत्तरायण में हो तो ईंट, पत्थर मिट्टी के गृह में प्रवेश करना शुभ होता है। तृणनिर्मित गृह में कभी भी शुभ दिन वार में प्रवेश किया जा सकता है।

शुभयोग निर्देश –

पौष्णे धनिष्ठास्वथ वारूणेषु स्वायंभुवर्क्षेषु त्रिषूत्तरासु।
अक्षीणचन्द्रे शुभवासरे च तिथावरिक्ते च गृहप्रवेशः।।
शुभः प्रवेशो देवेज्यशुक्रयोर्दृश्यमानयोः।
व्यर्कावारतिथिषु रिक्तामावर्जितेषु च ।।
वस्वीज्यान्त्येन्दुवरूणत्वाष्ट्रमित्रस्थिरोडुषु
दिवा वा यदि वा रात्रौ प्रवेशो मंगलप्रदः।।

रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा, रोहिणी, तीनों उत्तरा ये नक्षत्र हों, चन्द्रमा क्षीण न हो, रिक्ता के अतिरिक्त तिथि हो तो गृहप्रवेश शुभ होता है।

वृहस्पति एवं शुक्र उदयी हों, रवि, मंगलवार तथा रिक्ता तिथियों को छोड़ कर धनिष्ठा, पुष्य, रेवती, मृगशिरा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा नक्षत्र हो तो ऐसे अवसर पर दिन अथवा रात्रि में प्रवेश शुभ होता है।

जीर्ण का शाब्दिक अर्थ है – पुराना। जीर्णगृहप्रवेश में पुराने गृह का जीर्णोद्धार करते हुए या पुर्ननिर्माण करते हुए उसमें प्रवेश करते है। इसका विवेचन करते हुए आचार्य रामदैवज्ञ जी ने मुहूर्त्तचिन्तामणि में लिखा है –

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयो: श्रवणिकेऽपि सन् स्यात्।
वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादिविचारणाऽत्र।।

जीर्ण गृह में तथा अग्निवृष्टि – राजकोप आदि से गृह नष्ट हो जाने पर नवनिर्मित गृह में भी मार्गशीर्ष, कार्तिक, और श्रावण मासों में शतभिष, पुष्य, स्वाती तथा धनिष्ठा नक्षत्रों में भी गृहप्रवेश शुभ होता है। ऐसी स्थिति में गुरू और शुक्र के अस्त आदि का विचार आवश्यक नहीं होता है। जीर्ण गृह में भी प्रथम प्रवेश की आवश्यकता पड़ती ह। जैसे किसी निर्मित प्राचीन गृह को क्रय कर उसमें प्रवेश करना हो या जीर्ण गृह का जीर्णोद्धार कर पुन: उसमें निवास हेतु प्रवेश करना **जीर्णगृह प्रवेश** होता है। यदि वर्षा, बाढ़, भूकम्प, अग्निदाह, राजकीय आदेश आदि से निर्मित गृह ध्वस्त हो जाय तथा उसी स्थान पर या अन्यत्र सद्य: नवनिर्मित गृह में भी प्रवेश जीर्णगृह की तरह ही उन्हीं मुहूर्त्तों में कर लेना चाहिये।

गृहप्रवेश में कुम्भ चक्र विचार -

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाह: कृता:।
प्राच्यामुद्वसनं कृतायमगता: लाभ: कृता: पश्चिमे।।
श्रीर्वेदा: कलिरूत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे
रामा: स्थैर्यमत: स्थिरत्वमनला कण्ठे भवेत्सर्वदा।।

गृहप्रवेश के समय कुम्भ चक्र बना कर उसके अनुसार शुभाशुभ का निर्णय करके गृहप्रवेश करना चाहिये। सूर्य के नक्षत्र से कलशचक्र के मुख में १ नक्षत्र रखें, इसमें प्रवेश करने से अग्निदाह, इसके पूर्व में ४ नक्षत्र उद्वास , ४ नक्षत्र दक्षिण में लाभ, ४ नक्षत्र पश्चिम में लक्ष्मी प्राप्ति, ४ नक्षत्र उत्तर में, कलह, ४ नक्षत्र गर्भ में गर्भ नाश, ३ नक्षत्र गुद में स्थिरता और ३ नक्षत्र कण्ठ में सुस्थिरता होती है।

गृहारम्भे कुम्भचक्र -

स्थान	**नक्षत्र**	**फल**
मुख	१	अग्निदाह
पूर्व	४	उद्वसन
दक्षिण	४	लाभ

पश्चिम	४	लक्ष्मी
उत्तर	४	कलह
गर्भ	४	विनाश
अध:	३	स्थिरता
कण्ठे	३	स्थिर

वास्तु प्रदीप ग्रन्थ में गृहप्रवेश विचार -

वैशाखमासेऽपि च फाल्गुनेऽपि ज्येष्ठे प्रवेश: शुभदो गृहस्य।
यात्रानिवृत्तावथवा नवस्य भूमिभुजां द्विर्भवनस्थिरेषु।।

फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ में द्विस्वभाव अथवा स्थिर लग्नों में यात्रा से लौटने के पश्चात् अथवा नवीन गृह में प्रवेश शुभ होता है।

माण्डव्यमत में विशेष विचार –

सूत्र शंकु शिला द्वार तुलाच्छादनपूर्वकम्।
कार्यस्तम्भप्रतिष्ठोक्ते धिष्ण्ये वारे तिथौ तथा।।

सूत्र, शंकु, शिलान्यास, द्वारस्थापन, गृहच्छादन, स्तम्भ प्रतिष्ठा आदि में निर्दिष्ट नक्षत्र, तिथि,वार, योग लग्नों में ही उक्त कार्य करना चाहिये।

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि सर्वविदित है कि वैदिक सनातन परम्परा में मानव जीवन के जन्म काल से मृत्यु काल पर्यन्त प्रत्येक कार्य के लिए ज्योतिष शास्त्र द्वारा शुभाशुभ मुहूर्त्त का विधान बतलाया गया है। शास्त्र के प्रति आस्थावान जन-समुदाय अपने-अपने जीवन में इन शुभाशुभ मुहूर्त्त को जानकर, समझकर ही व्यवहार में प्रयोग करते हैं, ऐसा व्यवहार में देखा जाता है। अर्थात् रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, अश्विनी, अनुराधा, उत्तराषाढ़ा इन नक्षत्रों में, मंगल, रवि को छोड़कर और दिनों में, वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, कुम्भ, मीन इन लग्नों में श्रावण, आषाढ़, मार्गशीर्ष, वैशाख, कार्तिक, फाल्गुन इन मासों में गृहारम्भ (वास्तु) शुभ होता है। अत: उक्त नक्षत्र, वार एवं मासों को ध्यान में रखकर ही गृहारम्भ करना चाहिए, ऐसा शास्त्र का आदेश है।

निमित्त शकुन आदि के द्वारा प्रश्नकर्ता के कर्म की सिद्धि, सुख और आयु इत्यादि का विचार करके गृहारम्भ का मुहूर्त्त ज्योतिर्विदों का बताना चाहिए। कालपुरूष के जिस अंग को शुभग्रह पूर्ण दृष्टि से देखता हो, उस अंग को स्पर्श करके यदि प्रश्नकर्ता गृह का विषय पूछे तो गृह का निर्माण काल बताना चाहिए। श्रीविष्णु भगवान के जागते रहने पर (आषाढ़ शुक्लपक्ष एकादशी से कार्तिक शुक्लपक्ष की एकादशी तिथि के भीतर) प्रासाद (राजमन्दिर), पुर और मकान इनका आरम्भ और प्रवेश करना चाहिए। विष्णु भगवान के शयनावस्था में गृहारम्भ करने का शुभ मुहूर्त्त नहीं होता है। यह सामान्य वचन है। अत: गृहारम्भ के समय उक्त विचार का ध्यान रखना आवश्यक है। रत्नमाला नामक ग्रन्थ में गृहारम्भ के समय क्या करना चाहिए? यह बतलाते हुए कहते है कि -विवाह में कहे गये महादोष, जामित्र, रिक्ता तिथि (४,९,१४), भौमवार, रविवार, चर लग्न (१,४,७,१०), चरलग्न का नवमांश इन सभी का त्याज्य (छोड़कर) करके, गुरु, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा इनके स्वोच्चादि बल से युक्त रहने पर और अपनी राशि से गुरु, सूर्य और चन्द्रमा इनके बली होने पर ही गृहारम्भ करना शुभदायक होता है। पहले द्वार शुद्धि और वृषवास्तुचक्र देखकर पंचम राशि (सिंह) को छोड़कर स्थिर (२,८,११) संज्ञक और द्विस्वभाव ३,६,९,१२ लग्नों में गृहारम्भ करना चाहिये। बुध और वृहस्पति के राशि (३,६,९,१२) के सूर्य को छोड़कर शुभ फलों की प्राप्ति के लिए गृह बनाना आरम्भ करना चाहिये।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

गृहारम्भ - गृह निर्माण का आरम्भ

शुभाशुभ – शुभ और अशुभ

शयनावस्था – सोने की अवस्था

रिक्ता – ४,९,१४ तिथियाँ

नन्दा – १,६,११ तिथियाँ

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. घ
2. ख
3. ख
4. ख
5. घ

6. ख

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वास्तुसार – प्रोफेसर देवीप्रसाद त्रिपाठी

वृहद्वास्तुमाला – टीकाकार – डॉ. हरिशंकर पाठक

मुहूर्त्तचिन्तामणि – रामदैवज्ञ, टीकाकार – आचार्य रामचन्द्र पाण्डेय

वास्तुरत्नाकर – विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी

4.9 सहायक पाठ्यसामग्री

वास्तुराजवल्लभ

मयमतम्

वास्तुप्रबोधिनी

मुहूर्त्तचिन्तामणि

वृहत्संहिता

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गृहारम्भ का महत्व प्रतिपादित करते हुए उसका मुहूर्त्त लिखिये।
2. गृहारम्भ निर्माण में विविध मास विचार फल लिखिये।
3. गृहारम्भ में पंचांग शुद्धि तथा लग्नशुद्धि का वर्णन कीजिये।
4. गृहप्रवेश से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट करते हुए लिखिये।

खण्ड -3

अन्य विचार

इकाई - 1 कुम्भ चक्र विचार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 कुम्भ चक्र का महत्त्व

1.4 कुम्भ चक्र का स्वरूप

1.5 कुम्भ चक्र जाननें की शास्त्रीय विधि

1.6 कुम्भ चक्र का प्रायोगिक उदाहरण

1.7 सारांश

1.8 पारिभाषिक शब्दावली

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.11 सहायक पाठ्यसामग्री

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

शास्त्रोक्त पद्धति से भूमि चयनादि के पश्चात् ज्योतिष शास्त्र प्रतिपादित गृहारम्भ मुहूर्त्त में गृहारम्भ होनें के पश्चात् वास्तुशास्त्रीय व्यवस्था के अनुरूप भवन निर्माणादि की प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है। भवन निर्माण पूर्ण होनें के उपरान्त गृहस्वामी स्व परिवार जनों के सहित उस नूतन निर्मित गृह में निवास हेतु सर्वप्रथम उद्यत होता है। अपने गृह में किया गया समस्त शुभ कर्म सभी प्रकार के ऐष्वर्यों को देनें वाला होता है तथा गृहस्वामी के मनोरथों को भी पूर्ण करनें वाला होता है। जैसा कि कहा भी गया है –

गृहस्थस्य कियाः सर्वाः न सिद्ध्यन्ति गृहं विना।

यतस्तस्माद् गृहारम्भप्रवेशसमयौ ब्रुवे।।

सनातन परम्परा में प्रायः सभी शुभ कार्य मुहूर्त्त देखकर के ही किए जाते हैं। मुहूर्त्त का निर्धारण ज्योतिष शास्त्र द्वारा किया जाता है। मुहूर्त्त शब्द का तात्पर्य यह होता है कि किया की निर्विघ्न पूर्णता हेतु शुभकाल का चयन करना। शुभ काल में किए गए कर्म चिरकाल तक स्थायी होते हैं तथा अदृष्ट फलों को भी प्रदान करते हैं। जिस प्रकार से गृहारम्भ में कालशुद्धि हेतु अनेक चक्रो का तथा अनेक संयोगों का चयन किया जाता है ठीक उसी प्रकार गृहप्रवेश हेतु भी अनेक चक्रो का शोधन तथा कालशुद्धि का चयन किया जाता है। ज्योतिष शास्त्र में प्रायः सभी कर्मो हेतु एक विशेष चक्र की शुद्धि देखी जाती है। चक्र शुद्धि होनें के पश्चात् ही पंचांग शोधन का कार्य किया जाता है। जिस प्रकार गृहारम्भ में वृषचक्रशुद्धि देखी जाती है, भूगर्भ स्थित स्वादु जल परिज्ञान हेतु कूपचक्र की शुद्धि की जाती है ठीक उसी प्रकार गृहप्रवेश में कलश चक्र की शुद्धि देखी जाती है । चक्र शुद्धि का तात्पर्य यह होता है कि अमुक कार्य सिद्धि हेतु अमुक चक्र में ग्रह–नक्षत्र–राशि का विशिष्ट संयोग होता है। यही आकाशीय विशिष्ट संयोग ही उस कार्य की सफलता को द्योतित करता है।

गृह प्रवेश एक मांगलिक कृत्य है। जिसमें अनेक प्रकार के मंगल मन्त्रों का पाठ होता है एवं तदनुरूप ही कियाए होती हैं। गृहप्रवेश में अनेक प्रकार के मंगल कलशों का भी प्रयोग किया जाता है। इसी वेदोक्त मंगल कलश की शुभता को अंगीकार करते हुए ज्योतिष शास्त्र में कलश चक्र की शुद्धि का विधान किया गया है। गृह प्रवेश तभी करते हैं जब कलश चक्र या कुम्भ चक्र की शुद्धि मिलती है। इस कुम्भ चक्र का निर्माण किस प्रकार होता है? इसके द्वारा किस प्रकार शुभाशुभत्व का परिज्ञान किया जाता है? इसका महत्त्व क्या है? किस प्रकार से इसको सरल पद्धति से समझा जा सकता है ? इन सभी का स्पष्ट विवरण इस पाठ में दिया गया है। अतः इस पाठ का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप ...

- ❖ जान सकेंगे कि गृहप्रवेश में कुम्भ चक्र का क्या महत्त्व है ।
- ❖ जान सकेंगे कि कुम्भ चक्र का निर्माण किस प्रकार से होता है ।
- ❖ समझ सकेंगे कि कुम्भ चक्र का शुभाशुभत्व निर्धारण किस प्रकार होता है ।
- ❖ जान सकेंगे कि कुम्भचक्र में नक्षत्रों की स्थापना किस प्रकार से की जाती है।
- ❖ समझ सकेंगे कि सूर्य और चन्द्रनक्षत्र का विशिष्ट संयोजन किस प्रकार से है।

1.3 कुम्भ चक्र का महत्त्व

प्राचीन पौराणिक कथाओं के अनुसार समुद्र मन्थन द्वारा अनेक अलौकिक एवं दिव्य वस्तुएं समुद्र में से निकली थीं। जिसकों अनेक देवताओं ने अपनाकर अपने वैभव को पुष्ट किया किन्तु समुद्र मन्थन से जो सर्वाभीष्ट वस्तु थी वह था अमृत कलष। इसी अमृत कलष को पाने के उद्देष्य से देवता एवं राक्षसगण एकत्रित हुए थे। चतुर्दश रत्नों में सर्वश्रेष्ठ रत्न अमृत कलश ही था। जिसको देवताओं के वैद्य धन्वन्तरी लेकर समुद्र से निर्गत हुए थें। इस कुम्भ में अमृत के साथ साथ अनेक प्रकार की दिव्य औषधियां भी थी। इन्हीं दिव्य औषधिओं के द्वारा देवताओं के वैद्य धन्वन्तरी देवताओं की चिकित्सा करते थें। इस अमृत कलश को प्राप्त करनें के उद्देश्य से ही देवताओं और दैत्यों नें समुद्र मन्थन किया। इस अमृत को देवतागण पीकर अमर हो गए और अमृत की जिस स्थानों पर गिरी थीं वहां पर आज भी कुम्भ का आयोजन होता है। अतः हमारे सत्य सनातन धर्म में कुम्भ का बहुत ही माहात्म्य है। कोई भी धार्मिक कृत्य विना कुम्भ के सम्भव ही नहीं होता है। कोई सी भी सतातनीय पूजा पद्धति हो वहां पर कलष पूजन अवश्य होता है। ऐसा मान्यता है कि कलश में ही सभी देवताओं का वास होता है। पृथ्वी पर जितनें भी तीर्थ स्थान है, नदीयां है, समुद्र है, पर्वत है जो कुछ भी इस पृथ्वी पर मूल्य वान वस्तु है वह सभी कलश में समाहित है। प्रायः सभी देवताओं के हाथ में भी कलश सन्निहित होता है। अतः कलष का माहात्म्य तो सनातन पद्धति में सर्वोपरि है। कलश की उत्पत्ति के प्रसंग में वर्णन प्राप्त होता है –

देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।।

कलश में अंगो में सभी देवों का वास है इस विषय में कहा गया है कि –

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रूद्रः समाश्रितः।
मूल त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्त द्वीपा वसुन्धरा।

अर्थात् कलश के मुख में विष्णु भगवान् का वास होता है। कण्ठ में भगवान् शिव का वास होता है। मूल भाग में ब्रह्मा का वास होता है। मध्य भाग में सभी माताए निवास करती है। कुक्ष भाग में सभी सागर सहित सप्त द्वीपवती पृथ्वी का वास होता है । इस प्रकार कुम्भ के सभी अंगों में देवताओं का निवास बताया गया है। इसी को दृष्टिकोण में रखते हुए कुम्भ चक्र की प्रधानता ज्योतिष षास्त्र में स्वीकार की गई है।

1.4 कुम्भ चक्र का स्वरूप

पृथ्वी पर प्रत्येक पार्थिव वस्तु का कुछ न कुछ स्वरूप अवश्य ही होता है। इसी प्रकार कलश का भी अपना एक विशिष्ट स्वरूप होता है। जिसके द्वारा उसके आभ्यन्तर एवं बाह्य संरचना के आधार पर उसके गुणों का वर्णन किया जाता है। जिस प्रकार से मानव शरीर में मुख, कण्ठ, नाभि, गुदा, पैर इत्यादि अवयव होते हैं ठीक इसी प्रकार कलश के भी कुछ अवयव निर्धारित किये गये है शास्त्रों में। अवयव निर्धारित करनें का तात्पर्य यह होता है कि वह वस्तु उस अवयव से हीन नहीं होनी चाहिए। अवयव से हीन वस्तु होनें पर उसके फलों में न्यूनता आ जाती है। जिस प्रकार कोई कारीगर सुन्दर हिरण की आकृति बनाए किन्तु उसमें नेत्र स्थापित न करें तो वह सुशोभित नहीं होता है उसी प्रकार अंगों से हीन वस्तु भी शोभायमान प्रतीत नहीं होती है।

कलश में मुख्य रूप से चार अंग होते है। मुख, कण्ठ, गर्भ और गुदा ये चार प्रमुख अंग होते हैं तथा चार प्रमुख दिशाए होती है पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण। इन्हीं आठ अवयवों से युक्त कुम्भ का बाह्य एवं आभ्यन्तर स्वरूप होता है। कुम्भ में अंगों का समाहार इसी प्रकार किया जाता है।

अभ्सास प्रश्न – 1

1. कलश की उत्त्पत्ति किस स्थान से हुई थी ?
   क. समुद्र मन्थन   ख. देव दानव युद्ध
   ग. ब्रह्मा से   ग. इनमें से कोई नहीं

2. कलश के मुख में किस देवता का वास होता है ?

क. षिव ख. विष्णु
ग. ब्रह्मा से ग. गणेष

3. पृथ्वी पर कितनें द्वीप हैं ?
क. चार ख. पांच
ग. छह ग. सात

4. इनमें से कौन सा अंग कलष में नहीं होता है?
क. मुख ख. कण्ठ
ग. गर्भ ग. पैर

5. कलष में कितनी दिषाओं का समायोजन होता है?

क. 2 ख. 4

ग. 8 ग. 10

1.5 कुम्भ चक्र जाननें की शास्त्रीय विधि

उपर्युक्त सभी तथ्यों को जान लेनें के पश्चात् कुम्भ चक्र जाननेंकी शास्त्रीय विधि का उल्लेख किया जा रहा है। कुम्भ चक्र या कलश चक्र के विषय में प्रायः सभी शास्त्रकार एकमत रखते हैं। इसमें किसी भी प्रकार का मत मतान्तर नहीं प्राप्त होता है । कुम्भ चक्र जाननें की जो सर्वाधिक प्रचलित विधि है वह है रामदैवज्ञ द्वारा निर्मित ग्रन्थ मुहूर्त्तचिन्तामणि । इसके त्रयोदष प्रकरण गृहप्रवेश प्रकरण में कलशवास्तु चक्र के स्वरूप के विषय में इस प्रकार कहा गया है –

वक्त्रे भू रविभात् प्रवेश समये कुम्भेग्निदाहः कृताः

प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे ।

श्रीर्वेदाः कलिरूत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे

रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत् सर्वदा ।।

गृहप्रवेश में कलश चक्रशुद्धि होनी परम आवश्यक है । कलश चक्र को ही कुम्भ चक्र के नाम से भी जाना जाता है या कलश के जितनें भी पर्यायवाची शब्द हैं, उन सभी के नाम से इस कुम्भ चक्र को जाना जाता है । जैसा कि पहलें बताया गया है कि कुम्भ चक्र

विचार प्रसंग में पूर्वादि दिशाओं सहित आठ अवयव मुख्य रूप से निर्धारित होते हैं । इन्हीं आठ अवयवों का शुभाशुभ फल निर्धारित किया गया है। कहनें का तात्पर्य यह है कि गृहारम्भ में जब हम भूमि के अन्दर नन्दादि शिलाओं के उपर कलशों की स्थापना करते हैं तो वे सभी कलशाधिष्ठित देवता हमारे गृह की सर्वदा रक्षा करते हैं । यदि कलश चक्र की शुद्धि के विना ही गृह में प्रवेश किया जाए तो निष्चित रूप से कलश निर्दिष्ट अंग के अनुरोध से गृहस्वामी के तदंग में पीडा विषेष अवश्य ही होती है। अतः यह कलष ही गृहजन्य हमारे सुख और समृद्धि के द्योतक होते हैं। अतः प्रयत्न पूर्वक इनकी षुद्धि और अषुद्धि का विचार अवष्य ही करना चाहिए ।

कलष चक्र का विचार में मुख्य रूप से सूर्य और चन्द्र दोनों का ग्रहण करते हैं । सूर्य और चन्द्र के मध्य एक विषिष्ट दूरी का आनुपातिक संयोग ही गृहप्रवेष में सुख और दुःख का प्रदायक होता है । सूर्य स्थित नक्षत्र से चन्द्र स्थित नक्षत्र का विषेष संयोग ही कुम्भ चक्र का मुख्य विषय है । सूर्य से कितनें नक्षत्र की दूरी तक चन्द्र नक्षत्र षुभ होता है अथवा सूर्य नक्षत्र से कितनें नक्षत्र की दूरी तक चन्द्र नक्षत्र अषुभ होता है । केवल इसी का विचार कुम्भ चक्र में किया जाता है । कुम्भ चक्र में अष्विन्यादि 27 नक्षत्रों की गणना की जाती है किन्तु गृहारम्भ में वृष वास्तु चक्र में साभिजिद् 28 नक्षत्रों की गणना की जाती है । सूर्य 1 नक्षत्र पर लगभग 12 दिनों तक रहता है तथा चन्द्र 1 नक्षत्र पर 1 दिन तक रहता है । इसका विषेष ध्यान रखना चाहिए । अन्यथा गणना करनें में त्रुटि हो जाती है । काषी इत्यादि के पारम्परिक पंचांगों में कलष चक्र षुद्धि वाले गृहप्रवेष मुहूर्त्त दिये जाते है किन्तु कुछ पंचांगों में विना कलष चक्र की षुद्धि वाले मुहूर्त्त दिये जाते है । अतः पंचागों में जो मुहूर्त्त दिये जाते है उनका विचार स्वयं करके तथा निर्दिष्ट मुहूर्त्त का स्वविवेक से षोधन करके ही गृहप्रवेष हेतु किसी को आदेषित करना चाहिए ।

कलष चक्र का विचार किस प्रकार से किया जाता है? इस सन्दर्भ में आचार्य राम दैवज्ञ कहते हैं कि सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उस नक्षत्र से चान्द्र नक्षत्र यदि 1 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के मुख में होता है तथा उसका फल दाह होता है । कहने का भाव यह है कि सूर्य जिस नक्षत्र पर हो यदि उसी नक्षत्र में गृह प्रवेष होता है तो गृह में अग्नि इत्यादि से दाह का भय गृहस्वामी को या गृह के सदस्यों को बना रहता है । कलष चक्र उदाहरण आगे बताया जाएगा । इसी प्रकार पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 4 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के पूर्व दिषा में रहता है । इस समय गृहप्रवेष करनें से गृह में उद्वसन होता है अर्थात् घर में निवास करनें की इच्छा नहीं होती है अथवा गृहसदस्यों में परस्पर सामंजस्य नहीं होता है । कहनें का भाव यह है कि सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित हो उससे दूसरे, तीसरे,चौथे और पांचवे नक्षत्र पर चन्द्र हो और इस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो गृहप्रवेष करनें से घर में उद्वास बना रहेगा अर्थात् इस समय किया गया गृहप्रवेष अषुभ होता है ।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 4 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के दक्षिण दिषा में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से लाभ होता है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि छठे, सातवें, आठवे और नवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष लाभ को देनें वाला होता है।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 4 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के पष्चिम दिषा में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से लक्ष्मी की प्राप्ति है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि दषवें, ग्यारहवें, बारहवे औरे तेरहवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष लक्ष्मी एवं ऐष्वर्य इत्यादि को देनें वाला होता है।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 3 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के उत्तर में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से कलह होता है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि चौदहवें, पंद्रहवें और सोलहवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष घर में कलह एवं अषान्ति को देनें वाला होता है।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 3 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के गर्भ में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से गर्भ नाष होता है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि सत्रहवें, अठारहवें, और उन्नीसवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष गर्भनाष को देनें वाला होता है अर्थात् उस गृह में वंश की वृद्धि नहीं होती है।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 4 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के गुदा में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से स्थिरता होता है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि बीसवें, एक्कीसवें, बाईसवें और तेईसवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष स्थिरता को देनें वाला होता है अर्थात् घर में सर्वदा ही धन धान्यादि की स्थिरता बनीं रहती है।

पुनः सूर्य स्थित नक्षत्र से यदि चान्द्र नक्षत्र 4 संख्या तुल्य हो तो वह कलष चक्र के कण्ठ में होता है। इस समय गृहप्रवेष करनें से स्थिरता होता है। कहनें का भाव यह सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित है उससे यदि चौबीसवें, पच्चीसवें, छब्बीसवें और सत्ताईसवें नक्षत्र में चन्द्र हो तथा उस समय गृहप्रवेष किया जा रहा हो तो इस समय किया गया गृहप्रवेष स्थैर्य को देनें वाला होता है अर्थात् उस घर में हमेषा समृद्धि इत्यादि स्थिरता बनीं रहेगी। इस सभी की स्पष्टता हेतु अधोलिखित चक्र प्रस्तुत किया जा रहा है।

कुम्भ चक्र का स्वरूप एवं शुभाशुभ फल

स्थान	मुख	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	गर्भ	गुदा	कण्ठ
सूर्य नक्षत्र से	1	4	4	4	4	4	3	3
फल	दाह	उद्वास	लाभ	लक्ष्मी	कलह	नाश	स्थिरता	स्थिरता
सारांश	5 अशुभ		8 शुभ		8 अशुभ		6 शुभ	

कुम्भ चक्र को सारांश रूप में यदि हम देखें तो प्राप्त होता है कि सूर्य के नक्षत्र से 5 चान्द्र नक्षत्र अशुभ होते हैं। पुनः 8 नक्षत्र शुभ होते हैं। इसी प्रकार पुनः 8 नक्षत्र अशुभ होते हैं और 6 नक्षत्र शुभ होते हैं। इसी को अधिकांश लोग सार रूप में स्मरण रखते हैं। इस प्रकार कलष चक्र के माध्यम से गृहप्रवेश हेतु शुभाशुभ नक्षत्रों का परिज्ञान किया जाता है। इसमें भी जिस नक्षत्रों में गृहप्रवेश होता है केवल उसी नक्षत्रों में ही कलश चक्र की शुद्धि देखनीं चाहिए अन्य नक्षत्रों में नहीं। अन्य नक्षत्रों में यदि कुम्भ चक्र की शुद्धि मिल भी रही हो किन्तु गृहप्रवेश का नक्षत्र नहीं है तो उसमें गृहप्रवेश नहीं करना चाहिए।

1.6 कुम्भ चक्र का प्रायोगिक उदाहरण

कुम्भ चक्र का प्रायोगिक परिज्ञान किस प्रकार किया जाता है। वह इस उदाहरण में स्पष्ट रूप से बताया जा रहा है। एक उदाहरण जान लेनें के पश्चात् इसी प्रकार सर्वत्र ही कुम्भ चक्र का परिज्ञान किया जाना चाहिए।

जैसे किसी भूखण्ड स्वामी को विक्रम संवत् 2076 षक 1941 फाल्गुन मास, शुक्ल पक्ष, तिथि सप्तमी, सोमवार, रोहिणी नक्षत्र, तदनुसार 2 मार्च 2020 को गृहप्रवेष अभीष्ट है।
सर्वप्रथम हम इस तिथि के दिन कुम्भ चक्र की षुद्धि देखेंगे। यदि इस दिन कुम्भ चक्र की षुद्धि प्राप्त होगी तभी गृह प्रवेष का कार्य सिद्ध हो सकेगा। एतदर्थ 2 मार्च को सूर्य और चन्द्र की नक्षत्र स्थिति का अवलोकन करेंगे। **2 मार्च को सूर्य शतभिषा नक्षत्र पर है।** षतभिषा नक्षत्र पर सूर्य 20 फरवरी दिन से ही आरम्भ हो चुका है। 1 नक्षत्र पर सूर्य लगभग 12 दिनों तक रहता है अतः 4 मार्च तक तो सूर्य शतभिषा नक्षत्र पर ही रहेगा।
सूर्य नक्षत्र स्थिति जान लेनें के पष्चात् चन्द्र नक्षत्र की स्थिति का ज्ञान करना चाहिए। अतः पंचांग में अवलोकन करनें पर **2 मार्च को चन्द्रमा रोहिणी** नक्षत्र पर स्थिति है जो रात्रि के 05:44 तक रहेगा। इसके बाद मृगशिरा नक्षत्र प्रारम्भ हो जाएगा।
कलष चक्र के शोधन के लिए सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से चन्द्राधिष्ठत नक्षत्र तक निरभिजिद् गणना करेंगे। गणना के क्रम में शतभिषा नक्षत्र प्रथम हुआ। दितीय पूर्वाभाद्रपद हुआ। इसी प्रकार गणना करनें पर रोहिणी **नक्षत्र की संख्या 8 हुई।**

अब शुभाशुभ फल परिज्ञान हेतु कलश चक्र में देखेंगें कि किस अंग में यह संख्या है तथा उसका फल क्या है।

कलश चक्र अवलोकन करनें पर यह ज्ञात हुआ कि 8 वां नक्षत्र दक्षिण दिशा में प्राप्त हुआ तथा उसका फल लाभ है। पूर्वाभाद्रपदा से लेकर अश्विनी नक्षत्र तक कुम्भ चक्र शुद्ध नहीं है किन्तु भरणी से लेकर मृगशिरा नक्षत्र तक कुम्भ चक्र शुद्ध है। गृहप्रवेश में भरणी कृत्तिका नक्षत्र ग्राह्य नहीं है अतः इन दो नक्षत्रों में गृहप्रवेष नहीं किया जा सकता किन्तु रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्र में गृहप्रवेश होता है अतः इन दोनों नक्षत्रों में गृहप्रवेश किया जा सकता है।

अतः 2 मार्च को रोहिणी नक्षत्र में कुम्भ चक्र की शुद्धि होनें से गृहप्रवेश करना उत्तम रहेगा। अतः कलख चक्र शुद्धित गृहप्रवेशोदित नक्षत्र में ही गृह प्रवेश करना शास्त्र दृष्टि से अनुकूल होता है । इसी प्रकार से अन्यत्र सभी जगहों पर कलश चक्र का अवलोकन करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न – 2

6. सूर्य 1 नक्षत्र पर लगभग कितनें दिनों तक रहता है ?
   क. 1 दिन ख. 12 दिन
   ग. 25 दिन घ. 30 दिन

7. कुम्भ चक्र में साभिजित् गणना की जाती है या निरभिजित्

8. सूर्य नक्षत्र में चान्द्र नक्षत्र यदि 8 वां हो तो क्या फल होता है ।
   क. दाह ख. उद्वास
   ग. लाभ घ. श्री

9. सूर्य नक्षत्र में चान्द्र नक्षत्र यदि 12 वां हो तो क्या फल होता है ।
   क. दाह ख. उद्वास
   ग. लाभ घ. लक्ष्मी

10. सूर्य नक्षत्र में चान्द्र नक्षत्र यदि 26 वां हो तो क्या फल होता है ।
    क. लक्ष्मी ख. कलह
    ग. नाश घ. स्थिरत

1.7 सारांश

सनातन धर्म में गृहप्रवेश करना एक अत्यन्त ही धार्मिक और मांगलिक कृत्य माना जाता है। गृहप्रवेश हेतु शास्त्रों में अनेक प्रकार की व्यवस्थाए काल शुद्धि को लेकर बताई गई है।

उन्हीं काल शुद्धि में एक शुद्धि है कलश चक्र की। इसी कलश चक्र से शुद्ध हुआ नक्षत्र ही गृहप्रवेश में ग्राह्य होता है। गृहप्रवेशार्थ यदि अनुकूल नक्षत्र मिले किन्तु कलश चक्र की शुद्धि न हो तो उस नक्षत्र में प्रवेश कथमपि नहीं करना चाहिए अन्यथा अशुभ परिणाम प्रत्यक्षतः देखनें को मिलते हैं। गृहप्रवेश में सूर्य और चन्द्र इन दोनों ग्रहों का परस्पर शुभाशुभ सम्बन्ध ही गृह सम्बन्धित सुख और दुख को प्रदान करनें वाला होता है। सूर्य के नक्षत्र से यदि चन्द्र का नक्षत्र 5 संख्यक हो तो अशुभ फल देनें वाला होता है। उसके आगे यदि सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र का नक्षत्र 8 संख्यक हो तो शुभ फल देनें वाला होता है। उसके बाद यदि सूर्य के नक्षत्र से 8 संख्यक चान्द्र नक्षत्र हो तो अशुभ फल देनें वाला होता है और यदि सूर्य के नक्षत्र से चान्द्र का नक्षत्र 6 संख्यक हो तो वह शुभ को देनें वाला होता है। इसी प्रकार कलश चक्र की शुद्धि देखी जाती है।

1.8 पारिभाषिक शब्दावली

कुम्भ – कलष

वक्त्र – मुख

रविभात् – सूर्य के नक्षत्र से

कृत – 4 संख्या

यमगत – दक्षिण दिषा गत

कलि – कलह

राम – 3 संख्या

अनल – अग्नि, 3 संख्या का बोधक है।

भू – पृथ्वी, 1 संख्या का बोधक है।

स्थैर्य – स्थिरता

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ख
3. ग
4. ग
5. ख

6. ख
7. निरभिजित् गणना की जाती है ।
8. ग
9. घ
10. घ

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

क. ग्रन्थ नाम – **मुहूर्त्त चिन्तामणि**

गन्थकर्ता – रामदैवज्ञ

टीका नाम – पीयूषधारा

टीकाकार गोविन्द दैवज्ञ

व्याख्याकार – श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी

सम्पादक – डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी

प्रकाशन वर्ष – 2009

प्रकाषक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी

ख. ग्रन्थ नाम – **पौरोहित्य कर्म प्रषिक्षक**

सम्पादक – डा सच्चिदानन्द पाठक

प्रकाशन वर्ष – 2010

प्रकाशक – उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान लखनउ

1.11 सहायक पाठ्यसामग्री

1. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्त मार्तण्ड
   ग्रन्थ कर्ता – नाराण दैवज्ञ
   व्याख्याकार – सीताराम झा
   प्रकाशक – मास्टर खेलाडी लाल एण्ड सन्स, वाराणसी, संस्करण 1986

2. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्त कल्पद्रुम
   ग्रन्थ कर्ता – श्री विट्ठल दीक्षित

सम्पादक एवं व्याख्याकार – श्री कृष्ण जुगनु
प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, संस्करण 2016

3. **पंचाग** – श्री काशी विश्वनाथ पंचाग, हृषीकेष हिन्दी पंचांग
प्रवर्धक – श्री नागेश उपाध्याय
प्रकाशन – विक्रम पंचांग प्रकाशन बी 2/95 सी भदैनी, वाराणसी

1.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गृहारम्भ में कलश चक्र के महत्त्व को स्पष्ट करें।
2. स्वकल्पित उदाहरण के द्वारा एक कुम्भ चक्र की शुद्धि लिखें।

इकाई - 2 गृहप्रवेश मुहूर्त्त

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 गृहप्रवेश की परिभाषा एवं प्रभेद

2.3.1 अपूर्व प्रवेश

2.3.2 सुपूर्व प्रवेश

2.3.3. द्वन्द्वाह्व प्रवेश

2.4 नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त शोधन

2.4.1 वर्ष शुद्धि

2.4.2 मास शुद्धि

2.4.2.1 सौर मास शुद्धि

2.4.2.2 चान्द्र मास शुद्धि

2.4.3 पक्ष शुद्धि

2.4.4 नक्षत्र शुद्धि

2.4.4.1 दिग्द्वार नक्षत्रोदाहरण

2.4.4.2 सप्तशलाका वेध विधि

2.4.4.3 सप्तशका चक्रोदाहरण

2.5 जीर्णादि गृहप्रवेश मुहूर्त्त शोधन

2.6 गृहप्रवेश पूर्व वास्तु पूजा मूहर्त्त

2.7 गृहप्रवेश में लग्नशुद्धि विचार

2.7.1 लग्नशुद्धि का उदाहरण

2.8 गृहप्रवेश में वार, तिथि शुद्धि विचार

2.9 सारांश

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.13 सहायक पाठ्यसामग्री

2.14 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

वास्तु शास्त्रोक्त विधि से गृह निर्माण की प्रक्रिया पूर्ण हो जानें के पश्चात् ज्योतिष शास्त्र द्वारा प्रतिपादित कालशुद्धि के अनुरूप ही नूतन गृह में प्रवेश करना उत्तमोत्तम होता है। उचित काल में किया गया गृहप्रवेश दीर्घ समय तक नूतन गृह में सुख-समृद्धि का देता रहता है तथा गृह में आनें वाली परेशानियों को भी दूर करता रहता है। गृहप्रवेश प्रक्रिया में केवल गृह के अन्दर ही प्रवेश नहीं करतें अपितु वास्तुशान्ति पूर्वक विविध बलि का विधान करके देवों को सन्तृप्त करते हैं। वे सभी देव प्रसन्न होकर गृह में निवास करनें वाले सभी सदस्यों के उपर अपनी अनुकूलता बनाए रखते है जिससे गृह के सभी सदस्य नित्य उन्नति को प्राप्त करते हैं। गृहप्रवेश हेतु उचित मुहूर्त्त निकालना या शोधन करना अत्यन्त जटिल कार्य है क्योकि उनमें अनेक प्रकार के कालों का संशोधन करना पडता है। काल की दीर्घतम ईकाई से लेकर सूक्ष्मतम ईकाई का जब हम संशोधन करते हैं तब जाकर गृहप्रवेश हेतु शुद्धतम मुहूर्त्त प्राप्त होता है। गृहप्रवेश में न केवल वर्ष, अयन, मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र, योग करणादि की शुद्धि करते हैं अपित इसके अतिरिक्त वामरवि, भकूट शुद्धि, कुम्भ चक्र और वाम रवि इत्यादि का भी विचार करते हैं। इन सभी का विवरण यथा स्थान किया जाएगा। प्रस्तुत इकाई में गृहप्रवेशार्थ वर्षादि की शुद्धि किस प्रकार से की जाती है उसका शास्त्रोक्त निदर्शन किया जा रहा है। अतः इस इकाई का आप विधिवत् अध्ययन करें।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप

- गृहप्रवेश के विविध प्रकारों के बारे में जान सकेंगे।
- गृहप्रवेश हेतु सूक्ष्म मुहूर्त्त संशोधन करने में दक्ष हो सकेंगे।
- जीर्णादि गृहप्रवेश के पृथक् मुहूर्त्तो के विषय में जान सकेंगे।
- लग्नशुद्धि किस प्रकार से की जाती है, यह जान सकेंगे।
- वास्तुपूजा के मुहूर्त्त के विषय में दक्ष हो सकेंगे।
- सप्तशलाका वेध किस प्रकार से किया जाता है, यह जान सकेंगे।

2.3 गृहप्रवेश की परिभाषा एवं प्रभेद -

भारतीय सनातन परम्परा एवं ज्योतिष शास्त्र के अनुसार वास्तु शास्त्रोक्त प्रविधि के अनुसार गृहनिर्माण होने के पश्चात् तज्जन्य सुखादि की अनुभूति हेतु एवं सांसारिक कृत्यों के सम्पादन हेतु नवनिर्मितादि गृह में प्रथमादि प्रवेश करनें की शास्त्रीय एवं सनातनीय प्रक्रिया को गृहप्रवेश कहा

जाता है। ज्योतिष एवं वास्तु शास्त्र में स्वनिर्मित गृह ही सुखादि को देनें वाला कहा गया है । यह गृहप्रवेश मुख्य रूप से तीन प्रकार का बताया गया है । वसिष्ठ ऋषि के मत में तीन प्रकार का गृहप्रवेश अधोलिखित क्रम से कहा गया है । जैसा कि आचार्य कहते हैं -

अपूर्वसंज्ञं प्रथमप्रवेषं यात्रावसाने च सपूर्वसंज्ञम् ।
द्वन्द्वाह्वयष्चाग्निभयादिजातस्त्वेवं प्रवेषस्त्रिविधः प्रदिष्टः ।।

2.3.1 अपूर्व प्रवेश -

प्रवेश की श्रेणी में सर्वप्रथम अपूर्वसंज्ञक गृहप्रवेश का वर्णन प्राप्त होता है । इस अपूर्व संज्ञक गृहप्रवेश को उत्तम कोटि का प्रवेश माना जाता है । वर्तमान समय में इसी का बहुधा प्रयोग गृहप्रवेशार्थ देखा जाता है । अपूर्व शब्द का शाब्दिक अर्थ है ''न पूर्वः इति अपूर्वः'' अर्थात् जो कभी पहले नहीं हुआ है उसको अपूर्व कहा जाता है तो अपूर्व गृहप्रवेश का अर्थ यह हुआ कि जिस गृह में पहले कभी प्रवेष नहीं किया गया हो और सर्वप्रथम बार प्रवेश हो रहा हो वह गृहप्रवेश अपूर्व संज्ञक कहलाता है । इस अपूर्व गृहप्रवेश का पृथक् मुहूर्त्त होता है जो इस इकाई में वर्णित किया जाएगा । यह अपूर्व गृहप्रवेश सर्वोत्तम प्रकार का माना जाता है ।

2.3.2 सुपूर्व प्रवेश -

प्रवेश की श्रेणी में द्वितीय प्रवेश होता है सुपूर्व संज्ञक गृहप्रवेश । सुपूर्व शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है ''सुष्ठु पूर्वः इति सुपूर्वः'' अर्थात् सुन्दर रूप से जो पूर्व में हो चुका है वह सुपूर्व संज्ञक होता है । अपूर्व संज्ञक गृहप्रवेष हो जानें के पष्चात् जब कभी दीर्घकालिक यात्रा इत्यादि सकुषल पूर्ण कर लेनें के पष्चात् द्वितीय बार या तृतीय बार या कभी भी जब यात्रिक स्वगृह में पुनः प्रवेष करता है तो उसको सुपूर्व संज्ञक गृहप्रवेष कहा जाता है । जिस प्रकार विवाह के पष्चात् वधू का प्रथम बार स्वपति गृह में प्रवेष करनें को वधू प्रवेष कहा जाता है तथा पुनः द्वितीय बार स्वपति गृह में प्रवेष करनें को द्विरागमन कहा जाता है । उसी प्रकार गृहस्वामी अपनें कुटुम्बी जन सहित जब सर्वप्रथम स्वगृह में प्रवेष करता है तो अपूर्व गृहप्रवेष तथा द्वितीयादि बार जब यात्रा इत्यादि से निवृत्त होनें पर प्रवेष करता है तो वह सुपूर्व संज्ञक गृह प्रवेष कहलाता है । यह सुपूर्व संज्ञक गृह प्रवेष मध्यम श्रेणी का माना जाता है । वर्तमान समय में यह प्रवेष लोक व्यवहार में प्रायः नहीं दिखाई देता है किन्तु कुछ सांस्कृतिक प्रदेषों में यह पद्धति आज भी जीवित है । अपूर्व संज्ञक गृहप्रवेष मुहूत्र्त तथा सुपूर्व संज्ञक गृह प्रवेष मुहूत्र्त एक ही होते हैं दोनों के लिए पृथक् पृथक् व्यवस्था नहीं है । अतः जो मासादि षुद्धि प्रथम गृहप्रवेष में ग्राह्य है वही मासादि षुद्धि सुपूर्व संज्ञक गृहप्रवेष में भी ग्राह्य है ।

2.3.3. द्वन्द्वाह्व प्रवेश -

अपूर्व एवं सुपूर्व गृहप्रवेषों के पष्चात् तृतीय प्रवेष द्वन्द्वाह्व संज्ञक होता है। द्वन्द्वाह्व का षाब्दिक अर्थ होता है दुबारा। यह प्रवेष भी मध्यम श्रेणी का माना जाता है क्योकि इस प्रवेष में अपूर्व एवं सुपूर्व से जो भी प्रवेष अवषिष्ट है उनको स्वीकार किया जाता है। अर्थात् यदि कोई गृह पुराना हो गया है और वह जीर्ण-षीर्ण अवस्था में है या फिर अग्नि इत्यादि से दग्ध हो गया है अथवा बारिष इत्यादि से गिर गया है या किसी ने भय दिखाकर तोड दिया है अथवा स्वयं ही गिर गया है तो उसके पष्चात् उस भूखण्ड पर पुनः गृहनिर्माण कराना तथा उसमें प्रवेष करना द्वन्द्वाह्व प्रवेष कहा जाता है। पहले से निर्मित गृह में पुनः गृह कार्य कराकर उसको विस्तार देना भी द्वन्द्वाह्व संज्ञक माना जाता है। इस द्वन्द्वाह्व संज्ञक गृह प्रवेष की मासादि षुद्धि थोडी पृथक् होती है। बहुत सारी षुद्धियां तो अपूर्व एवं सुपूर्व के समान ही होती हैं किन्तु मासादि में कुछ अन्तर प्राप्त होता है। अपूर्व-सुपूर्व के मास अलग होते हैं तथा द्वन्द्वाह्व के मास अलग होते हैं अन्य सभी चीजें समान ही होती है। यथावसर उनका वर्णन किया जाएगा। इस इकाई में इन तीनों प्रकार के गृहप्रवेषों के मुहूत्र्ता पर विचार किया जाएगा।

2.4 नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त शोधन

नूतन गृहप्रवेश का अर्थ यहां पर अपूर्व एवं सुपूर्व संज्ञक प्रवेश से समझना चाहिए। वस्तुतः वर्तमान समय में सुपूर्व गृहप्रवेश दृष्टिगोचर नहीं होता इस कारण से नूतन गृहप्रवेश नाम से ही विचार किया जा रहा है। नूतन गृहप्रवेश का अर्थ होता है सर्वप्रथम स्वनिर्मित गृह में प्रवेश करना। भारतीय पद्धति में नूतन गृहप्रवेश में कालाशुद्धि हेतु ज्योतिष शास्त्रोक्त मुहूर्त्तो की व्यवस्था की गई है। तदनुरूप ही पुरातन पद्धति के अनुसार गृहप्रवेश हेतु अनेक प्रकार के शुद्धि की व्यवस्था की गई है। वस्तुतः मुहूर्त्त शोधन करना अपनें आप में एक जटिल कार्य है। वर्तमान समय में पंचांगों में गृहप्रवेशादि का मुहूर्त्त दिया गया होता है। सामान्य जन उसी को देखकर अपने दैनिक व्यवहार में लाते हैं। पंचांगों में प्रदत्त मुहूर्त्त की प्रक्रिया इस पाठ में दर्शायी गई पद्धति के अनुसार ही की जाती है। अतः सर्वप्रथम हम नूतन गृहप्रवेष हेतु शास्त्रोक्त प्रमाण का अवलोकन करते हैं। इस सन्दर्भ में प्रामाणिक ग्रन्थ मुहूर्त्तचिन्तामणि के गृहप्रवेश प्रकरण में अधोलिखित श्लोक कहा गया है -

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे।
स्याद् वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मकलग्नोपचयोदये स्थिरे॥

इस श्लोक का महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि केवल एक ही श्लोक में गृहप्रवेश में ग्राह्य मासों, नक्षत्रों एवं लग्नों का विवरण प्रदान किया गया है। कौन कौन से सौर या चान्द्र मासों में गृहप्रवेश करना चाहिए।

कौन कौन से नक्षत्रों में गृहप्रवेश करना चाहिए तथा कौन कौन से लग्नों में गृहप्रवेष करना चाहिए ये सभी पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण है। किसी भी प्रकार का जब हम मुहूर्त्त शोधन करते हैं तो सर्वप्रथम दीर्घतम ईकाई से लेकर सूक्ष्मतम ईकाई तक का विचार करते हैं। कार्य विशेष हेतु मुहूर्त्त संशोधन में सर्वप्रथम वर्ष षुद्धि देखते हैं उसके बाद मास षुद्धि का विचार करते हैं। ततः पक्ष शुद्धि देखते हैं उसके बाद नक्षत्र षुद्धि का विचार करते हैं। नक्षत्र के बाद तिथि, वार, योग, करण लग्न एवं मुहूर्त्त का संषोधन करते हैं। इन सभी अवयवों का विधिवत् संशोधन कर लेनें के पष्चात् ही किसी कार्य विषेष का मुहूत्र्त निकाल पाते हैं। अतः गृहप्रवेश में भी इन सभी की शुद्धि का विचार देखते हैं उसके बाद ही समय का निर्देष करते हैं कि अमुक दिनादि में गृहप्रवेश करना चाहिए। वर्षादि की शुद्धि निम्नलिखित प्रकार से विचार की जाती है।

2.4.1 वर्ष षुद्धि -

गृह प्रवेष में किसी भी प्रकार की वर्ष षुद्धि का विचार नहीं किया जाता है। जिस वर्ष गृह का निर्माण पूर्ण हो उसी वर्ष मासादि षुद्धि देखकर गृहप्रवेष कर लेना चाहिए क्योकि गृह निर्माण बहुत ही परिश्रम के पष्चात् प्राप्त होता है अतः उसमें विवाहवत् वर्ष षुद्धि का अवलोकन नहीं करना चाहिए।

2.4.2 मास षुद्धि -

भारतीय ज्योतिष में किसी भी प्रकार के मुहूत्र्त हेतु मुख्य रूप से दो प्रकार के मासों का विवरण प्राप्त होता है। प्रथम है सौर मास तथा द्वितीय है चान्द्र मास। कुछ कार्यो में केवल सौर मास षुद्धि का ही विचार करते हैं तथा कुछ कार्यो में केवल चान्द्रमास ष्षुद्धि का ही विचार करते हैं एवं कुछ कार्यो में दोनों प्रकार के मासों की षुद्धि का अवलोकन करते है। गृहप्रवेष में सौर एवं चान्द्र मास दोनों प्रकार की षुद्धि का विधान ज्योतिष षास्त्र में प्राप्त होता है।

2.4.2.1 सौर मास शुद्धि

गृह प्रवेश में सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है कि कौन कौन से सौर मासों में या कौन कौन से चान्द्रमासों में गृहप्रवेष करना चाहिए। इस निर्णय हेतु षास्त्रकार कहते हैं कि सौर मान से उत्तरायण के सूर्य में गृह प्रवेष करना चाहिए। विदित है कि मकर से प्रारम्भ होकर मिथुनान्त तक का उत्तरायण होता है अर्थात् आधुनिक मान से हम देखें तो 14 जनवरी से 15 जुलाई तक का काल उत्तरायण

संज्ञक होता है। अतः सौर मान से इसी समय में गृहप्रवेष करना चाहिए। दक्षिणायन में भी गृहप्रवेष का मुहूत्र्त होता है किन्तु वह केवल जीर्णादि गृह हेतु प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त इन्हीं कालखण्डों में यदि चान्द्रमास की षुद्धि प्राप्त होती हो तभी यह सौर मान ग्राह्य है अन्यथा नहीं। इसी प्रकार गुरू एवं षुक्र के वृद्धत्व, अस्त एवं बाल्यत्व में तथा न्यूनाधिमास में, धन्वर्क में गृहप्रवेष नहीं करना चाहिए।

2.4.2.2 चान्द्र मास शुद्धि -

गृहप्रवेष में सौर तथा चान्द्र मास दोनों का ग्रहण किया जाता है। सूर्य जब उत्तरायण में हो तभी इन्हीं चान्द्र मासों में गृहप्रवेष करना चाहिए। गृहप्रवेष हेतु चार चान्द्र मास अत्यन्त षुभ माने जाते हैं। माघ, फाल्गुन, वैषाख एवं ज्येष्ठ मास ये उत्तम कोटि के मास गृहप्रवेष में स्वीकार किए जाते है। उत्तरारण के सूर्य में भी चैत्र मास में गृह प्रवेष नहीं करना चाहिए। चैत्र मास गृहप्रवेष में निन्दित माना जाता है। कौन से चान्द्रमासों में गृह प्रवेष करनें पर क्या षुभाषुभ फल होता है यह वसिष्ठ ऋषि के मत में निम्नलिखित प्रकार से दिया गया है।

माघेऽर्थलाभः प्रथमप्रवेषे पुत्रार्थलाभः खलु फाल्गुने च।
चैत्रेऽर्थहानिर्धनधान्यलाभो वैषाखमासे पशुपुत्रलाभः।।
ज्येष्ठे च मासेषु परेषु नूनं हानिप्रदः षत्रुभयप्रदष्च।
शुक्ले च पक्षे सुतरां विवृद्ध्यै कृष्णे च यावत् दशमी च तावत्।।

अर्थात् माघमास और फाल्गुन मास में गृहप्रवेश करनें पर पुत्र और धन का लाभ होता है। चैत्रमास में प्रवेश करनें पर धन की हानि होती है। वैशाख मास में गृहप्रवेश करनें पर धन और धान्य का लाभ होता है। ज्येष्ठ मास में पशु और पुत्र का लाभ होता है। शेष मासों में प्रवेष करनें पर हानि होती है तथा शत्रु से भय बना रहता है। अतः केवल इन्हीं चार मासों में नवनिर्मित गृह में प्रथम बार गृहप्रवेश करना उत्तमोत्तम माना गया है। कुछ आचार्यो के मत में मार्गषीर्ष एवं कार्तिक मासों में भी गृहप्रवेश किया जा सकता है किन्तु वह मध्यम श्रेणी का होता है। जैसा कि बृहद्वास्तुमाला में कहा गया है -

माघ-फाल्गुन-वैषाख-ज्येष्ठमासेषु शोभनः।
प्रवेषो मध्यमो ज्ञेयः सौम्य-कार्तिकमासयोः।।

इस प्रकार कुल छह मासों (माघ, फाल्गुन, वैषाख, ज्येष्ठ, मार्गषीर्ष एवं कार्तिक) में गृहप्रवेष का विधान ज्योतिष षास्त्र में प्राप्त होता है।

2.4.3 पक्ष शुद्धि -

उक्त छह मासों में ही षुक्ल पक्षों में तथा कृष्ण पक्षों में केवल दषमी तक ही गृहप्रवेष करना चाहिए। इसके अतिरिक्त कृष्ण पक्ष की एकादषी से लेकर अमावस्या तक का निषेध बताया गया है। जैसा कि कहा गया है -

षुक्ले च पक्षे सुतरां विवृद्ध्यै कृष्णे च यावत् दषमी च तावत्॥

2.4.4 नक्षत्र शुद्धि -

समस्त षुभ कर्मो में नक्षत्र षुद्धि की प्रधानता रहती है क्योकि नक्षत्रों के जो गुण धर्म षास्त्रों में बताए गए है उन्हीं के गुण धर्मो के अनुसार निर्दिष्ट गुण धर्म वाले कार्यो का सम्पादन करनें पर ही सम्बन्धित कार्य सफलता निर्भर रहती है। अतः किसी भी ष्षुभ कार्य में नक्षत्रों का अवलोकन अवष्य ही करना चाहिए। यदि अन्य सभी तिथि इत्यादि षुद्धि न मिलें केवल नक्षत्र षुद्धि ही मिल जाए तो भी कार्य कर लेना चाहिए। अतः गृहप्रवेष में जो वर्णित नक्षत्र है वह इस प्रकार से ज्योतिष षास्त्र में बताए गए है। केवल मृदुसंज्ञक एवं ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में ही गृह प्रवेष करना चाहिए अर्थात् मृगषिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद् एवं रोहिणी इन आठ नक्षत्रों में केवल नूतन गृहप्रवेष को ही करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त भी गृह के मुख्य द्वार के अनुसार कुछ विषिष्ट नक्षत्रों में भी गृहप्रवेष किया जाता है। यदि गृह का मुख्य द्वार पूर्व में है तो पूर्व दिषा वाले नक्षत्रों में भी गृहप्रवेष किया जा सकता है। यदि गृह का मुख्य द्वार दक्षिण में है तो दक्षिण दिषा वाले नक्षत्रों में भी गृह प्रवेष किया जा सकता है। यदि गृह का मुख्य द्वार पष्चिम में है तो पष्चिम दिषा वाले नक्षत्रों में भी गृहप्रवेष किया जा सकता है और यदि गृह का मुख्य द्वार उत्तर दिषा में है तो उत्तर दिषा वाले नक्षत्रों में भी गृहप्रवेष किया जा सकता है किन्तु यदि गृह का मुख्य द्वार पूर्व में है तो अन्य दिषाओं वाले नक्षत्रों में कथमपि गृहप्रवेष नहीं करना चाहिए। पूर्वादि दिषाओं वाले नक्षत्र अधोलिखित प्रकार से वर्णित हैं।

सप्तशलाका चक्र / दिग्द्वार नक्षत्र

पूर्वदिग्नक्षत्र

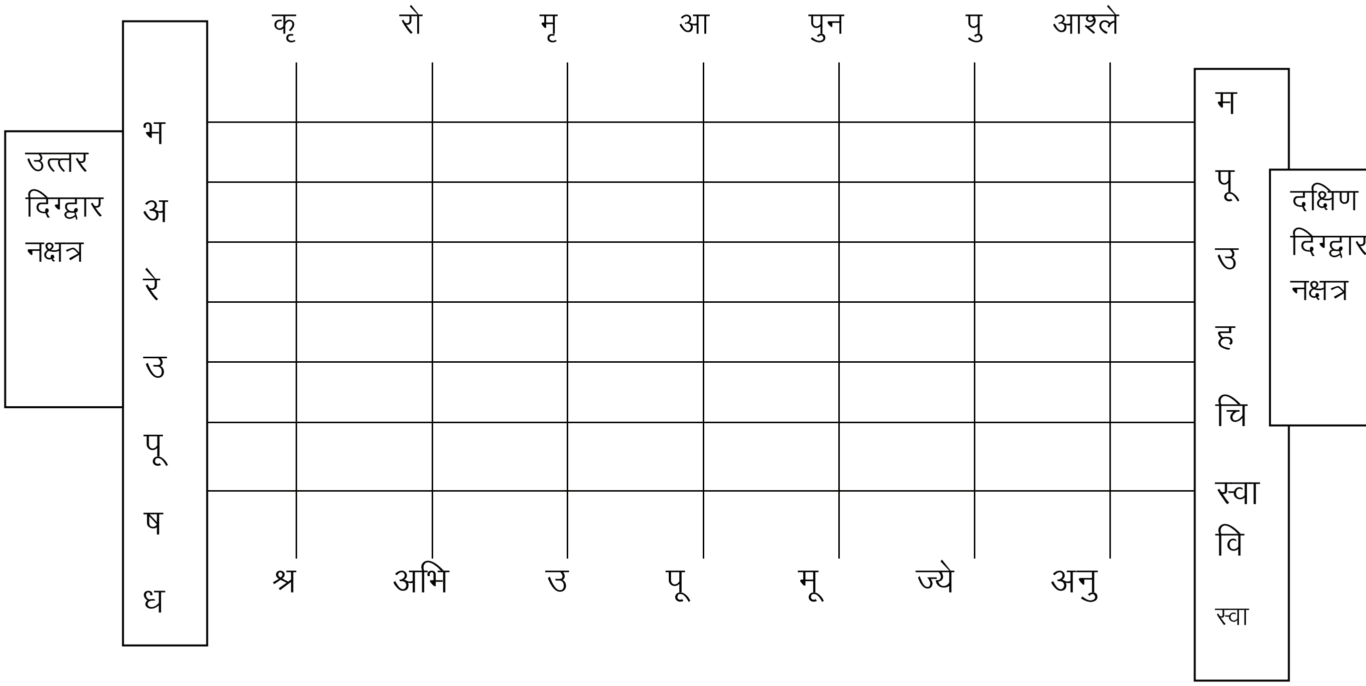

पश्चिमदिग्नक्षत्र

2.4.4.1 दिग्द्वार नक्षत्रोदाहरण -

जैसे यदि किसी के गृह का मुख्य द्वार पूर्व दिषा में है तो ऐसा गृहस्वामी के लिए कृत्तिका से लेकर ष्लेषा तक के नक्षत्रों में गृहप्रवेष का मुहूर्त्त दिया जा सकता है। इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। यह षास्त्रनिर्दिष्ट है। इसी प्रकार दक्षिणादि दिग्द्वार नक्षत्रों में भी दक्षिणादि मुख्यद्वार वाले गृहों में प्रवेष किया जा सकता है। यह विषेष विधि है जो केवल द्वाराभिमुखाश्रित है। पूर्व में उक्त आठ नक्षत्रों में किसी भी मुख्यद्वाराश्रित गृह का प्रवेष किया जा सकता है किन्तु पूर्वादि दिग्नक्षत्रों में केवल पूर्वादि द्वारप्रधान गृहों में ही प्रवेश किया जाता है।

2.4.4.2 सप्तशलाका वेध विचार

दिग्द्वार नक्षत्र चक्र को सप्तषलाका चक्र भी कहते हैं। सप्तषलाका वेध चक्र में किसी भी पापग्रह से वेधित नक्षत्र को षुभ कार्यो में छोड दिया जाता है। गृहप्रवेश में भी पापग्रह दूषित नक्षत्र और पाप ग्रह वेधित नक्षत्रों को त्याग दिया जाता है। जैसा कि कहते हैं -

क्रूरग्रहाधिष्ठितविद्धभं च विवर्जनीयं त्रिविधप्रवेषे।

2.4.4.3 सप्तशलाका चक्रोदाहरण -

जैसे किसी गृहस्वामी को उत्तराषाढा नक्षत्र में अपनें गृह में प्रवेष करना अभीष्ट है तो ऐसी स्थिति में यदि उत्तराषाढा नक्षत्र में कोई पापग्रह होगा तो इस नक्षत्र में प्रवेष नहीं किया जा सकता है क्योकि यह नक्षत्र पापग्रह दूषित हो गया। यदि प्रवेष करना ज्यादा अभीष्ट है तो पापग्रह जिस चरण में स्थित है केवल उसी चरण को त्याग देना चाहिए न कि सभी चरणों को।

इसी प्रकार से वेध का परिज्ञान भी गृहप्रवेष में करना चाहिए। सप्तषलाका वेध चक्र में केवल सम्मुख ही वेध होता है। जैसे किसी गृहस्वामी को उत्तराषाढा नक्षत्र में प्रवेष करना अभीष्ट है। अतः उत्तराषाढा के सम्मुख वाला नक्षत्र मृगषिरा है। अतः मृगषिरा नक्षत्र पर यदि कोई पापग्रह है तो वह उत्तराषाढा नक्षत्र को वेधित करेगा। अतः पापग्रह वेधित नक्षत्र को भी गृहप्रवेष में छोड देना चाहिए। यदि प्रवेष करना ज्यादा अभीष्ट है तो चरण वेध के अनुसार परिहार करना चाहिए। प्रथम चरण में स्थित ग्रह चतुर्थ चरण को विषेष रूप से विद्ध करेगा तथा द्वितीय चरण में स्थित पापग्रह तृतीय चरण को विषेष रूप से वेधित करेगा। इसी प्रकार तृतीय चरण में स्थित पापग्रह द्वितीय चरण को तथा चतुर्थ चरण में स्थित पापग्रह प्रथम चरण को विषेष रूप से वेधित करेगा।

जैसे मृगषिरा नक्षत्र के प्रथम चरण में यदि पापग्रह है तो वह उत्तराषाढा नक्षत्र के चतुर्थ चरण को विषेष रूप से वेधित करेगा। वेध विचार में षुभग्रहों का भी वेध देखते हैं। ऐसा सिद्धान्त है कि पापग्रह से वेधित सम्पूर्ण नक्षत्र का त्याग कर देते हैं तथा षुभग्रह से वेधित नक्षत्र के चरणों का केवल त्याग कर देते हैं। तो इस प्रकार गृहप्रवेष में जो नक्षत्र अभीष्ट है वे नक्षत्र पापग्रह से वेधित और पापग्रह से युक्त नहीं होनें चाहिए।

अभ्यास प्रश्न - 1

1. गृहप्रवेश कितनें प्रकार का होता है?

क. 1 ख. 2

ग. 3 घ. 4

2. कौन से मास में गृहप्रवेश नहीं करना चाहिए ?

क. माघ ख. फाल्गुन

ग. चैत्र घ. वैषाख

3.क्या गृहस्वामी के जन्मराषि और जन्मलग्न से उपचय स्थान का लग्न गृहप्रवेष में ग्रहण करना चाहिए। हां /नहीं

4. इनमें से उपचय स्थान कौन कौन से हैं ?

क. 3 ख. 6

ग. 10 घ. ये सभी

5. गृहप्रवेष हेतु चयनित नक्षत्र पापग्रह वेध से रहित होना चाहिए। सत्य/असत्य

2.5 जीर्णादि गृहप्रवेश मुहूर्त्त शोधन

जिस प्रकार नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त हेतु अनेक तथ्यों का विचार करना पडता है ठीक उसी प्रकार जीर्णादि गृहप्रवेष हेतु भी कुछ मुख्य तथ्यों का विचार करना पडता है। वस्तुतः बहुत सारे तथ्य नूतनगृहप्रवेषवत् ही हैं तथापि कुछ नये सिद्धान्तों का विशेष विचार करना होता है। जीर्णादि गृह प्रवेष में केवल कुछ मासों की अधिकता एवं नक्षत्रों की अधिकता तथा गुरूषुक्र के अस्तादि की विधि ही विषेष रूप से विचारणीय होती है। अन्य सभी लग्नादि षुद्धि विचार नूतनगृहप्रवेषवत् ही होते हैं। आचार्य रामदैवज्ञ ने अपनें महत्वपूर्ण ग्रन्थ मुहूर्त्तचिन्तामणि के गृहप्रवेषप्रकरण में जीर्णादि गृहप्रवेश हेतु पृथक् मुहूर्त्त को प्रतिपादित किया है। जैसा कि कहते हैं -

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रावणिकेऽपि सत् स्यात्।

वेषोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावष्यमस्तादिविचारणाऽत्र।।

जीर्णादि गृहप्रवेष की परिभाषा द्वन्द्वाह्व प्रवेष के अन्तर्गत पहले ही कही जा चुकी है। यहां पर केवल जीर्णादि गृहप्रवेष हेतु ग्राह्य मास, नक्षत्र एवं गुरूषुक्र की अस्तादि षुद्धि का ही विचार किया जाएगा। मार्गषीर्ष, कार्तिक, श्रावण इन तीन मासो में जीर्णादि गृहप्रवेष होता है। इसके अतिरिक्त जो मास नूतन गृहप्रवेष में ग्राह्य हैं उन मासो में भी जीर्णादि गृहों का प्रवेष होता है। अतः इस प्रकार कुल सात मासों (माघ, फाल्गुन, वैषाख, ज्येष्ठ, मार्गषीर्ष, श्रावण एवं कार्तिक) में जीर्णादि गृहप्रवेष का विधान ज्योतिष षास्त्र में प्राप्त होता है।

षतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा नक्षत्रों में जीर्णादि गृहप्रवेष करना उत्तम होता है किन्तु इन चार नक्षत्रों

में नूतन गृहप्रवेष निषिद्ध माना गया है। कुछ आचार्यो के मत में नूतन गृहप्रवेष हेतु जो नक्षत्र विहित है उन नक्षत्रों में भी जीर्णादि गृहप्रवेष किया जा सकता है।

जीर्णादि गृहप्रवेष में बृहस्पति-षुक्र के बाल्यत्व, अस्तंगत, बृद्धत्व, गुरू के सिंहस्थ-मकरस्थ और लुप्त संवत्सर आदि का दोष नहीं लगता है। अतः इन सभी परिस्थितियों में भी जीर्ण गृहप्रवेष किया जा सकता है किन्तु इन सभी परिस्थितियों में नूतनगृहप्रवेष नहीं किया जाना चाहिए। इन सभी परिस्थितियों के परिज्ञान के लिए आप सहायक ग्रन्थसूची देख सकते हैं।

2.6 गृहप्रवेश पूर्व वास्तु पूजा मुहूर्त्त

पारम्परिक रूप से यदि हम देखें तो गृहप्रवेश करानें हेतु 3 से अधिक दिनों का अनुष्ठान बृहद् रूप में आयोजित होता है किन्तु वर्तमान समय में यह पद्धति लुप्त होकर केवल एक दिन तक ही सीमित हो गई है। पूर्व काल में गृहप्रवेश करनें से पूर्व वास्तुपूजा और भूतबलि आदि का भी मुहूर्त्त देखा जाता था उसके पष्चात् गृहप्रवेश मुहूर्त्त में गृहप्रवेश किया जाता था किन्तु आज केवल गृहप्रवेश मुहूर्त्त में ही सभी क्रियाए होती है। आचार्य रामदैवज्ञ नें इस बात को स्पष्ट रूप से बताया है। जो इस प्रकार से है -

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत्।

अर्थात् गृहप्रवेश के पूर्व मृगषिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद्, रोहिणी, हस्त, अष्विनी, पुष्य, स्वाती पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों में वास्तुपुरूष का अर्चन एवं भूतबलि आदि की प्रक्रिया करनी चाहिए। वस्तुतः गृहप्रवेश में विहित नक्षत्रों का ग्रहण भी इसी में किया गया है अतः एक ही दिन वास्तुपुरूष पूजन और गृहप्रवेश होता है तो कोई दोषद नहीं है किन्तु इसके अतिरिक्त जो नक्षत्र है उनमें भी वास्तुपूजा आदि की क्रिया की जा सकती है किन्तु उन नक्षत्रों में प्रवेश नहीं किया जा सकता है। वास्तुपूजा एवं भूतबलि के विषय में आप अगली ईकाई में पढेंगे।

2.7 गृहप्रवेश में लग्नशुद्धि विचार

गृहप्रवेष में लग्नषुद्धि का बहुत ही माहात्म्य है क्योंकि उचित लग्नषुद्धि में किया गया कार्य दीर्घकाल तक सुख देनें वाला होता है तथा पारमार्थिक लाभ को भी प्रदान करता है । लग्न के माहात्म्य के विषय में ज्योतिष षास्त्र में अनेक प्रसंग प्रतिपादित किये गये है । लग्नषुद्धि होनें से अनेक प्रकार के दोषों का भी षमन होता है । अतः कोई भी षुभकर्म विना लग्न षुद्धि के नहीं करना चाहिए ।

गृहप्रवेष करनें हेतु किस प्रकार का लग्न चुना जाए तथा कौन से ग्रह किस स्थान पर हों, एवं कौन कौन से भाव षुद्ध होनें चाहिए, इन सभी के विषय में आचार्य रामदैवज्ञ मुहूत्र्तचिन्तामणि में कहते हैं कि -

त्रिकोण केन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः ।
शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिरिक्ताचरदर्षचैत्रे ।।

ज्योतिष षास्त्र में स्वभाव की दृष्टि से राषियों को तीन वर्गो में विभाजित किया गया है। इन वर्गो के आधार पर ही किसी भी कार्य की प्रकृति के अनुसार लग्न का चयन किया जाता है। मेष-कर्क-तुला एवं मकर राषियां चर स्वभाव की होती है। वृष-सिंह-वृष्चिक एवं कुम्भ राषियां स्थिर स्वभाव की होती हैं। मिथुन-कन्या-धनु एवं मीन राषियां द्विस्वभाव प्रकृति की होती है। इनकी प्रकृति के अनुसार ही कार्य की प्रकृति जानकर लग्न का चयन किया जाता है। गृहप्रवेष एक स्थिर प्रकृति का कार्य है। अतः स्थिर लग्नों (वृष-सिंह-वृष्चिक-कुम्भ) में ही गृहप्रवेष करना अत्यन्त षुभ माना जाता है तथा द्विस्वभाव लग्नों में गृहप्रवेष करना मध्यम श्रेणी का माना जाता है। चर लग्नों में तो कथमपि गृहप्रवेष नहीं करना चाहिए। यदि स्थिर लग्नों में ग्रह षुद्धि एवं भाव षुद्धि न मिलती हो तो ही द्विस्वभाव लग्न का ग्रहण करना चाहिए। यदि ग्रह षुद्धि एवं भाव षुद्धि दोनों, चर लग्नों में मिल रही हो तो भी चर लग्नों में गृहप्रवेष नहीं करना चाहिए।

स्थिर एवं द्विस्वभाव लग्नों में एक बात और ध्यान देनें वाली होती है कि ये लग्न गृहस्वामी के जन्मराषि से और जन्म लग्न से उपचय (3.6.10.11) स्थान वाले होनें चाहिए। यदि जन्म राषि और लग्न से उपचय स्थान का स्थिर या द्विस्वभाव लग्न ग्रहण किया जाता है तो बहुत ही षुद्धतम एवं सूक्ष्मतम लग्न संषोधन माना जाता है। जन्म राषि या जन्म लग्न यदि दोनों से उपचय का स्थिर या द्विस्वभाव लग्न ग्रहण किया जाता है तो बहुत ही उत्तमोत्तम माना जाता है। यदि दोनों से न मिलें तो केवल एक से ही मिले तो उत्तम माना जाता है। यदि दोनों से न बनता हो तो केवल स्थिर लग्न ग्रहण करना मध्यम श्रेणी का माना जाता है और यदि स्थिर लग्न न मिले तो द्विस्वभाव लग्न ग्रहण करना अधम श्रेणी का माना जाता है।

गृहप्रवेष हेतु लग्न चयन करते समय एक बात और ध्यान रखनीं होती है कि गृहस्वामी के जन्म लग्न और जन्म राषि से अष्टम का लग्न भी गृहप्रवेष में निषिद्ध माना जाता है।

लग्नों में षिथिलता का एक प्रमुख कारण है कि गृहप्रवेष में चतुर्थ एवं अष्टमभाव की षुद्धि प्रमुख मानी जाती है। लग्न षुद्धि कर लेनें के पष्चात् ग्रहषुद्धि एवं भाव षुद्धि का विचार आवष्यक रूप से किया जाता है। ये दोनों भाव षुद्धि जिस लग्न में मिलती हो, उसी को गृह प्रवेष का लग्न स्वीकार कर

गृह प्रवेष करना चाहिए। भाव षुद्धि का तात्पर्य यह है कि गृह प्रवेष के लग्न में इन दोनों भावों में कोई भी ग्रह नहीं होनें चाहिए।

इसके अतिरिक्त भाव षुद्धि के प्रसंग में कहते हैं कि त्रिकोण स्थानों (5.9) और केन्द्रस्थानों (1.4.7.10) तथा द्वितीय भावों में षुभ ग्रह होनें चाहिए एवं षष्ठ स्थान में पापग्रह होनें चाहिए तथा तृतीय एवं एकादष भावों षुभाषुभ ग्रह होनें चाहिए। वस्तुतः किसी भी लग्न में सभी ग्रहों की उक्त स्थितियां मिल पाना अत्यन्त दुष्कर होता है तथापि अधिकाधिक ग्रहों का उक्त भावों में स्थित होने का लग्न चयन करना चाहिए।

2.7.1 लग्नशुद्धि का उदाहरण

जैसे अभिषेक (जन्म राषि नाम) नामक किसी गृहस्वामी को विक्रम संवत् 2076 षक 1941 माघ मास, षुक्ल पक्ष, तिथि षष्ठी, षुक्रवार, रेवती नक्षत्र, तदनुसार 31 जनवरी 2020 को नूतन गृहप्रवेष अभीष्ट है। माघ मास में रेवती नक्षत्र में गृहप्रवेष होता है। इसके पष्चात् अब लग्न षुद्धि करते हैं। अभिषेक की जन्मराषि मेष है तथा लग्न सिंह है। अतः इन दोनों से सर्वप्रथम उपचय स्थान का लग्न चयन करना चाहिए। जन्म राषि मेष से उपचय लग्न मिथुन, कन्या, मकर एवं कुम्भ हुआ तथा सिंह लग्न से उपचय स्थानस्थ लग्न तुला, मकर, वृष एवं मिथुन हुआ। इनमें सर्वप्रथम स्थिर लग्न का ही चयन करना होगा। उपर्युक्त में स्थिर लग्न वृष और कुम्भ हुआ। तदनु उपर्युक्त लग्नों में द्विस्वभाव लग्न मिथुन, कन्या हुआ। षेष लग्न चर होनें से अग्राह्य है। अतः अभिषेक के लिए 31 जनवरी को गृहप्रवेष हेतु केवल चार लग्न ही उपयुक्त है। इसमें भी दो स्थिर लग्न वृष और कुम्भ तो सर्वोत्तम है।

अब इन लग्नों में ग्रहषुद्धि देखी जाएगी। जिस लग्न में चतुर्थ और अष्टम भाव में कोई ग्रह न हो तो उसी लग्न का चयन किया जाएगा।

अब 31 जनवरी की ग्रहस्थिति को पंचांग में देखते हैं।

सूर्य 09|16|15|16

चन्द्र 11|27|55|02

मंगल 07|22|38|11

बुध 10|01|05|03

गुरू 08|20|54|24

शुक्र 10|26|25|8

शनि 08|28|10|59

राहु 02।12।23।56

केतु 08।12।23।56

सबसे पहले वृष एवं कुम्भ लग्नों में भाव शुद्धि करेंगे उसके बाद ग्रहशुद्धि का शोधन करेंगे।

वृष लग्न **कुम्भ लग्न2**

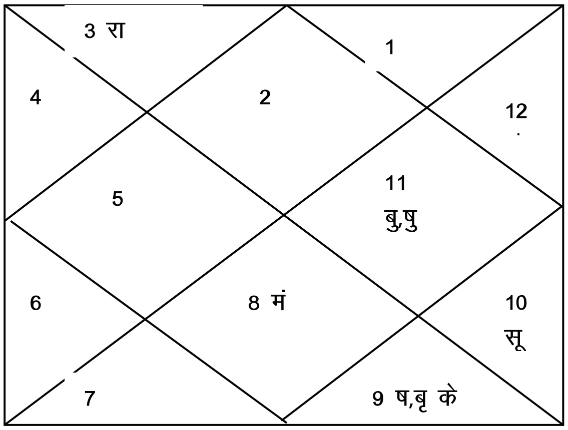

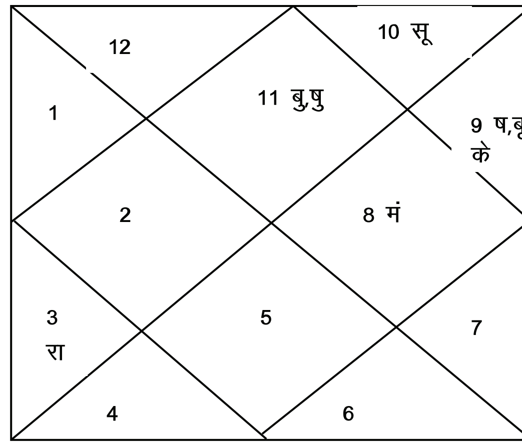

यहां पर वृष लग्न में चतुर्थ भाव तो शुद्ध है किन्तु अष्टम भाव शुद्ध नहीं है। अतः यह लग्न गृहप्रवेश हेतु दोषप्रद है।

कुम्भ लग्न में चतुर्थ एवं अष्टम भाव दोनों षुद्ध है। अतः कुम्भ लग्न गृहप्रवेष हेतु सर्वोपयुक्त है। लग्नों का समय स्थान के अनुसार बदलता रहता है। वाराणसी समयानुसार कुम्भ लग्न सुबह 08:25 से 09:56 तक रहेगा। अतः इसी समय में गृहप्रवेष करना षास्त्र सम्मत रहेगा। इसी प्रकार सर्वत्र लग्नादि का षोधन करना चाहिए।

यह कुम्भ लग्न गृहस्वामी अभिषेक की जन्म राषि मेष तथा जन्म लग्न सिंह से अष्टम संज्ञक नहीं है। अतः यह कुम्भ लग्न अभिषेक के गृहप्रवेष हेतु सर्वथा उपयुक्त है।

भाव षुद्धि के पष्चात् ग्रहषुद्धि देखते है। पूर्व कथित ग्रहषुद्धि तो पूर्ण रूप से कुम्भ लग्न में नहीं बन रही है तथापि केन्द्रभाव में षुक्र एवं बुध है आय भाव में षुभाषुभ दोनों ग्रह है। अतः ग्रह षुद्धि भी सामान्य रूप से प्राप्त हो रही है। ऐसे समय में किया गया गृहप्रवेष सौभाग्य एवं समृद्धि को देनें वाला होगा। इसी प्रकार सर्वत्र गृहप्रवेष हेतु षास्त्रोक्त कालषुद्धि देखी जाती है।

2.8 गृहप्रवेश में वार, तिथि शुद्धि विचार

गृहप्रवेश में वार एवं तिथि शुद्धि का भी विषेष विचार किया जाता है। तिथि यदि सामान्य भी हो तो चल जाता है किन्तु वार अत्यन्त शुद्ध होना चाहिए। अषुभ वारों में कथमपि गृहप्रवेश नहीं करना चाहिए। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार रविवार और मंगल वार में गृहप्रवेश नहीं करना चाहिए। कहीं-कहीं पर शनिवार को भी निषिद्ध माना जाता है परन्तु अनेक आचार्य शनिवार को स्वीकार करते हैं। वे ऐसा कहते है कि शनिवार के दिन गृहप्रवेश करने से चैर का भय बना रहता है। इसके अतिरिक्त शेष वारों में अर्थात् सोमवार, बुधवार, बृहस्पतिवार एवं शुक्रवार में गृहप्रवेश करना बहुत ही उत्तम माना जाता है।

तिथि शुद्धि के विषय में आचार्य कहते हैं कि अमावस्या एवं रिक्ता तिथियों में कथमपि गृहप्रवेश नहीं करना चाहिए। चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां रिक्ता तिथियां कहलाती हैं। रिक्ता एवं अमावस्या तिथियों के अतिरिक्त शेष तिथियों में गृहप्रवेष करना उपयुक्त माना जाता है। अतः पूर्वोक्त सभी तथ्यों का विधिवत् विचार कर लेनें के पश्चात् ही गृहप्रवेश हेतु शुद्धतम मुहूर्त्त प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न - 2

6. क्या पुष्य नक्षत्र मे नूतन गृहप्रवेश किया जाता है? हां/नहीं

7. गृहस्वामी के जन्मराशि या जन्मलग्न से कौन सा लग्न गृहप्रवेश में नहीं होना चाहिए ?

क. चतुर्थ ख. पंचम

ग. अष्टम घ. द्वादश

8. गृहप्रवेश में कौन से भाव शुद्ध होनें चाहिए ?

क. चतुर्थ ख. अष्टम

ग. ये दोनों घ. उपचय

9. स्थिर लग्नों में गृहप्रवेश किया जाता है। यह कथन सत्य /असत्य है।

10. मंगलवार को गृहप्रवेश किया जाता है। यह कथन सत्य /असत्य है।

2.9 सारांश

नूतन गृहप्रवेश हेतु शुद्धतम मुहूर्त्त का संशोधन करना बहुत ही कठिन एवं जटिल कार्य है क्योकि काल की दीर्घतम ईकाई से लेकर सूक्ष्मतम ईकाई का अवलोकन करना सरल कार्य नहीं है। गृहप्रवेशादि मुहूर्त्त जो पंचांगों में दिए जाते हैं वे सभी उक्त सिद्धान्तों पर ही आश्रित होते हैं। कुछ पंचांगों में गृहप्रवेशादि मुहूर्त्त अत्यन्त शुद्ध होते हैं तथा कुछ पंचांगों में गृहप्रवेशादि मुहूर्त्त शुद्ध होते हैं। अतः यदि पंचांग से गृहप्रवेशादि मुहूर्त्त देखना हो तो पूर्वोक्त कहे गए सभी सिद्धान्तों का अनुप्रयोग करके ही किसी प्रष्टा को मुहूर्त्त देना चाहिए। पंचांगों में जन्मराषि और लग्न से उपचय लग्न की शुद्धि एवं अष्टम लग्न की षुद्धि नहीं होती है। अतः इसका चिन्तन दैवज्ञ को स्वयं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त भी कुछ और तथ्यों का विचार गृहप्रवेश हेतु किया जाता है जिसका विवरण आगे के पाठो में दिया गया है। अतः इस ईकाई में प्रदत्त सभी पक्षों का अवलोकन करनें के पश्चात् ही गृहप्रवेश हेतु मुहूर्त्त का शोधन करना चाहिए।

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

माधव - वैशाख मास का बोधक है।

तप - माघ मास का परिचायक है।

द्वाःस्थ - द्वार नक्षत्र का बोधक है।

उडु - नक्षत्र का परिचायक है।

उपचय - 3,6,10 एवं 11 भावों को उपचय कहते हैं।

मार्ग - मार्गशीर्ष मास का बोधक है।

उर्जा - कार्तिक मास का बोधक है।

इज्य - बृहस्पति का बोधक है तथा पुष्य नक्षत्र का परिचायक है।

अनिल - स्वाती नक्षत्र का बोधक है।

वासव - धनिष्ठा नक्षत्र का बोधक है।

त्रिकोण - 5 एवं 9 भावों को त्रिकोण कहते हैं।

केन्द्र - 1, 4, 7, 10 भावों को केन्द्र कहते हैं।

अम्बु - चतुर्थ भाव को अम्बु कहते है।

रन्ध्र - अष्टम भाव की संज्ञा रन्ध्र है।

दर्श - अमावस्या का बोधक है।

आर - मंगल को आर से भी जाना जाता है।

रिक्ता तिथि - चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां रिक्ता तिथियां होती हैं।

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 की उत्तरमाला

1. ग
2. ग
3. हां
4. घ
5. सत्य

अभ्यास प्रश्न 2 की उत्तरमाला

6. नहीं
7. ग
8. ग
9. सत्य
10. असत्य

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ग्रन्थ नाम - मुहूर्त्तचिन्तामणि

ग्रन्थ कर्ता - आचार्य राम दैवज्ञ

प्रसिद्ध टीका - पीयूषधारा

टीकाकार - श्री गोविन्द दैवज्ञ

व्याख्याकार - श्री विन्ध्येष्वरी प्रसाद मिश्र

प्रकाशक - चैखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, पुर्नमुद्रित संस्करण 2009

2. ग्रन्थ नाम - बृहद् वास्तुमाला (संग्रह ग्रन्थ)

संग्रह कर्ता - श्री रामनिहोर द्विवेदी

सम्पादक - डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी

प्रकाशक - चैखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, संस्करण 2018

2.13 सहायक पाठ्यसामग्री

1. ग्रन्थ नाम - मुहूत्र्त मार्तण्ड

ग्रन्थ कर्ता - नाराण दैवज्ञ

व्याख्याकार - सीताराम झा

प्रकाशक - मास्टर खेलाडी लाल एण्ड सन्स, वाराणसी, संस्करण 1986

2. ग्रन्थ नाम - मुहूत्र्त कल्पद्रुम

ग्रन्थ कर्ता - श्री विट्ठल दीक्षित

सम्पादक एवं व्याख्याकार - श्री कृष्ण जुगनु

प्रकाशक - चैखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, संस्करण 2016

2.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नूतन गृहप्रवेश और जीर्णादि गृहप्रवेशों में अन्तरों की व्याख्या कीजिए।
2. नूतन गृहप्रवेश में कौन कौन से मास,नक्षत्र,वार,तिथि ग्राह्य है? इस विषय पर लघु निबन्ध लिखिए।
3. गृहप्रवेश में लग्नशोधन एवं भाव शुद्धि तथा ग्रह शुद्धि का विचार शास्त्रोक्त दृष्टि से कीजिए।
4. अपनी स्वेच्छा से किसी एक गृहप्रवेश का मुहूर्त्त शोधन कीजिए।

इकाई – 3 वृषभ वास्तुचक्र

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 वृष वास्तु चक्र परिचय

3.4 गृहारम्भ में अभिजिद् नक्षत्र की उपादेयता

3.5 वृष वास्तु चक्र का स्वरूप एवं उदाहरण

3.6 वृष वास्तु फल बोधक चक्र

3.7 वृष वास्तु चक्र की सरलतम विधि

3.8 सरलतम बोधक चक्र

3.9 सारांश

3.10 पारिभाषिक षब्दावली

3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.13 सहायक पाठ्यसामग्री

3.14 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

जब वास्तुशास्त्रोक्त विधि से भूमि का चयन एवं परीक्षणादि कार्य सम्पन्न कर लिया जाता है तब उस भूखण्ड पर नये घर के निर्माण की प्रक्रिया को प्रारम्भ किया जाता है। भूखण्ड पर सर्वप्रथम भवनादि निर्माण हेतु शिलान्यास या भूमिपूजन की प्रविधि को ही गृहारम्भ कहा जाता है। घर का आरम्भ शिलान्यास या भूमिपूजन अथवा स्तम्भोच्छाय को माना जाता है। खातारम्भ भी गृहारम्भ के अन्तर्गत ही माना जाता है किन्तु खातारम्भ का पृथक् मुहूर्त्त होता है जिसमे राहु मुख का विषेष विचार किया जाता है। घर निर्माण का प्रारम्भ शिलान्यास से ही माना जाता है। अतः गृहारम्भ मुहूर्त्त में मुख्य रूप से नन्दादि शिलाओं का पूजन किया जाता है। गृहारम्भ और प्रवेश के महत्व को बताते हुए आचार्य कहते हैं कि गृहस्थ व्यक्तियों की सभी मंगलादि कियाए गृह के विना सम्भव नहीं हो पाती हैं अतः गृहारम्भ और गृहप्रवेश के समयों को शास्त्रों में बताया जा रहा है।

गृहस्थस्य कियाः सर्वाः न सिद्ध्यन्ति गृहं विना।
यतस्तस्माद् गृहारम्भप्रवेषसमयौ ब्रुवे।।

गृहारम्भादि हेतु षुभ मुहूर्त्त के संषोधन हेतु विविध चक्रो का परीक्षण करना महत्वपूर्ण होता है। इनके परीक्षण के पष्चात् ही गृहारम्भादि का उत्तम मुहूर्त्त प्राप्त होता है। गृहारम्भ के लिए मूलतः वृषवास्तु चक्र की शुद्धि विचारणीय होती है। वृष वास्तु चक्र के द्वारा प्राप्त काल में ही गृहारम्भ करना चाहिए। अतः इस इकाई का आप विधिवत् अध्ययन करें।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप

- गृहारम्भ में वृष वास्तु चक्र के महत्व के बारे में जान सकेंगे ।
- वृष वास्तु चक्र मुहूर्त्त संषोधन करने में दक्ष हो सकेंगे ।
- किस प्रकार सरल रूप में वृष वास्तु चक्र का परिज्ञान किया जाता है इसके विषय में जान सकेंगे ।
- इनके षुभाषुभत्व फलों के बारे में जान सकेंगे ।
- अभिजिद् नक्षत्र के वास्तविक स्वरूप के बारे में जान सकेंगे ।

3.3 वृष वास्तु चक्र परिचय

जितना हमारा भूखण्ड (लम्बाई x चौडाई) होता है, जिस पर गृह निर्माण करना अभीष्ट होता है उस भूखण्ड पर वास्तुपुरूष की कल्पना करके गृहारम्भ की प्रक्रिया को प्रारम्भ किया जाता है। ज्योतिष षास्त्र में वास्तु पुरुशष को अनेक रूपो में परिभाषित किया गया है। बहुत सारे आचार्यो के मत में यह वास्तु पुरूष, नराकार में होते हैं। कुछ आचार्यो के मत में यह कच्छपाकार में होते हैं तथा कुछ आचार्यो के मत में यह वृष के आकार में होते हैं। ऐसे बहुत से वास्तु पुरूष के स्वरूपों को बताया गया है और प्रत्येक का पृथक् पृथक् प्रयोजन भी बताया गया है। गृहारम्भ में भूखण्ड पर नराकार वास्तु की कल्पना करके उसके मर्म स्थानों पर निर्माण कार्य नहीं करना चाहिए तथा इसी गृहारम्भ में एवं गृहप्रवेष में इसी वास्तु पुरूष की पूजा होती है।

गृहारम्भ हेतु जब काल का षोधन किया जाता है तब वृषाकार वास्तु का चिन्तन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। जब इस वृषाकार वास्तु चक्र की षुद्धि प्राप्त होती है तभी गृहारम्भ करना चाहिए अन्यथा नहीं करना चाहिए। पंचांगों में जितनें भी गृहारम्भ के मुहूर्त्त दिए जाते हैं वे सभी वृष वास्तु चक्र के अनुसार षुद्ध होते ही हैं । अतः गृहारम्भ काल हेतु वृष वास्तु चक्र का अवष्य हीं अवलोकन करना चाहिए। यह वास्तु चक्र स्वयं भगवान् व्यास जी नें परिभाषित किया है । जैसा कि कहा गया है –

वास्तुचकं प्रवक्ष्यामि यच्च व्यासेन भाषितम्

इस वृष वास्तु चक्र में वास्तुपुरूष को वृष के आकार में कल्पित किया गया है। भारतीय संस्कृति जो कृषि प्रधानात्मिका है उसमें वृष का महत्वपूर्ण योगदान है। वृष का साक्षात् सम्बन्ध भूमि से है। इसलिए भूखण्ड में वास्तु पुरूष को वृषाकार रूप में भी द्योतित किया गया है। गृहारम्भ में इसी की शुद्धि का विशेष विधान है। इस विषय में रामदैवज्ञ अपनें ग्रन्थ मुहूर्त्त चिन्तामणि में कहते हैं कि –

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सषीर्षे रामैर्द्वाहो वेदभैरग्रपादे।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं रामैः पृष्ठे श्रीर्युगैर्दक्षकुक्षौ।।
लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाषो वेदैर्नैःस्व्यं वामकुक्षौ मुखस्थैः।
रामैः पीडा सन्ततं चार्कधिष्ण्यादष्वै रूद्रैर्दिग्भिरूक्तं ह्यसत्सत्।।

गृह इत्यादि के आरम्भ के समय में इस वृष वास्तु चक्र का उपयोग करना चाहिए। इस वृष वास्तु चक्र का उपयोग केवल गृहारम्भ में ही नहीं अपितु देवालयारम्भ, प्रासादारम्भ, तडागारम्भ, ग्रामारम्भ, उपवनारम्भ इत्यादि में भी किया जाता है।

इस वृष वास्तु चक्र निर्माण का मुख्य आधार सूर्य और चन्द्र होते हैं। सूर्य और चन्द्र इन दोनों की परस्पर नाक्षत्रिक दूरी के अनुसार ही वृष वास्तु चक्र का निर्माण होता है । सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र तक की जो दूरी होती है उसमें से कुछ दूरियां कष्टप्रद होती हैं तथा कुछ दूरियां सुखप्रद होती हैं। सुखप्रद दूरियां या स्थितियां ही गृहारम्भ में ग्राह्य होती है तथा अषुभप्रद दूरियां अग्राह्य होती है।

आकाषीय ग्रह स्थितियों के अनुसार सूर्य एक नक्षत्र पर लगभग 12 दिन तक रहता है तथा चन्द्र एक नक्षत्र पर लगभग 1 दिन तक रहता है। सूर्य और चन्द्र के नक्षत्रों का विवरण पंचांगों में दिया रहता है। वृष वास्तु चक्र सूर्य नक्षत्र से वर्तमान चन्द्र नक्षत्र तक की संख्याओं पर आधारित रहता है।

सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उस नक्षत्र से 3 चन्द्र नक्षत्र तक वृष वास्तु के षिर में कल्पना करें। इस समय गृहारम्भ करनें से गृह में अग्नि का भय बना रहता है । पुनः उसके बाद 4 नक्षत्र तक वृष वास्तु के अग्रपाद में कल्पना करनी चाहिए। इस समय गृहारम्भ करनें से गृह में षून्यता होती है अर्थात् गृहनिर्माण होनें के पष्चात् भी उस घर में कोई निवास नहीं कर सकता। पुनः उसके बाद 4 नक्षत्रों तक वृष वास्तु के पृष्ठ पाद में कल्पना करनी चाहिए। इस समय गृहारम्भ करनें से गृह में स्थिरता बनी रहती है। उसके बाद 3 नक्षत्रों तक वृष वास्तु के पीठ पर कल्पना करनी चाहिए। इस समय गृहारम्भ करनें से गृह में श्री की प्राप्ति होती है। पुनः उसके बाद 4 नक्षत्र वृष वास्तु के दाहिनें कुक्ष (कोख) में कल्पना करनी चाहिए। इसमें गृहारम्भ करनें से लाभ होता है। पुनः इसके बाद 3 नक्षत्रों में वृष वास्तु के पुच्छ में परिकल्पना करनी चाहिए । इस समय गृहारम्भ करनें से गृह स्वामी को कष्ट होता है। पुनः इसके बाद 4 नक्षत्र वृष वास्तु के वाम कुक्ष में कल्पना करनी चाहिए। इस समय गृहारम्भ करनें से द्ररिद्रता का वास गृह में होता है। पुनः इसके पष्चात् 3 नक्षत्र वृष वास्तु के मुख में कल्पना करनी चाहिए। इस समय गृहारम्भ करनें से पीडा होती है। **इस प्रकार वृष वास्तु की कल्पना साभिजित् करनी चाहिए।** अतः 28 नक्षत्रों का इसमें समावेष किया गया है। जिसके आधार पर गृहारम्भ के षुभाषुभ समयों का विधिवत् परिज्ञान किया जाता

है।

3.4 गृहारम्भ में अभिजिद् नक्षत्र की उपादेयता

ज्योतिष षास्त्र में कुछ स्थानों पर 27 नक्षत्रों की गणना की जाती है तथा कुछ स्थानों पर 28 नक्षत्रों की गणना की जाती है। इसी क्रम में गृहारम्भ में भी साभिजिद् अष्टाविंषति नक्षत्रात्मक गणना करनें की पद्धति प्रचलित है। इसके अतिरिक्त भी अनेक स्थलों पर 28 नक्षत्रात्मक गणना करनें की पद्धति है। जैसे जातक षास्त्र में जब अष्टोत्तरी दषा का साधन किया जाता है तब उसमें साभिजिद् अष्टाविंषति नक्षत्र की गणना की जाती है। इसी प्रकार अभिजिद् नक्षत्र की संज्ञा भी अन्य नक्षत्रों के ध्रुवादि संज्ञाओं के जैसे ही की गई है। मुहूर्त्त शास्त्र में अभिजिद् नक्षत्र को क्षिप्र और लघु संज्ञा से बोधित किया जाता है। इस नक्षत्र में किया गया कार्य त्वरित ही फल को प्रदान करता है। मुहूर्त्त चिन्तामणिकार नें अपने ग्रन्थ में अभिजिद् के बारे में कहा है कि –

हस्ताष्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघु गुरूस्तथा।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाषिल्पकलादिकम्।।

वस्तुतः अभिजिद् नक्षत्र अन्य नक्षत्रों के जैसे पूर्ण अस्तित्व वाला नहीं है तथापि इसकी सत्ता विद्यमान है। दो नक्षत्रों के मध्य में ही इसका स्थान दिया गया है। षास्त्रानुसार उत्तराषाढा नक्षत्र के अन्त्य की 15 घटी तथा श्रवण नक्षत्र के आदि की 4 घटी, कुल मिलाकर 19 घटी तक का मान अभिजिद् नक्षत्र का होता है। जैसा कि रामदैवज्ञ कहते हैं –

वैष्वप्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजिद् स्याद्।।

अभिजिद् नक्षत्र का यह मान मध्यम गति के अनुसार ग्रहण किया गया है। नक्षत्रों के मान न्यूनाधिक्य होनें पर यह 19 घट्यात्मक मध्यम मान भी न्यूनाधिक्य होता है। इसी प्रकार अभिजिद् नक्षत्रस्थ सूर्य का भी साधन करके गृहारम्भ हेतु गणना करनें का विधान प्राप्त होता है। पंचांगानुसार अभिजिद् नक्षत्र पर सूर्य लगभग 4 दिन तक रहता है और पंचांगों में इसका उल्लेख भी दिया रहता है।

नक्षत्रों के स्वामी वर्णन प्रसंग में भी अभिजिद् नक्षत्र का स्वामी ब्रह्मा निर्देषित किया गया है। अतः अभिजित् नक्षत्र पर ब्रह्मा का अधिकार ही इसकी उपादेयता को सिद्ध करता है।

पुनः नक्षत्रों की जो अन्धादि संज्ञा वस्तु के परिज्ञान हेतु बताई गई है उसमें भी साभिजिद् गणना करनें का विधान प्राप्त होता है। इसके अन्तर्गत अभिजिद् नक्षत्र को मध्य संज्ञा से बोधित किया जाता है। इस प्रकार ज्योतिष ष्षास्त्र में अभिजिद् नक्षत्र को लेकर अनेक प्रसंग प्राप्त होते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि अभिजिद् नक्षत्र का ग्रहण करना षास्त्रोचित है।

अभ्यास प्रश्न – 1

1. वास्तु पुरूष का स्वरूप ज्योतिष षास्त्र में किस रूप में है?

   क. कूर्माकार ख. नराकार

   ग. वृषाकार घ. ये सभी
2. सूर्य एक नक्षत्र पर लगभग कितने दिनों तक रहता है ?

   क. 1 दिन ख. 12 दिन

   ग. 25 दिन घ. 30 दिन
3. चन्द्र एक नक्षत्र पर लगभग कितने दिनों तक रहता है ?

   क. 1 दिन ख. 12 दिन

   ग. 25 दिन घ. 30 दिन
4. सूर्य नक्षत्र में चान्द्र नक्षत्र यदि 8 वां हो तो क्या फल होता है ।

   क. दाह ख. ष्षून्य

   ग. स्थिरता घ. श्री
5. वृष वास्तु चक्र में साभिजित् गणना होती है । सत्य/ असत्य

3.5 वृष वास्तु चक्र का स्वरूप एवं उदाहरण

वृष वास्तु चक्र का स्वरूप किस प्रकार से वर्णित है उसका एक चित्रात्मक उदाहरण निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

वृष वास्तु चक्र स्वरूप

अधोलिखित चित्र के अनुसार वृषाकार वास्तु चक्र की षुद्धि का स्वरूप निर्दिष्ट है ।

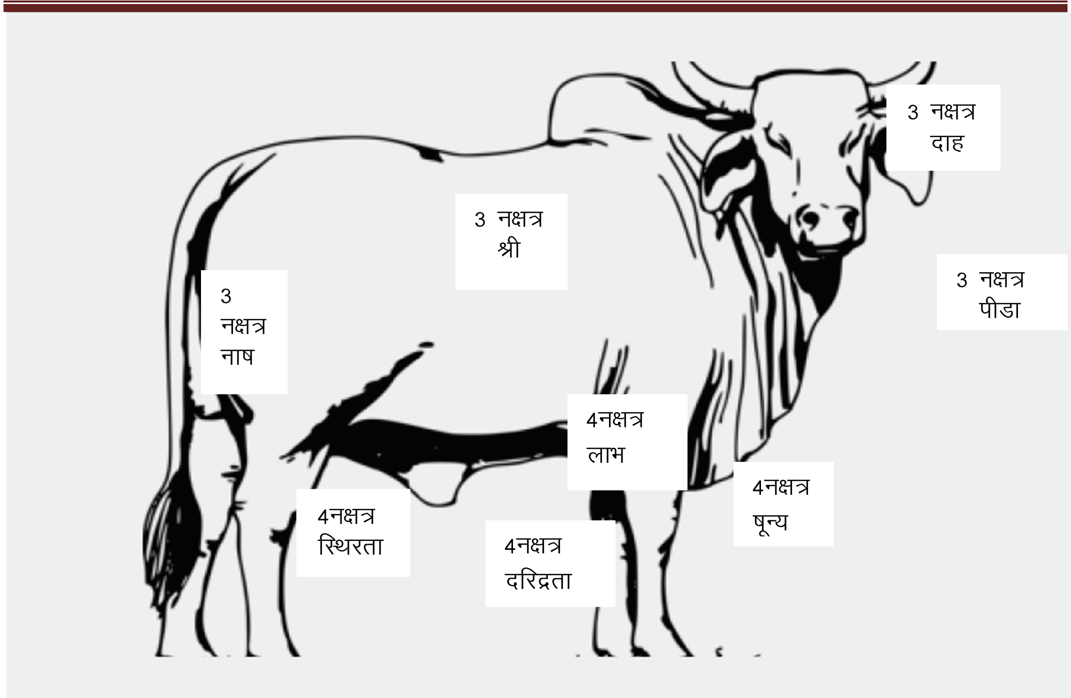

उदाहरण –

गृहारम्भ किन किन मासादि में किया जाना चाहिए इस विषय में आपनें पूर्व के पाठों में पढा है । यहां पर उन सभी का मुहूर्त्त षोधन न करके केवल वृष वास्तु चक्र का ही षोधन किया जा रहा है ।

जैसे किसी भूखण्ड स्वामी को विक्रम संवत् 2076 षक 1941 फाल्गुन मास, कृष्ण पक्ष पक्ष, तिथि पंचमी, गुरूवार, हस्त नक्षत्र, तदनुसार 13 फरवरी 2020 को गृहारम्भ अभीष्ट है ।

सर्वप्रथम हम इस तिथि के दिन वृष वास्तु चक्र की षुद्धि देखेंगे । यदि इस दिन वृष वास्तु चक्र की षुद्धि प्राप्त होगी तभी गृहारम्भ का कार्य सिद्ध हो सकेगा । एतदर्थ 13 फरवरी को सूर्य और चन्द्र की नक्षत्र स्थिति का अवलोकन करेंगे । **13 फरवरी को सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र पर है ।** धनिष्ठा नक्षत्र पर सूर्य 6 फरवरी रात्रि से ही आरम्भ हो चुका है । 1 नक्षत्र पर सूर्य लगभग 12 दिनों तक रहता है अतः 20 फरवरी तक तो सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र पर ही रहेगा ।

सूर्य नक्षत्र स्थिति जान लेनें के पष्चात् चन्द्र नक्षत्र की स्थिति का ज्ञान करना चाहिए । अतः पंचांग में अवलोकन करनें पर **13 फरवरी को चन्द्रमा हस्त** नक्षत्र पर स्थिति है जो दिन के 02:05 तक रहेगा । इसके बारद चित्रा नक्षत्र प्रारम्भ हो जाएगा ।

वृष वास्तु चक्र के षोधन के लिए सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से चन्द्राधिष्ठत नक्षत्र तक साभिजिद् गणना करेंगे । गणना के क्रम में धनिष्ठा नक्षत्र प्रथम हुआ । दितीय षतभिषा हुआ । इसी प्रकार गणना करनें पर **हस्त नक्षत्र की संख्या 18 हुई ।**

अब षुभाषुभ फल परिज्ञान हेतु वृष वास्तु चक्र में देखेंगें कि किस अंग में यह संख्या है तथा उसका फल क्या है ।

वृष वास्तु चक्र अवलोकन करनें पर यह ज्ञात हुआ कि 18 वां नक्षत्र दक्ष कुक्ष में हुआ तथा उसका फल लाभ है । अतः 13 फरवरी को गृहारम्भ करना उत्तम रहेगा । हस्त नक्षत्र को गृहारम्भ में ग्रहण किया जाता है । अतः वृष वास्तु चक्र षुद्धित गृहारम्भोदित नक्षत्र में ही गृहारम्भ करना षास्त्र दृष्टि से अनुकूल होता है । इसी प्रकार से वृष वास्तु चक्र की षुद्धि गृहारम्भ, देवालयारम्भ, तडागारम्भ, उपवनारम्भ, ग्रामारम्भ, प्रासादारम्भ, नगरारम्भ इत्यादि में देखना चाहिए ।

3.6 वृष वास्तु फल बोधक चक्र

वृष वास्तु के फलों का वर्गीकरण अधोलिखित चक्र के माध्यम से स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है ।

स्थान	नक्षत्र संख्या	फल
षीर्ष	3	अग्नि भय
अग्र पैर	4	षून्य
पृष्ठ पैर	4	स्थिरता
पीठ	3	लक्ष्मी प्राप्ति
दक्षिण कुक्ष	4	लाभ
पुच्छ	3	स्वामिनाष
वामकुक्ष	4	निर्धनता
मुख	3	पीडा

3.7 वृष वास्तु चक्र की सरलतम विधि

वृष वास्तु चक्र को सरल रूप में भी षास्त्रों में बताया गया है । इसके माध्यम से भी संक्षिप्त रूप से षुभाषुभ का परिज्ञान किया जाता है । पूर्व के ष्लोक में वृष वास्तु चक्र के प्रत्येक अंगो का क्या पृथक् पृथक् फल होता है? वह प्रतिपादित किया गया है किन्तु अधोलिखित ष्लोक में केवल वृष वास्तु जन्य षुभाषुभ का ही विधान किया गया है । जैसा कि कहते हैं वृहद् वास्तुमालाकार –

सूर्यभाद् गणयेत् वास्तुचकं च दिनभावधि ।
अष्व–रूद्र–दषर्क्षं च ह्यषुभं षुभदं क्रमात् ।।

सूर्य के नक्षत्र से वर्तमान चान्द्र नक्षत्र तक गणना करें । पहले के 7 नक्षत्र अषुभ होते हैं उसके बाद के 11 नक्षत्र षुभ होते हैं और उसके बाद के 10 नक्षत्र अषुभ होते हैं । इस प्रकार मध्य के केवल 11 नक्षत्र ही गृहारम्भ में ग्राह्य होते हैं । इन 11 चान्द्र नक्षत्रों में भी गृहारम्भ हेते जो नक्षत्र विहित है उन्हीं में ही गृहारम्भ किया जाना चाहिए । ऐसा नहीं कि

इन 11 नक्षत्रों में भी गृहारम्भ किया जा सकता है । यह केवल षुभाषुभत्व का बोधक है । इन मध्य के 11 नक्षत्रों में ही गृहारम्भ हेतु उपयुक्त नक्षत्रों में ही गृहारम्भ करना चाहिए । अतः वृष वास्तु चक्र की षुद्धि जिस गृहारम्भोक्त नक्षत्र में मिल रही हो तो उसी में ही गृहारम्भादि कार्य किया जाना चाहिए । यही वृष वास्तु चक्र षुद्धि कही जाती है ।

3.8 सरलतम बोधक चक्र

वृष वास्तु चक्र को अधोलिखित सारिणी के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है ।

सूर्य से चन्द्र नक्षत्र संख्या	7	11	7
फल	अषुभ	ष्षुभ	अषुभ

अभ्यास प्रष्नोत्तर – 2

6. **भात्** षब्द का क्या अर्थ होता है?
   क. नक्षत्र में ख. नक्षत्र को
   ग. नक्षत्र के लिए घ. नक्षत्र से

7. गृहारम्भ में सूर्य नक्षत्र से 25वां चान्द्र नक्षत्र षुभ होता है? सत्य/असत्य

8. वृष वास्तु चक्र में यदि मुख में चान्द्र नक्षत्र है तो क्या फल होता है?
   क. लाभ ख. स्वामी नाष
   ग. निर्धनता घ. पीडा

9. रूद्र षब्द से किस संख्या का बोध होता है?
   क. 5 ख. 7
   ग. 10 घ. 11

10. वृष वास्तु चक्र में यदि षीर्ष में चान्द्र नक्षत्र है तो क्या फल होता है?
   क. अग्नि भय ख. षून्य
   ग. स्थिरता घ. श्री

3.9 सारांश

गृहारम्भ के प्रकरण में वृष वास्तु चक्र का विषिष्टतम स्थान है । इस चक्र के अनुसार जब षुद्धि बनती है तभी गृहादि कार्य का प्रारम्भ करना श्रेष्ठतम माना जाता है । गृहारम्भ के प्रायः जितनें भी मुहूर्त्त पंचांगो में दिए रहते हैं वे सभी वृष चक्र से षुद्ध होते हैं । सूर्य और चन्द्र के विषिष्ट योग से निर्मित यह वृष वास्तु चक्र गृहारम्भ समयक आकाषीय विषिष्ट

गतिविधीय संरचना को संकेतित करता है । सूर्य और चन्द्रमा ही हमारें षुभाषुभ कर्मो के विषेष रूप से साक्षी होते हैं । अतः इन दोनों के षुभ संयोग से ही गृहादि का आरम्भ करना अत्यन्त षुभ माना जाता है । सरल षब्दों में कहें तो सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उससे 7 चान्द्र नक्षत्रों में गृहारम्भादि करना अषुभ होता है । पुनः उससे 11 नक्षत्रों में गृहारम्भादि करना षुभ होता है और उससे 10 नक्षत्रों में गृहारम्भादि करना अषुभ होता है । अतः केवल 11 चान्द्र नक्षत्र ही गृहारम्भ में षुभ मानें जाते हैं । इस समय गृहारम्भादि कार्य करना ज्योतिष षास्त्र के अनुसार अत्यन्त षुभ माना जाता है । वृष वास्तु चक्र का उपयोग केवल गृहारम्भ में ही नहीं करना चाहिए अपितु देवालयारम्भ, नगरारम्भ, ग्रामारम्भ,नगरारम्भ, कूपारम्भ, तडागारम्भ, प्रासादारम्भ इत्यादि में भी किया जाना चाहिए ।

3.10 पारिभाषिक शब्दावली

अर्कभात् – सूर्य के नक्षत्र से ।

राम – ज्योतिष में षब्दों से संख्या ज्ञात करनें की प्राचीन विधि है । पुराणों के अनुसार भगवान् श्री राम, परषुराम और बलराम ये तीन नाम राम से बोधित होते हैं । अतः ज्योतिष में राम षब्द से 3 का बोध किया जाता है ।

दक्ष – दाहिनें भाग का बोधक है ।

अष्व – सूर्य के 7 घोडे हैं, जो भगवान् सूर्य के रथ को खींचते हैं । अतः अष्व षब्द से 7 का बोध किया जाता है ।

रूद्र – भगवान् षंकर को रूद्र कहते हैं । जिनके 11 अवतार पुराणों में प्रसिद्ध हैं अतः ज्योतिष में रूद्र षब्द से 11 की संख्या को ग्रहण करते हैं ।

दिक् – पूर्वादि 10 दिषायें होती हैं । पूर्व, पष्चिम्, उत्तर, दक्षिण ये चार मुख्य दिषाए होती हैं तथा चार कोण दिषायें अग्नि कोण, नैऋत्य कोण, वायव्य कोण और ईषान कोण तथा उपर और नीचे की दिषायें । कुल मिलाकर 10 दिषायें होती हैं । अतः दिक् षब्द से 10 का बोध करना चाहिए ।

दिनभ – दिन का नक्षत्र ।

भात् – भ षब्द नक्षत्र का बोधक है तथा इसका पंचमी एकवचन में भात् रूप बनता है जिसका अर्थ होता है नक्षत्र से ।

3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रष्नोत्तर – 1

1. घ
2. ख
3. क
4. ग
5. सत्य

अभ्यास प्रष्नोत्तर – 1

6. घ
7. असत्य
8. घ

9 .घ

10. क

3.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्तचिन्तामणि
   ग्रन्थ कर्ता – आचार्य राम दैवज्ञ
   प्रसिद्ध टीका – पीयूषधारा
   टीकाकार – श्री गोविन्द दैवज्ञ
   व्याख्याकार – श्री विन्ध्येष्वरी प्रसाद मिश्र
   प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, पुर्नमुद्रित संस्करण 2009

2. **ग्रन्थ नाम** – बृहद् वास्तुमाला (संग्रह ग्रन्थ)
   संग्रह कर्ता – श्री रामनिहोर द्विवेदी
   सम्पादक – डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
   प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, संस्करण 2018

3.13 सहायक पाठ्यसामग्री

1. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्त मार्तण्ड
   ग्रन्थ कर्ता – नाराण दैवज्ञ
   व्याख्याकार – सीताराम झा
   प्रकाशक – मास्टर खेलाडी लाल एण्ड सन्स, वाराणसी, संस्करण 1986

2. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्त कल्पद्रुम
   ग्रन्थ कर्ता – श्री विट्ठल दीक्षित
   सम्पादक एवं व्याख्याकार – श्री कृष्ण जुगनु
   प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाषन, वाराणसी, संस्करण 2016

3. **पंचाग** – श्री काषी विष्वनाथ पंचाग, हृषीकेष हिन्दी पंचांग
   प्रवर्धक – श्री नागेष उपाध्याय
   प्रकाषन – विक्रम पंचांग प्रकाषन बी 2/95 सी भदैनी, वाराणसी

3.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वृष वास्तु चक्र का महत्व बताते हुए इसके निर्माण की प्रक्रिया को भी वर्णित करें ।
2. गृहारम्भ हेतु किसी एक स्वकल्पित उदाहरण के द्वारा वृष चक्र की षुद्धि करें ।

इकाई – 4 वास्तुपूजन विधि

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 वास्तुपूजन की आवश्यकता

4.4 वास्तुपूजन में प्रमुख देवादि का पूजनविधान

4.5 शान्तिपाठ एवं संकल्प तथा दिग् रक्षण

4.6 गणेशाम्बिकादि पूजन एवं उपचार पद्धति

4.7 एकाशीतिपद मण्डल वास्तुपुरूष पूजन

4.8 सारांश

4.9 हवन,ग्रहपूजन,बलिदान,बलि और समापन

4.10 पारिभाषिक शब्दावली

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.13 सहायक पाठ्यसामग्री

4.14 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भारतीय सनातन परम्परा में मूल रूप से पंच देव उपासना की विशेष पद्धति प्रचलित है। शिव–विष्णु–देवी–गणपति और सूर्य ये प्रमुख पांच देव अनादि काल से ही उपास्य रहे हैं। सृष्टि अनुवर्तन के काल क्रम में इन सभी देवताओं का स्वरूप अनेक रूपों में विभक्त हो गया तथा ब्रह्मादि के द्वारा सृष्टि प्रक्रिया के संचालनार्थ अनेक प्रकार की चराचर जीवों की उत्पत्ति की हुई। मानव भी इसी श्रृंखला की एक कडी मात्र है जिसका प्रमुख कर्तव्य होता है कि इन सभी देवताओं के प्रति अपनी कृतज्ञता को ज्ञापित करना। क्योकि सभी प्रकार की स्थावर जंगम उद्भिज इत्यादि की श्रेणीयों में मानव जाति सर्वोपरि है तथा सर्वश्रेष्ठ होनें के कारण इस मानव जाति का प्रमुख कर्तव्य है कि सभी प्रकार जीवों जन्तुओं तथा देवादि पर अपनी अनुकूलता का स्मरण करते रहना। किसी भी प्रकार का गृहनिर्माण हो, प्रासाद निर्माण हो, मण्डप निर्माण हो, मन्दिरादि निर्माण हो तो उसमें अनेक प्रकार के देवताओं के पूजन का विधान प्राप्त होता है। न केवल गृहप्रवेशादि में शान्ति करनी चाहिए अपितु गृहनिर्माणादि में भी वास्तु शान्ति करनी चाहिए तथा पूजन करना चाहिए। जैसा कि कहा गया है –

निर्माणे मन्दिराणां च प्रवेषे त्रिविधेऽपि वा।
वास्तुपूजा च कर्तव्या यस्मात्तां कथयाम्यतः।।

अतः गृहारम्भादि पूर्व तथा गृहप्रवेशादि पूर्व वास्तु पुरूष का पूजन करनें का विधान वैदिक पद्धति में प्राप्त होता है। वैदिक पद्धति से की गई वास्तु षान्ति करनें से गृहादि में सर्वदा सुख एवं समृद्धि होती है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप ...

- ❖ जान सकेंगे कि गृहारम्भादि में वास्तुपूजन का क्या महत्त्व है।
- ❖ जान सकेंगे कि वास्तुपूजन किस प्रकार से होता है।
- ❖ समझ सकेंगे कि वास्तुपूजन की वैदिक प्रद्धति किस प्रकार होती है।
- ❖ जान सकेंगे कि विविध देवताओं की स्थापना किस प्रकार से की जाती है।
- ❖ समझ सकेंगे कि वैदिक विधि से सांगोपांग पूजन किस प्रकार होता है।

4.3 वास्तुपूजन की आवश्यकता

मनुष्य के उपर जन्म मात्र होनें से ही तीन प्रमुख प्रकार के ऋणों का वंशानुक्रम प्राप्त होता है। ये तीन ऋण हैं देव–ऋषि और पितृ। ऋण का तात्पर्य यह होता है कि हमें उसको चुकाना है और यह हमारे उपर जन्म से ही होता है। चुकाने का तात्पर्य यह है कि हमें उनके प्रति अपनी निष्ठा को विविध आयोजनों द्वारा प्रदर्शित करना। इसी क्रम में देव ऋण हमारे उपर जन्म से ही होता है उसे उऋण होनें के लिए सर्वदा ही समस्त

सुखदुःखादि में देवता का संस्मरण करते रहना चाहिए। गृहप्रवेश भी एक सार्वभौमिक सुख का बोधक है। मनुष्य स्वपरिश्रम से और दैव कृपा से सम्पत्ति अर्जित करता है तथा गृहादि का उपक्रम करता है। गृहादि निर्माण में सर्वप्रथम तत्सम्बन्धित देवी देवताओं का पूजन करने का विधान प्राप्त होता है। पूजन करनें का तात्पर्य यह है गृहसुखादि जनक जो भी देवादि होते हैं वे सभी हमारे अनुकूल हों और सर्वदा सुख एवं समृद्धि की वृद्धि करते रहें तथा दुःखादि को दूर करें।

वास्तु शान्ति की प्रकिया वैदिक पद्धति के अनुसार बहुत जटिल एवं विस्तृति है वर्तमान समय में उस प्रकिया का लोप होते दिखाई दे रहा है। आज के भौतिक परिवेश में मनुष्य के पास देवादि पूजन हेतु पर्याप्त समय नहीं हो पा रहा है तथा वैदिक विधि प्रक्रिया को छोडकर अपने मनमानें ढंग से पूजन कर रहा है और उपयुक्त एवं योग्य वैदिक ब्राह्मण के अभाव में वह प्रक्रिया लुप्त प्राय हो रही है। यदि शास्त्रोक्त वैदिक विधि द्वारा वास्तु पूजन इत्यादि किया जाए तो निश्चित ही गृहजन्य सुख एवं समृद्धि में वृद्धि होगी तथा लोक कल्याण भी होगा।

वैदिक विधि बहुत विस्तृत है। अतः यहां पर सार रूप में ही वास्तु पूजन विधि बताई जा रही है। यदि आप बृहद् एवं विस्तृत अध्ययन एवं पूजन कराना चाहते हैं तो ग्रहषान्ति, गृहवास्तु षान्ति प्रयोग इत्यादि ग्रन्थों का अध्ययन करें।

4.4 वास्तुपूजन में प्रमुख देवादि का पूजनविधान

वास्तु पूजन करना या वास्तु शान्ति करने में विशेष अन्तर नहीं होता है। जब हम सर्वप्रथम गृहारम्भ या गृहप्रवेश करते हैं तो वास्तु शान्ति पूर्वक गृहारम्भादि करते हैं तो वह वास्तुपूजन कहलाता है और गृह में वास्तु दोष के कारण जो शान्ति की जाती है वह वास्तु शान्ति कहलाती है। जिस स्थान पर वास्तुपूजन करना होता है या जिस गृह में वास्तु शान्ति करनी होती है तो उस स्थान पर वास्तुपूजन के पूर्व अनेक देवताओं का भी पूजन करना होता है। वस्तुतः गृहप्रवेशादि में 81 वास्तु पद में स्थित आन्तरिक एवं बाह्य देवताओं का पूजन करना प्रमुख होता है तथापि सांगोपांग पूजन करना ही मुख्य वास्तु पूजन होता है।

सर्वप्रथम जिस दिन वास्तुपूजन करना अभीष्ट होता है या वास्तुशान्ति करनी अभीष्ट होती है उस दिन ज्योतिष शास्त्र द्वारा मुहूर्त्त शोधन कर लेना चाहिए। मुहूर्त्त शोधन कर लेने के पष्चात् गृहस्वामी अपने परिवार जनों के सहित नित्यकर्मादि से निवृत्त होकर शुद्ध वस्त्र धारण कर पूर्व एवं उत्तर दिशा की ओर मुख करके दीपक प्रज्वलित करके संकल्प करें। संकल्प करनें के पूर्व शान्तिपाठ करना आवश्यक होता है। शान्तिपाठ करने से संकल्पित पूजन में शान्ति प्राप्त होती है तथा विघ्न दूर होता है।

4.5 शान्तिपाठ एवं संकल्प तथा दिग् रक्षण

शान्तिपाठ में गणपत्यादि देवों का संस्मरण किया जाता है। शान्तिपाठ वैदिक एवं लौकिक दोनों प्रकार का होता है। लौकिक मन्त्र है –

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः।।
धूम्रकेतुः गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छुणुयादपि।।
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजं।
प्रसन्नवदनं घ्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

शान्तिपाठ के पाठ वास्तुपूजन हेतु संकल्प किया जाता है। संक्षिप्त संकल्प निम्नलिखित है –

मम पुत्रपौत्रादिसहितस्य अस्मिन् नूतनगृहे चिरकालसुखनिवाससर्वसंकटनानाविधरोगादि सर्वोपद्रवशान्तिसम्पदाऽयुरारोग्यधनधान्यद्विपदचतुष्पद पुत्रपौत्राद्यभिवृद्धिपूर्वकं सुवर्णरजतताम्रत्रपुसीसकांस्यलोहपाषाणद्यष्टषल्यमेदिनीदोष आयव्ययाद्यन्यथाभवन नानाविधहिंसादोषपरिहारद्वारा एतद् गृहक्षेत्रावच्छिन्नभूम्यधिष्ठितदेवतोपरोधजनितोपसर्ग निवृत्तिपूर्वकवास्तोः शुभतासिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरस्य प्रीत्यर्थ गृहप्रवेशनिमित्तां सग्रहकमखां वास्तुशान्तिं गृहप्रवेशाख्यं कर्म चाहं करिष्ये।

तदंगत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनवसोर्द्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं सांकल्पिकं नान्दीश्राद्धं च करिष्ये।

तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं च करिष्ये।

संकल्प कर लेनें के पाद मुख्यरूप से विविध देवताओं की प्रतिष्ठा पूजन तथा हवन की प्रक्रिया को किया जाता है। संकल्प के बाद सर्वप्रथम किये जानें वाल वास्तुपूजन या शान्ति कर्म में विघ्नविनाश हेतु गणेश और अम्बिका की प्रतिष्ठा एवं पूजन किया जाता है। गणेषाम्बिका पूजन के पूर्व पूर्वादि दश दिशाओं में दिग् रक्षण भी किया जाता है। दिग् रक्षण का मुख्य उद्‌देश्य होता है कि दसो दिशाओं से अदृश्य भूत प्रेतादि इस यज्ञ में विध्वंसक न बनें और उस स्थान को छोड कर अन्यत्र चले जाए। यह दिग्रक्षण वैदिक और लौकिक दोनों मन्त्रों से होता है। मन्त्र इस प्रकार है :

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु।।
अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूतिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।
अपकामन्तु भूतानि पिषाचाः सर्वतो दिषम् ।
सर्वेषामविरोधेन शान्तिकर्म समारभे ।।
भूतानि राक्षसा वापि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन ।
ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु वास्तुशान्तिं करोम्यहम् ।।

4.6 गणेशाम्बिकादि पूजन एवं उपचार पद्धति

जिस स्थान पर वास्तुषान्ति की जाती है या मण्डप का निर्माण किया जाता है। उस स्थान गणेषादि अनेक देवताओं के पीठ का निर्माण पर प्रतिष्ठा की जाती है। उस पूजन के क्रम में सर्वप्रथम गणेषाम्बिका की प्रतिष्ठा एवं पूजन किया जाता है। उसके बाद कलषोपरि वरूणादि देवाताओं की प्रतिष्ठा तथा पूजन किया जाता है। उसके बाद स्वस्ति पुण्याहवाचन, षोडष मातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजन, आयुष्य मन्त्र जप एवं नान्दी श्राद्ध कर्म किया जाता है। इन सभी को विधिवत् कर लेनें के बाद एकाषीति वास्तु पद स्थित देवताओं की प्रतिष्ठा तथा पूजन एवं बलि तथा हवन इत्यादि प्रमुख कर्म किए जाते है और अन्त में आरती कर विसर्जन किया जाता है।

गणेषाम्बिकादि पूजन विधि सबकी लगभग एक समान ही है। सभी देवाताओं की प्रतिष्ठा कर लेनें के बाद पंचोपचार विधि से दषोपचार विधि से या षोडषोपचार विधि या स्वसामर्थ विधि से समर्चन किया जाता है। पूजन में मुख्य रूप से षोडषोपचार विधि ही प्रयोग में लाई जाती है। षोडषोपचार विधि के अतिरिक्त संक्षिप्त पूजन हेतु पंचोपचार विधि प्रयोग में लाई जाती है। षोडषोपचार हेतु निम्नलिखित मन्त्र स्मरणीय है ।

आवाहनमासनं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
स्नानं वस्त्रोपवीतं च गन्धमाल्यानुक्रमात् ।।
धूपं दीपं च नैवेद्यं च ताम्बूलं च प्रदक्षिणा ।
पुष्पांजलि इति प्रोक्तः उपचारस्तु तु षोडष ।।

16 प्रकार के उपचार इस चक्र के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है।

1 आवाहन	5 आचमन	9 गन्ध	13 नैवेद्य
2 आसन	6 स्नान	10 पुष्प	14 ताम्बूल
3 पाद्य	7 वस्त्र	11 धूप	15 प्रदक्षिणा
4 अर्घ्य	8 यज्ञोपवीत	12 दीप	16 पुष्पांजलि

इसी षोडशोपचार पद्धति से सभी देवताओं का पूजन किया जाता है। उदाहण रूप में सर्वप्रथम देवताओं की मन्त्रों से पूंगीफल इत्यादि पर प्राण प्रतिष्ठा (आवाहन) की जाती है। इसके बाद उनको पैर धूलाने के उद्देश्य से पाद्य हेतु जल दिया जाता है। पुनः उनको जलादि से अर्घ्य दिया जाता है। ततः जल इत्यादि देकर आचमन कराया जाता है। पुनः स्नान हेतु अनेक प्रकार के पदार्थो दूध, दही, घी, मधु, षक्कर से स्नान कराया जाता है। उसके बाद वस्त्र और जनेऊ पहनाया जाता है। फिर चन्दन लगाकर फूल पहनाया जाता है। पुनः धूप और दीप दिखाकर ताम्बूल सहित भोग लगाया जाता है। पुनः प्रदक्षिणा करनें के बाद अन्त में आरती की जाती है तथा पुष्पांजलि दी जाती है। यही पद्धति सभी गणेषाम्बिकाद देवों में अपनाई जाती है।

यदि षोडषोपचार पद्धति से पूजन करना विहित न हो तो पंचोपचार पूजन भी किया जा सकता है। पंचोपचार पूजन में प्रतिष्ठा के बाद गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य से देवताओं का समर्चन किया जाता है।

देवता पूजन के क्रम में सर्वप्रथम गणेष जी का पूजन अम्बिका के सहित किया जाता है । इसके बाद वरूणादि देवप्रतिष्ठा के लिए कलष पूजन किया जाता है । पुनः स्वस्ति पुण्याहवाचन किया जाता है । स्वस्ति पुण्याहवाचन की विस्तृत विधि के लिए ग्रहषान्ति पद्धति का अवलोकन करें ।

इसके बाद गौर्यादि षोडष मातृका पूजन करना चाहिए । षोडष मातृकाओं का नाम अधोलिखित है ।

गौरी पद्मा षची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।।
हृष्टिः पुष्टिः तथा तुष्टिः आत्मनः कुलदेवता ।
गणषेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्यास्तु षोडष ।।

षोडष मातृका पूजन के बाद सप्त घृत मातृका का पूजन करना चाहिए । सप्त घृत मातृकाओं के नाम निम्नलिखित है ।

श्रीर्लक्ष्मी धृतिः मेधा स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती ।
मांगल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैता घृतमातरः ।।

सप्तघृतमातृका पूजन के बाद आयुष्य मन्त्र का जप ब्राह्मणों द्वारा किया जाता है । इसके बाद नान्दी श्राद्ध किया जाता है । यह वृद्धि श्राद्ध है इसका मृतात्मा हेतु किये गए श्राद्ध से कोई सम्बन्ध नहीं है । सभी मांगलिक कार्यो में नान्दी श्राद्ध किया जाना चाहिए किन्तु आज कल बहुत कम लोग ही इस श्राद्ध को कराते है । मांगलिक कार्यो में पितरों का पूजन अवष्य करना चाहिए । पितर पूजन न करनें से पितृगण रूष्ट हो जाते है जिससे वंष वृद्धि रूक जाती है और पितृदोष उत्पन्न होनें लगता है । नान्दी श्राद्ध कर लेनें के आचार्यादि विप्रो का वरण किया जाता है । ये सभी क्रियाए कर लेनें के मुख्य रूप बृहद् रूप में वास्तुषान्ति हेतु वास्तुपुरूष का पूजन किया जाता है ।

अभ्यास प्रष्न – 1

1. ऋण कितनें प्रकार का होता है?
क. 1 ख. 2
ग. 3 घ. 4

2. गृह में कितनें पद के वास्तुपुरूष का पूजन करना चाहिए ?
क. 64 ख. 81
ग. 100 घ. 144

3.क्या वास्तुपूजन में नान्दी श्राद्ध करना चाहिए । हां /नहीं

4. कितनी घृतमातायें होती है ?
क. 16 ख. 7

ग. 81 घ. 3

5. गृहप्रवेषादि में वास्तुपुरूष का प्रधान रूप से पूजन नहीं होता है। सत्य/असत्य

4.7 एकाशीतिपद मण्डल वास्तुपुरूष पूजन

गृहप्रवेषादि कर्म हेतु या वास्तु षान्ति हेतु एकाषीति पद वास्तु पुरूष मण्डल का पूजन किया जाता है । कहनें का भाव यह है कि जब हम गृहादि निर्माण जितनें भूखण्ड में करते हैं उतनें भूखण्ड पर निर्दिष्ट स्थानों पर कुछ देवता निवास करते है तथा वास्तुपुरूष की उन्हीं देवताओं के पूजन हेतु वास्तुमण्डल का निर्माण करते हैं और उनको स्थान देते है तथा पूजन करते है । एक प्रकार से गृहादि का जो मानचित्र होता है । उसी के अनुसार वास्तुपुरूष के मण्डल का निर्माण किया जाता है । यदि गृहादि का मानचित्र चतुरस्राकार है तो चतुरस्राकार मण्डल में तथा यदि गृहादि का मानचित्र वृत्ताकार है तो वृत्ताकार मण्डल में ही पूजन किया जाना चाहिए । वास्तुमण्डल का पद गृहादि के अनुसार बढता रहता है । चतुःषष्टि वास्तुपद मण्डल भी होता है जिसमें चौसठ 64 खाने होते हैं । एकाषीतिवास्तुपद मण्डल भी होता है जिसमें 81 कोष्ठक होते हैं । पुनः षतपदवास्तुमण्डल भी होता है जिसमें 100 खाने होते हैं । इस प्रकार अनेक मण्डल होते हैं जिसका कार्य के अनुरूप ग्रहण किया जाता है । गृहनिर्माण तथा गृहप्रवेष एव गृहवास्तुषान्ति में एकाषीति पद वास्तुपुरूष मण्डल का निर्माण कर पूजन किया जाता है । एकाषीति पद वास्तु मण्डल का स्वरूप निम्नलिखित है और किस स्थान पर किन–किन देवताओं का वास होता है, यह भी दिया गया है ।

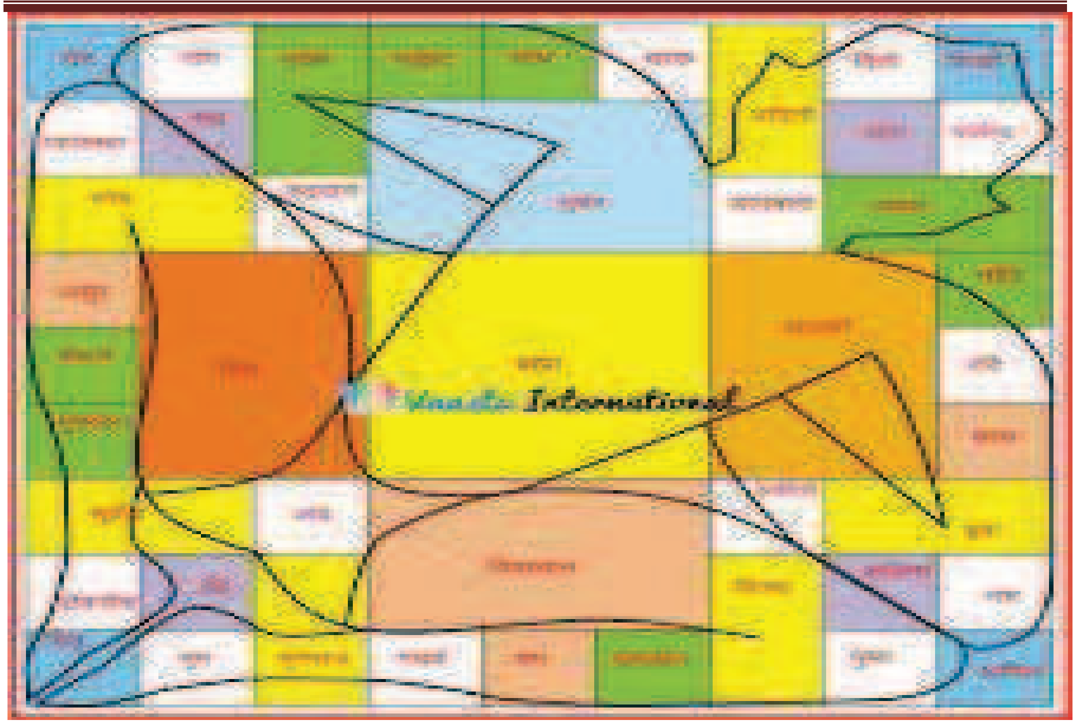
Vaastu International

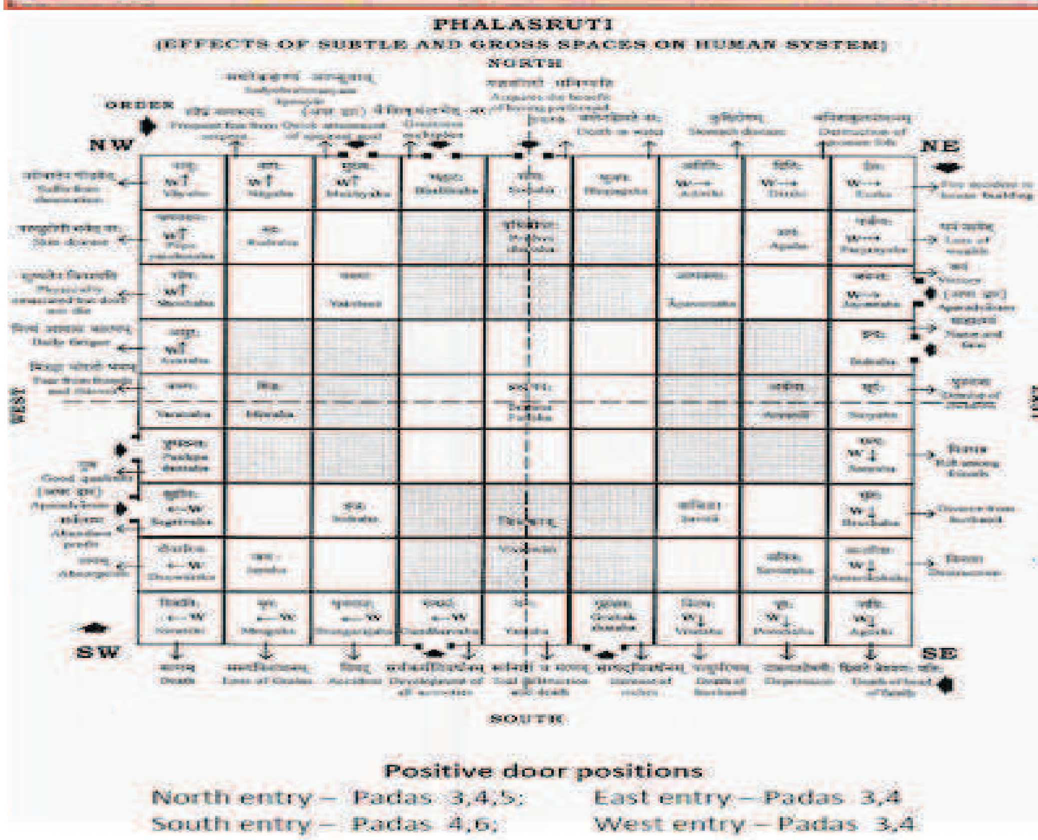
PHALASRUTI
(EFFECTS OF SUBTLE AND GROSS SPACES ON HUMAN SYSTEM)
NORTH
ORDER
NW
NE
WEST
EAST
SW
SE
SOUTH
Positive door positions
North entry – Padas 3,4,5;
East entry – Padas 3,4
South entry – Padas 4,6;
West entry – Padas 3,4

पंचांग पूजन कर लेनें के बाद मुख्य वास्तुपूजन करने हेतु पीठ का निर्माण किया जाता है। उस पीठ पर ष्वेत वस्त्र प्रसार कर पूर्वादि और उत्तरादि दश दश रेखाये करनी चाहिए। जिससे एकाशीति कोष्ठक का निर्माण होता है। इन एकाशीति कोष्ठको के उपर प्रदत्त चित्र के अनुसार विविध अक्षत पुंजो से वास्तुवेदी का निर्माण करना चाहिए। इसके पश्चात् उस वास्तु वेदी पर आभ्यन्तर के 13 देवता तथा बाह्य के 32 देवताओं की तथा सत्व, रज और तम परिधि पर 31 देवताओं की स्थापना पूंगीफल पर करनी चाहिए। मुख्य रूप से 45 ही देवता होतें है वास्तु पूजन में। कुछ देवता एकपदात्मक होते हैं कुछ देवता द्विपदात्मक होते हैं तथा कुछ देवता त्रिपदात्मक होते है। इस सभी देवताओं के कौन कौन से नाम होते हैं तथा वास्तुपद मण्डल में किस किस स्थानों पर इनका निवास होता है। इस विषय में कहा गया है कि –

गृहमध्ये हस्तमात्रं समन्तात् तण्डुलोपरी ।
एकाषीति पदं कार्यं तिलैस्तुल्यं सुषोभनम् ।।
एकद्वित्रिपदाः पंच चत्वारिंषत् सुरार्चिताः ।
द्वात्रिंषत् बाह्यतो वक्ष्यमाणाष्चान्तस्त्रयोदष ।।
तेषां स्थानानि नामानि वक्ष्यामीष्वरकोणतः ।
तत्राग्निः षम्भुकोणस्थस्वसौ चैकपदेष्वरः ।।
तस्माद्वितीयः पर्जन्यष्चासावेकपदेष्वरः ।
जयन्तेन्द्रार्कसत्याख्या भृषष्च द्विपदेष्वराः ।।
आकाषवायू परतः कमादेकपदेष्वरौ ।
एवं प्राच्यां नव ज्ञात्वा त्वैवमेवान्यदिक्षु च ।।
आद्याष्चान्त्यावेकपदौ द्विपदाः पंच मध्यगाः ।
रोगादिदित्यन्तसुराः सप्त सौम्यदिषि कमात् ।।
तत्राधःस्थष्चतुष्कोणेष्वीषानादिषु च कमात् ।
आपः सावित्रविजयरूद्राष्चैकपदेष्वराः ।।
मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्यैषानादिकोणगाः ।
आपवत्सोऽथ सविता विवुधाधिपसंज्ञकः ।।
राजयक्ष्मा च चत्वारः सुराष्चैकपदेष्वराः ।
ब्रह्मणः पूर्वतो दिक्षु त्रिपदाष्चामरा अमी ।।
अर्यमा च विवस्वान् च मित्रः पितृधरः कमाद् ।
स्वस्वस्थलेषु देवेषु स्थापितेष्वीदृषं भवेत् ।।
कोणेषु पंचमं चैव चतुर्थैकपदाः सुराः ।
प्रागादि दिक्षु द्विपदाः पंच पंच यथा कमम् ।।
ब्रह्मणः पूर्वतो दिक्षु त्रिपदाः स्युः समीपगाः ।
हिरण्यरेता पर्जन्यो जयन्तः पाकषासनः ।।
सूर्य सत्यो भृषाकाषौ वायुः पूषा च वै तथा ।।

गृहर्क्षतः पितृपतिः गन्धर्वो भृंगराजकः ।
मृगः पितृणाधीषः तथा दौवारिकाह्वयः ।।
सुग्रीवः पुष्पदन्तष्च जलाधीषो निषाचरः ।
षोषः पापष्च रोगोहिर्मुखो भल्लाट एव च ।।
सोमसर्पौ दित्यदिती द्वात्रिंषदमराः स्मृता ।
आपष्चैवापवत्सष्च जयो रन्ध्रस्तथैव च ।।
मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्थौ तत्समीपगः।
प्राच्यां ह्यन्तरिता देवाः परितो ब्रह्मणः स्मृता ।।
अर्यमा सविता चैव विवस्वान् विबुधाधिपः ।
मित्रोऽथ राजयक्ष्मा च तथा पृथ्वीधरः कमात् ।।
आपवत्सोऽष्टमः पंचचत्वारिंषत् सुरोत्तमाः । इति ।।

इन सभी 76 देवताओं का आवाहन वैदिक मन्त्रों से किया जाता है । यदि वैदिक मन्त्रों से किया जाना सम्भव न हो तो केवल नाम ग्रहणपूर्वक आवाहयामि स्थापयामि कहकर भी किया जाता है । जैसे पीठ के ईषानकोण में 1 ष्वेत पद पर षम्भु की स्थापना की जाती है । अतः **ओं भुर्भूवः स्वः षम्भवे नमः, षम्भुं आवाहयामि स्थापयामि** कहना चाहिए । इसी प्रकार आगे के सभी देवताओं की स्थापना पीठ पर निर्दिष्ट स्थानों पर करनी चाहिए । स्थापना करनें के बाद इन सभी देवताओं की पंचोपचार से पूजन करना चाहिए । तदनन्तर वास्तु वेदी पर मध्य में कलष स्थापित करना चाहिए । कलष के उपर वरूण का आवाहन कर वास्तु पुरूष की प्रतिमा स्थापित करनी चाहिए तथा षोडषोपचार से उनका पूजन किया जाना चाहिए ।

वास्तुपूजन करनें के पूर्व पीठ के ईषानादि चारों कोणों में या गृह के चारों कोणों में खदिर वृक्ष के लकडी का षंकु या लौह कील गाडना चाहिए । इस मन्त्र से पूजन भी करना चाहिए ।

विषन्तु भूतले नागाः लोकपालाष्च सर्वतः ।
अस्मिन् गृहेऽवतिष्ठन्तु आयुर्बलकराः सदा ।।

कील स्तम्भन करनें के बाद तथा वास्तुपीठ पर देवताओं की स्थापना करनें के पूर्व वास्तुवेदी पर वास्तुमण्डल का निर्माण किया जाता है । निर्माण के क्रम में सर्वप्रथम पूर्वादि तथा उत्त्तरादि दष–दष रेखायें करनीं चाहिए जिससे 81 पद वाला वास्तुमण्डल निर्मित होता है । इन सभी दष–दष रेखाओं में भी देवताओं का वास होता है उनकी भी स्थापना करनी होती है । इसलिए स्वर्णादि षलाका से रेखाओं का निर्माण करना चाहिए और देवताओं की स्थापना समन्त्रक करनी चाहिए । वे सभी रेखा देवता इस प्रकार है । पष्चिम से पूर्व की ओर रेखा के देवता उत्तरोत्तर क्रम से है ।

1 षान्ता	2 यषोवती	3 कान्ता	4 विषाला	5 प्राणवाहिनी
6 सत्या	7 सुमति	8 नन्दा	9 सुभद्रा	10 सुरथा

दक्षिण से उत्तर की ओर बढते हुए पूर्वादि क्रम से दष देवता है ।

1 हिरण्या	2सुव्रता	3लक्ष्मी	4विधृति	5 विमला
6प्रिया	7जया	8ज्वाला	9विषोका	10 इडा

सुरथा सुभद्रा नन्दा सुमति सत्या प्राणवाहिनी विषाला कान्ता यषोवती षान्ता

									इडा
									विषोका
									ज्वाला
									जया
									प्रिया
									विमला
									विधृति
									लक्ष्मी
									सुव्रता
									हिरण्या

रेखा स्थिति सभी 20 देवताओं की प्रतिष्ठा के बाद उनका पंचोपचार से पूजन किया जाता है । यह सभी पूजन के बाद वास्तुमण्डलस्थ देवताओं का पूजन किया जाता है । पूजन की पद्धति पूर्ववत् ही है ।

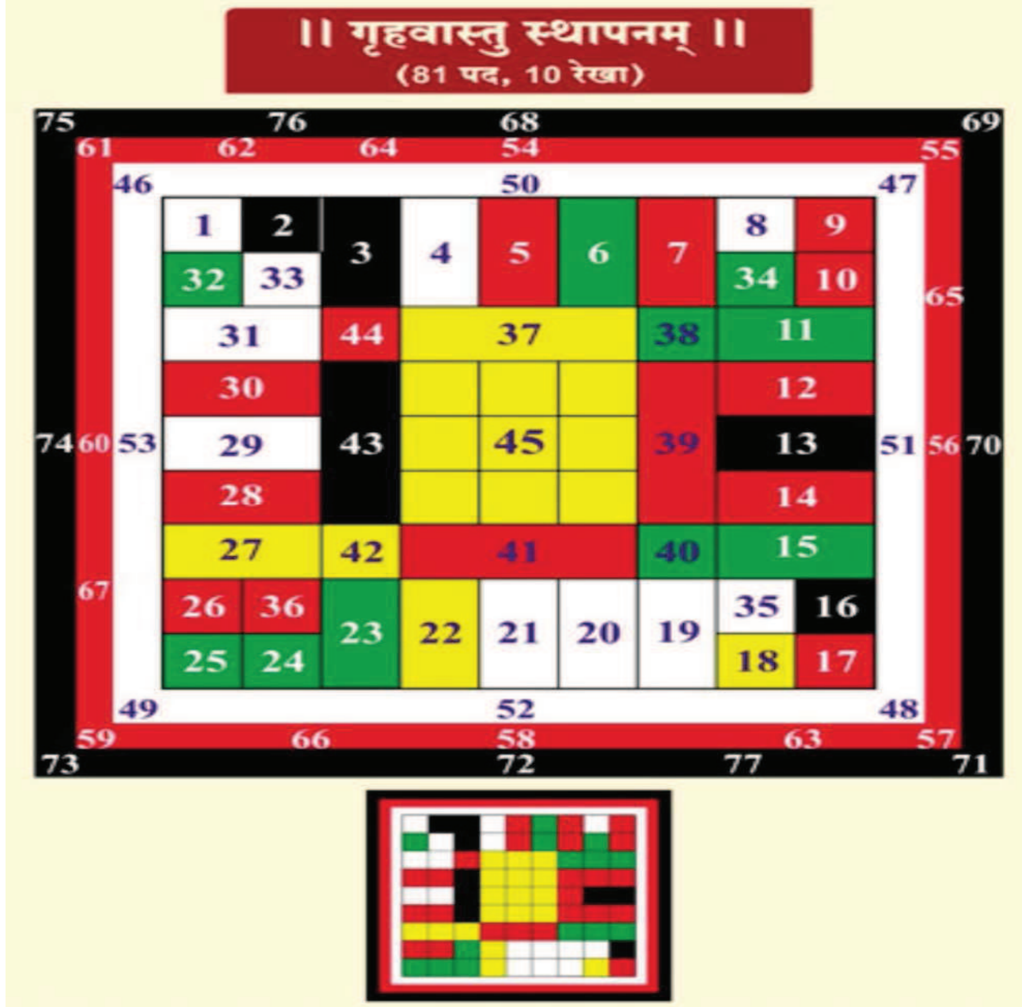

4.8 हवन,ग्रहपूजन,बलिदान,बलि और समापन

वास्तुपूजन के बाद हवन करनें हेतु वैदिक कुशकण्डिका विधि की जाती है। जिसमें अग्नि का संस्कार किया जाता है तथा हवन में प्रयुक्त सामग्री की षुद्धि की जाती है। कुण्ड या स्थण्डील में भूमि षुद्धि हेतु पांच संस्कार किया जाता है। इसके बाद ग्रहों की स्थापना की जाती है। वदी पर ग्रहों का मण्डल बनाकर उनका पूर्वोक्त प्रकार से पूजन किया जाता है। सूर्यादि नव ग्रहों के एक अधिदेवता तथा एक प्रत्यधिदेवता कहे गए है और पंच लोक पाल तथा दश दिग्पाल, ये सभी कुल मिलाकर 43 होते है। ग्रहमण्डल निर्माण में मत मतान्तर भी प्राप्त होते है। ग्रहों के स्थान, उनके नाम, उनकी आकृति, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता इत्यादि सभी विवरण अधोलिखित चक्र में स्पष्ट है।

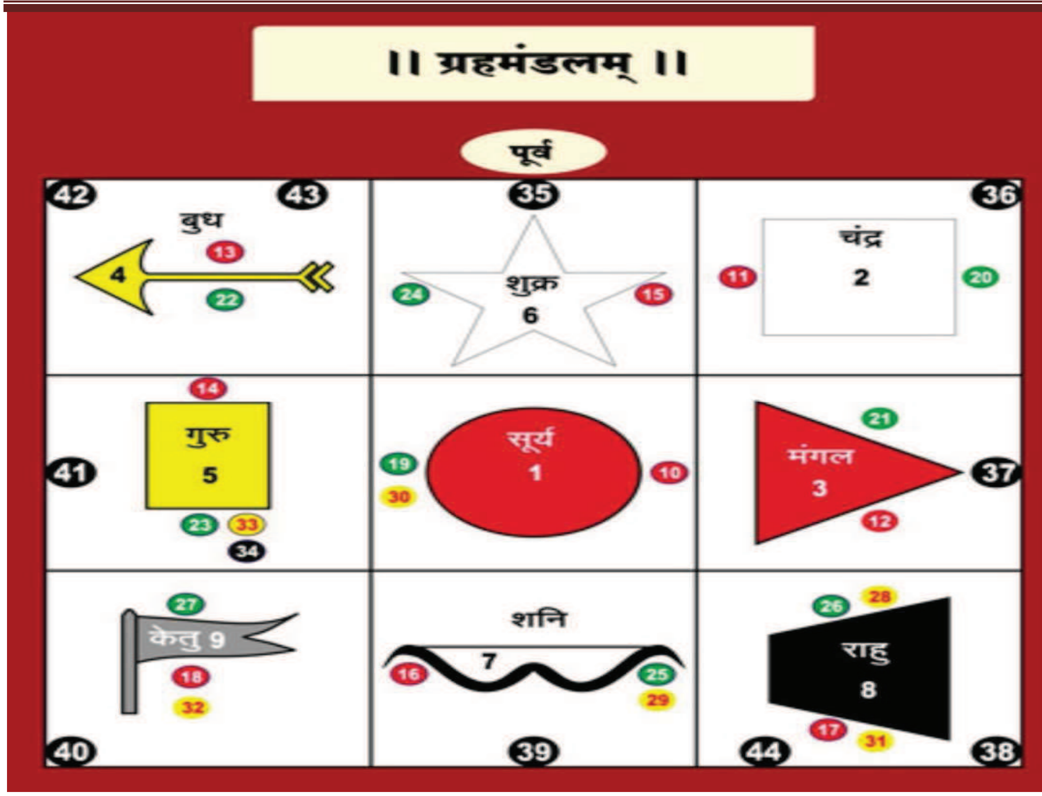

ग्रहस्थापना के बाद हवन किया जाता है । हवन में सर्वप्रथम नवाहुति प्रदान की जाती है । उसके पष्चात् गणेषादि असंख्यात रूद्र पर्यन्त सभी देवताओं के निमित्त आहुति प्रदान की जाती है । आहुति में षाकल्य निर्माण हेतु तिल, तण्डुल, यव,षर्करा , घृत इत्यादि हवनीय पदार्थो को प्रयोग में लाया जाता है । इसके बाद मुख्य रूप से वास्तु देवता के निमित्त हवन 108 संख्यक हवन अधोलिखित मन्त्र से किया जाता है ।

ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेषो अनमी वो भवानः ।

यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व षन्नो भव द्विपदे षं चतुष्पदे स्वाहा ।।

इसके बाद भी वास्तु देवता के अनेक मन्त्रों से आहुति प्रदान की जाती है । आहुति समाप्त होनें के पष्चात् अग्नि पूजन करने के बाद स्विष्टकृत होम किया जाता है अर्थात् जो हवनीय सामग्री षेष रह जाती है उसे अग्नि में समर्पित किया जाता है । पुनः घृत की नवाहुति करके समापन किया जाता है ।

हवन के बाद सभी देवताओं के लिए बलिदान दिया जाता है । बलिदान का अर्थ होता है उनकी प्रिय वस्तुओं को समर्पित करना । सर्वप्रथम इन्द्रादि जो दष दिक्पाल है उनके लिए दीप, दधि, उडद और अक्षत तथा जल को समर्पित किया जाता है । सभी के लिए पृथक् पृथक् पूर्वादि दषो दिषाओं में समन्त्रक बलिदान दिया जाता है और प्रार्थना की जाती है कि हे परिवार सहित , आयुध युक्त, और षक्ति युक्त दष दिक्पालों मेरें परिवार के लिए कल्याण कारी हों और षान्तिकारक बनें । प्रार्थना इस प्रकार है –

भो भो इन्द्रादि दषदिक्पालाः सांगाः सपरिवाराः सायुधाः सषक्तिकाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः षान्तिकर्तारः पुष्टिकर्तारः तुष्टिकर्तारः वरदा भवत ।।

इसके बाद नवग्रहों के लिए भी बलिदान दिया जाता है और उनसे कल्याण की कामना की जाती है । इसके बाद क्षेत्रपाल के लिए भी बलिदान दिया जाता है । उसकी विधि किंचित् अलग है । एक बांस की टोकरी में कुषा बिछाकर उसमें दधि उडद चावल और जल रखकर पताका लगाकर चौमुखा दीपक जलाकर सिन्दूरादि से सुषोभित करते हुए अधोलिखित मन्त्र से प्रार्थना करनी चाहिए ।

नमो वै क्षेत्रपालस्त्वं भूतप्रेतगणैः सह ।
पूजा बलिं गृहाणेमं सौम्यो भवतु सर्वदा ।।
पुत्रान् देहि धनं देहि देहि मे गृहजं सुखं ।
आयुरारोग्यं मे देहि निर्विघ्नं कुरू सर्वदा ।।

इसके बाद और भी बहुत सी औपचारिक कर्तव्यता की जाती है । जिसका विस्तृत विवरण ग्रहषान्ति इत्यादि पद्धतिओं में दिया गया है ।

पुनः पूर्णाहुति प्रदान की जाती है । पूर्णाहुति ही यज्ञ की समाप्ति का द्योतक है । पूर्णाहुति के बाद प्रधान वास्तु मण्डलस्थ सभी देवताओं को भी सुवर्ण तथा पायस के द्वारा बलि समर्पित किया जाता है । इसके पष्चात् आरती की जाती है तथा विप्रादि को यथा षक्ति द्रव्यादि देकर उनका आषीर्वाद लिया जाता है और समस्त आवाहित देवताओं का विसर्जन किया जाता है । इस प्रकार वास्तु पूजा समाप्त होती है । इसमें और भी बहुत सारी विधियां है किन्तु वह बहुत जटिल और श्रमसाध्य है । विस्तृत सभी विधियों को जानने के लिए किसी योग्य वैदिक ब्राह्मण की षरण में जाना चाहिए क्योकि ये सभी प्रायोगिक पक्ष है केवल पढ लेनें से सभी क्रियाए नहीं ज्ञात हो सकती है । इसलिए वास्तु पूजन विधि तथा वास्तुषान्ति पद्धति को वैदिक योग्य ब्राह्मणों से ही कराना चाहिए । जिससे गृहजन्य सुख और ऐष्वर्य की प्राप्ति होती है ।

अभ्यास प्रष्न – 2

6. वास्तु वेदी निर्माण के लिए कितनी पूर्वापर और याम्योत्तर रेखाये करनी चाहिए?

क. 8 ख. 9
ग. 10 घ. 11

7. गृह में कितनें पद के वास्तुपुरूष का पूजन करना चाहिए ?

क. 64 ख. 81
ग. 100 घ. 144

8.क्या वास्तुपूजन में बलिदान करना चाहिए । हां /नहीं

9. वास्तु पूजन में आभ्यन्तर के कितनें देवता होते हैं ?

क. 13 ख. 32

ग. 43 घ. 45

10. वास्तु पूजन में बाह्य के कितनें देवता होते हैं ?

क. 13 ख. 32

ग. 43 घ. 45

4.9 सारांश

गृहनिर्माण आरम्भ में तथा गृहारम्भादि में गृह के अधिष्ठित देवता वास्तुपुरूष का पूजन किया जाता है। वास्तुपूजन करनें से गृह में सुख और समृद्धि सदा बनी रहती है तथा घर नित्य उन्नति होती रहती है। यदि गृहारम्भादि में वास्तुपूजन न किया जाए तो गृह में अनेक प्रकार के दु:खों का सामना करना पडता है तथा गृह में सर्वदा अषान्ति रहती है। वैदिक पद्धति से विधिवत् वास्तुपूजन करना आज के समय में दुर्लभ सा प्रतीत होता है तथापि कुछ पारम्परिक आचार्य वैदिक विधियों से समस्त आयोजनों को करवाते हैं। वस्तुतः इस पाठ में बहुत सी वैदिक विधियों का समावेश नहीं किया गया है क्योकि यह बहुत बडा और नीरस पाठ हो जाता तथापि जो मुख्य पद्धतियां है वास्तुपूजन की, उन सभी को लगभग बता दिया गया है। वैदिक पद्धति से यदि आपको जानना है तो किसी सुयोग्य ब्राह्मण के पास जाकर ही आपको ज्ञान प्राप्त होता होगा। क्योकि यह श्रुति है अर्थात् श्रवण करनें से आनें वाली विद्या है। कर्मकाण्ड तो पूर्ण रूप से प्रायोगिक पक्ष पर आधारित विधा है अतः केवल अध्ययन कर लेनें से या पढ लेनें से वह विषय ठीक से समझ में नहीं आ सकेगा। अतः वास्तु शान्ति के लिए या फिर वास्तुपूजन करनें के लिए सुयोग्य विप्र की महती आवश्यकता होती है। यदि वैदिक पद्धति से वास्तुपूजन किया जाए तो आजीवन पर्यन्त उस गृह में सुख और समृद्धि बनी रहती है तथा गृह से सभी सदस्यों को उन्नयन होता है। गृहनिर्माण होनें के बाद तथा गृहप्रवेष होनें के बाद भी समय समय पर वास्तु शान्ति करानी चाहिए। इस कारण से ही प्रार्थना की जाती है वास्तुपुरूष की –

पूजितोऽसि मया वास्तो होमाद्यैरर्चनैः शुभैः।
प्रसीद पाहि विश्वेश देहि में गृहजं सुखम्।।
वास्तुदेव नमस्तेऽस्तु भूषय्याभिरत प्रभो।
मद्गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरू सर्वदा।।
प्रार्थयामीत्यहं देव शालाया अधिपस्तु यः।
प्रायश्चित्तप्रसंगेन गृहार्थे यन्मया कृतम्।।

4.10 पारिभाषिक शब्दावली

दिग्रक्षण – पूजन हेतु दिशाओं का अभिमन्त्रित किया जाता है, जिससे भूतप्रेतादि उस यज्ञ का विध्वंस न कर सकें।

संकल्प – पूजन हेतु किये जानें वाले कार्यो के प्रति मानसिक , वाचिक और शारीरिक रूप से तत्पर होना।

उपचार – पूजन करनें हेतु प्रयुक्त सामग्री समर्पण विधि को उपचार कहते है।

उपवीत – सूत्र का बना हुआ यज्ञोपवीत जिसे विप्रादि वर्ण धारण करते हैं उसका प्रयोग पूजन में किया जाता है।

नैवेद्य – देवताओं को समर्पित करनें के लिए जो खाद्य सामग्री फल इत्यादि अर्पण किया जाता है उसे नैवेद्य कहते हैं।

घृतमाता – पूजन में सात माताएं घृत की बनाई जाती है। अर्थात् सप्त बिन्दुओं पर घृत की धाराएं गिराते हुए उन्हें प्रतिष्ठित किया जाता है। इसी को वसोर्धारा भी कहते हैं।

पंचांग पूजन – प्रत्येक वैदिक यज्ञ यागादि में नियमतः पंजागपूजन करना अनिवार्य होता है। पंचांगपूजन में स्वस्तिपुण्याहवान, मातृकापूजन, वसोर्धारा पूजन, आयुष्यमन्त्र जप, नान्दी श्राद्ध आते हैं। इन्हीं का पूजन करना पंचांगपूजन कहलाता है।

बलिदान – देवताओं को जो प्रिय वस्तु को समर्पित करना ही बलिदान है।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. ख
3. हां
4. ख
5. असत्य
6. ग
7. ख
8. हां
9. क
10. ख

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3. **ग्रन्थ नाम** – मुहूर्त्तचिन्तामणि
   ग्रन्थ कर्ता – आचार्य राम दैवज्ञ
   प्रसिद्ध टीका – पीयूषधारा
   टीकाकार – श्री गोविन्द दैवज्ञ
   व्याख्याकार – श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र
   प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पुर्नमुद्रित संस्करण 2009

4. **ग्रन्थ नाम** – बृहद् वास्तुमाला (संग्रह ग्रन्थ)

संग्रह कर्ता – श्री रामनिहोर द्विवेदी
सम्पादक – डा ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
प्रकाशक – चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण 2018

4.13 सहायक पाठ्यसामग्री

4. **ग्रन्थ नाम** – ग्रहशान्ति पद्धति
सम्पादक – शिवदत्त मिश्र शास्त्री
प्रकाशक – श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार, वाराणसी,

5. **ग्रन्थ नाम** – वास्तु शान्ति प्रयोग
सम्पादक – श्री अग्नि नारायण मिश्र
प्रकाशक – मास्टर खेलाडी लाल ग्रैण्ड सन्स, वाराणसी,

6. **ग्रन्थ नाम** – पौरोहित्य कर्म प्रशिक्षक
सम्पादक – श्री सच्चिदानन्द पाठक
प्रकाशन – उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान लखनऊ

4.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंजांग पूजन पर संक्षिप्त निबन्ध लिखें।
2. षोडशोपचार पद्धति क्या है? विवरण दें।
3. वास्तु शान्ति की विधि क्या है? प्रकाश डालें।